।। पूर्ण परमात्मने नमः ।।

श्रीमद्भगवद्गीता

गहरी नजर गीता में

--: अनुवाद कर्ता :--

संत रामपाल दास महाराज

कबीर पंथी

कुल लागत : 100/- रू.

धर्मार्थ मूल्य : मात्र 50/- रू.

कृप्या अवश्य सुनिये संत रामपाल जी महाराज के अमृत वचन
'साधना चैनल' पर प्रतिदिन सांय 8 बजे

संत रामपाल दास महाराज

(1) रोहतक झज्जर रोड़, करौंथा, जि. रोहतक (हरि०) भारत
(2) सतलोक आश्रम, दौलतपुर रोड़, बरवाला, जि. हिसार (हरि०)भारत।

☎ +91-9992600801, +91-9992600802, +91-9992600803
+91-9812166044, +91-9812151088,+91- 9812026821,+91- 9812142324

e-mail : jagatgururampalji@yahoo.com
visit us at - www.jagatgururampalji.org
Live Satsang is available on www.jagatgururampalji.org

विषयानुक्रमणिका

भूमिका

1. भूमिका ---------- 1
2. पवित्र गीता जी का ज्ञान किसने कहा ? ---------- 2
3. विराट रूप क्या होता है ? ---------- 4
4. संक्षिप्त महाभारत का लेख ----------6
5. काल की परिभाषा ----------9
6. अन अधिकारी से यज्ञ व पाठ करवाना व्यर्थ है ----------12

सृष्टी रचना

1 (असंख्य ब्रह्मण्डों का लघु चित्र)----------15
2 कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने अपने द्वारा रची सृष्टी का ज्ञान स्वयं ही बताया है----------16
3 आत्माऐं काल के जाल में कैसे फंसी ?----------17
4 (एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र)----------19
5 (ब्रह्म लोक का लघु चित्र)----------20
6 श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति ----------22
7 तीनों गुण क्या हैं ? प्रमाण सहित----------23
8 ब्रह्म काल की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा----------24
9 ब्रह्मा का अपने पिता(काल) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न----------26
10 माता दुर्गा द्वारा ब्रह्मा को शाप देना----------27
11 विष्णु का अपने पिता ब्रह्म की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आर्शीवाद पाना----------28
12 (एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र)----------29
13 ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र---30
14 परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों की स्थापना----------33
15 वेदों में सृष्टी रचना का प्रमाण----------35
16 पवित्र अथर्ववेद में सृष्टी रचना का प्रमाण----------35
17 पवित्र ऋग्वेद में सृष्टी रचना का प्रमाण----------39

18 पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण में सृष्टी रचना का प्रमाण (दुर्गा अर्थात् प्रकृति तथा सदा शिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)----------43
19 श्री मद्देवीभागवत से लेख----------45
20 पवित्र शिव महापुराण में सृष्टी रचना का प्रमाण (दुर्गा अर्थात् प्रकृति तथा सदा शिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)----------48
21 श्री विष्णु पुराण में सृष्टी रचना का प्रमाण----------54
22 श्री विष्णु पुराण का सारांश----------63
23 पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी में सृष्टी रचना का प्रमाण (दुर्गा तथा ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)----------66
24 उल्टे लटके हुए संसार रूपी वृक्ष का लघु चित्र----------67
25 सर्व प्रभुओं की आयु----------70
26 पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुर्आन शरीफ में सृष्टी रचना का प्रमाण---73
27 पूज्य कबीर परमेश्वर(कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टी रचना--74
28 आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टी रचना का प्रमाण----------77
29 गरीबदास जी महाराज की वाणी----------78
30 (काल लोक में जन्म-मरण रूपी हरहट (चक्र) का चित्र) ----------80
31 आदरणीय नानक साहेब जी की वाणी में सृष्टी रचना का संकेत---83
32 राधा स्वामी व धन-धन सतगुरु सच्चा सौदा पन्थों के सन्तों तथा अन्य संतों द्वारा सृष्टी रचना की दन्त कथा----------86

पहला अध्याय

1 सारांश ----------89

प्रथम अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------90

दूसरा अध्याय

1. सारांश ----------101
2. ब्रह्म साधना से जन्म-मरण समाप्त नहीं होता ----------101
3. नकली संत की कथा ----------104

4. पूर्ण परमात्मा की साधना का वर्णन ----------105
5. शब्द - 'सतलोक में चल मेरी सुरता' ----------108
6. वेदों में वर्णित साधना विधि से विकार नहीं मरते ----------110
7. ब्रह्मा से मन व काम(सैक्स) वश नहीं हुआ ----------112

द्वितीय अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------113

तीसरा अध्याय

1. सारांश ----------134
2. शास्त्र विधि रहित पूजा अर्थात् मनमाना आचरण का विवरण--------134
3. यज्ञों का लाभ केवल सांसारिक सुविधाएँ, मुक्ति नहीं ----------135
4. जो धर्म नहीं करते वे चोर व पापी प्राणी हैं ----------136
5. ब्रह्म(काल) की उत्पत्ति पूर्ण परमात्मा से ----------136
6. मनोकामना पूर्ति के बिना किया हुआ धर्म पूर्ण लाभदायक----------138
7. कथनी और करनी में अंतर ----------138
8. विद्वानों को शास्त्रानुसार साधना करनी चाहिए ----------139
9. दूसरों की दिखावटी घटिया साधना से अपनी शास्त्र - विधि अनुसार साधना अच्छी ----------141
10. एक दुःखी परिवार की कहानी ----------141
11. मान बड़ाई जान की दुश्मन ----------142

-: नकली नामों से मुक्ति नहीं :-

1. सतनाम के प्रमाण के लिए कबीर पंथी शब्दावली से सहाभार------143
2. धर्मदास को सतनाम कबीर साहेब ने दिया ----------144
3. सतनाम का गरीबदास जी महाराज की वाणी में प्रमाण---------144
4. श्री नानक साहेब की वाणी में सतनाम का प्रमाण----------145
5. शब्द : ''संतों शब्दै शब्द बखाना'' ----------151
6. सारशब्द बिना सतनाम भी व्यर्थ ----------152
7. नामदेव जी की वाणी में सतनाम का प्रमाण ----------153
8. गलत नाम मूर्खो की उपासना ----------153
9. काल के जाल का वर्णन ----------154
10. शब्द : ''कर नैनों दीदार महल में प्यारा है'' ----------154

11. नकली गुरु को त्याग देना पाप नहीं ----------159
12. सतनाम का विशेष प्रमाण ----------160
13. अवधू अविगत से चल आए----------161
14. शब्द : ''ऐसा राम कबीर ने जाना'' ----------169

-: सतमार्ग दर्शन :-

1. रमैणी : ''मैं तोहे पूँछू पंडित ज्ञानी'' ----------173
2. रमैणी : ''वेद कतेब झूठा नहीं होई'' ----------173
3. (कबीर साहेब द्वारा अंध विश्वास का निवार्ण करना चित्र)---------174
4. पितरों को जल देना व्यर्थ ----------175
5. भगवान शंकर के भी मन व काम(सैक्स) वश नहीं हुआ----------175

तृतीय अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------181

चौथा अध्याय

1. सारांश ----------195
2. ब्रह्म साधना से जन्म-मरण समाप्त नहीं होता ----------195
3. पूर्ण ज्ञानी काल जाल में नहीं रहते ----------196
4. कर्मो के बन्धन से भगवान भी नहीं बचे ----------196
5. वेदों व गीता में वर्णित पूजा विधि से कर्म व पाप नहीं कटते-----197
6. नाम के साथ-साथ यज्ञ भी आवश्यक----------198
7. तत्वदर्शी संतों से नाम लेकर पूर्ण मुक्ति संभव ----------198

चौथे अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------200

पांचवां अध्याय

1. सारांश ----------213
2. कर्म सन्यासी से कर्म योगी साधक उत्तम है ----------213
3. श्रंगी ऋषि जैसे कर्म सन्यासी भी कर्म योगी बने ----------214
4. वेदों में वर्णित साधना से विकार रहित नहीं होते ----------216
5. नारद जी की कहानी ----------216

6. कर्मसन्यासी को अभिमान हो जाता है ----------218
7. सुखदेव ऋषि की कथा ----------219
8. आदरणीय गरीबदास साहेब जी की वाणी ----------222
9. राजा अम्ब्रीष कर्म योगी तथा दुर्वासा ऋषि कर्म सन्यासी थे ----------224
10. प्राणी अपने स्वभाव वश चलते हैं ----------226

-: पंडित की परिभाषा :-

1. साहेब कबीर द्वारा भैंसे से वेद मन्त्र बुलवाना ----------227
2. (चित्र-साहेब कबीर द्वारा भैंसे से वेद मन्त्र बुलवाना)----------228
3. वार कौन तथा पार कौन? ----------231
4. शब्द : 'कोई है रे परले पार का' ----------231
5. अजपा जाप से विकार मरते हैं ----------233
6. दयालु परमात्मा कौन? ----------233

पाँचवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------235

छठवां अध्याय

1. सारांश ----------248
2. हठयोग करके ध्यान करना व्यर्थ है ----------248
3. योगी कौन? ----------250
4. पूर्ण परमात्मा के लाभ का आनन्द प्राप्त करने की विधि व व्रत निषेध की जानकारी ----------251
5. मन का रोकना वायु रोकने के समान ----------251
6. साधक का साधना बिगड़ने पर क्या होगा? ----------252
7. पूर्ण योगी कौन? ----------256

छठे अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------258

सातवां अध्याय

1. सारांश ----------273
2. इस ज्ञान को जानने के बाद कुछ जानना शेष नहीं ----------273

3. तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित ----------274
4. ब्रह्मा, विष्णु, शिव(त्रिगुण माया) जीव को मुक्त नहीं होने देते----275
5. अन्य देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव)-
की पूजा बुद्धिहीन ही करते हैं ----------280
6. ज्योति निरंजन(काल) कभी स्थूल शरीर आकार में सर्व के
समक्ष नहीं आता ----------281
7. काल के जाल से कौन छूटते हैं? ----------283

सातवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------285

आठवां अध्याय

1. सारांश ----------298
2. वह पूर्ण ब्रह्म कौन है?----------298
3. काल का उपासक काल तथा पूर्णब्रह्म का उपासक पूर्ण
ब्रह्म को ही प्राप्त होता है----------299
4. ब्रह्म(काल) प्राप्त साधक का सुख क्षणिक है----------300
5. महाप्रलय में ब्रह्मण्ड में बना ब्रह्मलोक भी नष्ट हो जाता है----------300
6. प्रलय की जानकारी----------301
7. सर्व प्रभुओं की आयु----------306
8. परब्रह्म (अक्षर पुरूष) से भी दूसरा सनातन अव्यक्त
सतपुरुष (पूर्णब्रह्म) है----------307
9. तीन प्रभुओं का प्रमाण ----------307
10. ब्रह्म(काल) का परम धाम सतलोक ----------308
11. पूर्ण परमात्मा को अनन्य भक्ति से ही प्राप्त किया जा -
सकता है----------308

आठवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------311
1. सर्व प्रभुओं की आयु ----------318

नौवां अध्याय

1. सारांश ----------325
2. पूर्ण परमात्मा ही सर्व जीवों का आधार ----------325

3. ब्रह्म(काल) उपासक का जन्म-मरण निश्चित है ----------325
4. प्रकृति व ब्रह्म(काल) से प्राणियों की उत्पत्ति ----------325
5. ब्रह्म(काल) कभी स्थूल शरीर में आकार में नहीं आता----------325
6. ब्रह्म(काल) के उपासक उसी का आहार ----------326
7. पवित्र वेदों अनुसार साधना का परिणाम केवल स्वर्ग - महास्वर्ग, मुक्ति नहीं ----------327
8. वेदों के अनुसार साधना न करने वाले पूर्ण मुक्त नहीं ----------328
9. श्राद्ध निकालने(पितर पूजने) वाले पितर बनेंगे, मुक्ति नहीं -----328
10. अति दुराचारी भी भक्ति करने वाला महात्मा के समान----------332

नौवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------334

दशवां अध्याय

1. सारांश ----------346
2. ब्रह्म(काल) की उत्पत्ति का संकेत ----------346
3. पूर्ण ज्ञानी पूर्ण परमात्मा की ही पूजा करते हैं, ब्रह्म(काल) की नहीं ----------346
4. ब्रह्म(काल) द्वारा ही शास्त्र(वेद) उत्पन्न ----------347
5. ब्रह्म(काल) के उपासक उसी के आधार ----------347

दशवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------349

ग्यारहवां अध्याय

1. सारांश ----------360
2. अर्जुन द्वारा भगवान काल की वास्तविकता जानने की प्रार्थना----360
3. अर्जुन को भगवान (काल) द्वारा दिव्य दृष्टि प्रदान करना तथा अपना वास्तविक काल रूप दिखाना----------360
4. संजय द्वारा काल रूप का विवरण ----------360
5. अर्जुन द्वारा काल रूप का आँखों देखा हाल ----------360
6. अर्जुन पूछता है कि वास्तव में आप कौन हो ? ----------361
7. भगवान अपने आप को स्वयं काल बताता है ----------361
8. ब्रह्म(काल) भगवान की प्राप्ति अति असंभव ----------362

9. चतुर्भुज महा विष्णु रूप में भी दर्शन वेदों व तप, -
दान, यज्ञ आदि से नहीं, केवल अनन्य भक्ति से ----------362

ग्यारहवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक----------366

बारहवां अध्याय

1. सारांश ----------383
2. सत्यनाम व सारनाम बिना निराकार व साकार रूप में
ब्रह्म(काल) उपासक काल के ही जाल में रहते हैं ----------383

बारहवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ----------385

तेरहवां अध्याय

-: पूर्ण परमात्मा की व्याख्या :-

1. सारांश ----------391
2. क्षेत्र व क्षेत्रज्ञ की परिभाषा ----------391
3. आन उपासना को व्यभिचारिणी भक्ति बताना ----------391
4. पूर्ण परमात्मा ही जानने व भक्ति योग्य है----------391
5. पूर्ण परमात्मा तथा प्रकृति दोनों अनादि ----------393
6. मनमुखी साधना व्यर्थ ----------394
7. भक्ति के लिए अक्षर ज्ञान आवश्यक नहीं ----------395
8. पूर्ण ज्ञानी वही है जो पूर्ण परमात्मा को अविनाशी -
मानता है ----------395
9. शब्द : ''मन तु चल रे सुख के सागर''----------396
10. देवी-देवताओं का राजा इन्द्र भी गधा बनता है ----------397
11. क्षेत्र(शरीर) क्षेत्रज्ञ(ब्रह्म) तथा क्षेत्री(परमात्मा आत्मा सहित)-
को जान कर भक्त काल जाल से मुक्त हो जाता है ----------398

तेरहवें अध्याय का अनुवाद सहित श्लोक ----------400

चौदहवां अध्याय

1. सारांश ----------410
2. ब्रह्म(काल) द्वारा अति उत्तम ज्ञान की जानकारी ----------410

3. परमात्मा के क्या गुण होते हैं? ----------410
4. भगवान कृष्ण परमात्मा परंतु पूर्ण परमात्मा नहीं----------410

-: साहेब कबीर पूर्ण परमात्मा :-

1. मृतक गाय को जीवित करना ----------410
2. मृतक लड़के कमाल को जीवित करना ----------412
3. चित्र - (मृतक लड़के कमाल को जीवित करना)----------413
4. चित्र - (मृतक लड़की कमाली को जीवित करना)----------414
5. मृतक लड़की कमाली को जीवित करना ----------415
6. लड़के सेऊ को जीवित करना ----------415
7. ब्रह्म(काल) व प्रकृति(दुर्गा) से सर्व प्राणी तथा ब्रह्मा, -
विष्णु, शिव की उत्पत्ति ----------418
8. तीनों - ब्रह्मा(रजगुण), विष्णु(सतगुण), शिव(तमगुण) -
आत्मा को शरीर में बाँधते हैं अर्थात् मुक्त नहीं होने देते -------418
9. ब्रह्मा की उपासना से प्राप्ति ----------418
10. शिव की उपासना से प्राप्ति ----------419
11. विष्णु की उपासना से प्राप्ति ----------419
12. ब्रह्मा, विष्णु, शिव कर्त्ता नहीं ----------420
13. ब्रह्मा, विष्णु, शिव की साधना त्याग कर पूर्ण परमात्मा-
की पूजा करनी चाहिए ----------420
14. तीनों गुणों से अतीत अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, शिव की -
भक्ति से ऊपर उठे भक्त के लक्षण ----------420
15. ब्रह्म(काल) की उपासना का लाभ देवी-देवताओं व -
ब्रह्मा, विष्णु, शिव की भक्ति त्याग कर होता है ----------420
16. पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति में ब्रह्म(काल) सहयोगी ----------421

चौहदवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक----------423

पंद्रहवां अध्याय

1. सारांश ----------431
2. सृष्टी रूपी वृक्ष का वर्णन ----------431
3. पूर्ण परमात्मा की जानकारी ----------432

4. ब्रह्म(काल) नाशवान है ----------433
5. वास्तव में अविनाशी पूर्ण परमात्मा ----------434
6. काल का टेढा जाल ----------436
7. (उल्टे लटके हुए सृष्टी रूपी वृक्ष का चित्र)----------438

पन्द्रहवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक ---------439

सोलहवां अध्याय

1. सारांश ----------446
2. सुर व असुर स्वभाव के व्यक्तियों का वर्णन ----------446
3. (शास्त्रानुकूल साधना अर्थात् सीधा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा का चित्र)----------448
4. (शास्त्रविरूद्ध साधना अर्थात् उल्टा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा का चित्र)----------449
5. विकारी प्राणी भक्ति नहीं कर सकते ----------450
6. शास्त्र विरूद्ध पूजा व्यर्थ (नरक दायक)----------450

सोलहवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक --------451

सतरहवां अध्याय

1. सारांश ----------458
2. शास्त्र विधि को त्याग कर साधना करने वाले - भगवानों को दुःखदाई तथा नरक अधिकारी ----------458
3. शरीर (पिण्ड) में कमलों (चक्रों) का चित्र----------459
4. सर्व प्राणी शास्त्र विधि रहित भक्ति भी स्वभाव अनुसार ही करते हैं ----------460
5. ऊँ-तत्त-सत्त का विस्तृत वर्णन ----------461
6. श्रद्धा भाव बिना भक्ति व्यर्थ ----------463
7. भगवान कृष्ण का विदुर के घर अलुणा साक खाना ----------463
8. पाण्डवों की यज्ञ में सुपच सुदर्शन द्वारा शंख बजाना ----------464
9. सतनाम व सारनाम बिना सर्व साधना व्यर्थ ----------472
10. कुम्भ के मेले में प्रथम स्नान करने पर कत्ले आम ----------474

सतरहवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक -------476

अठाहरवां अध्याय

1. सारांश ----------487
2. नम्रता के बिना भक्ति व्यर्थ ----------487
3. पूर्ण गुरु से नाम लेने के बाद अनजाने में हुए पापों - का दोष नहीं लगता ----------487
4. गुण व स्वभाव वश कर्मों का विवरण ----------488
5. पूर्ण परमात्मा की शरण में जाने का प्रमाण ----------489
6. दूसरों की घटिया साधना की दिखावटी चकाचौंध को - देखकर अपनी सही साधना को नहीं त्यागना चाहिए----------489
7. त्यागे न जाने वाले कर्म ----------489
8. पूर्ण ज्ञान होने पर मेरी(ब्रह्म की) औकात(शक्ति) से परीचित साधक मतानुसार साधना करके पूर्ण मुक्त हो जाते हैं ----------490
9. ब्रह्म(काल) भगवान द्वारा पूर्ण परमात्मा का वास्तविक - ज्ञान अर्जुन को बताना ----------491
10. ब्रह्म(काल) का भी उपास्य देव पूर्ण ब्रह्म ----------491
11. ब्रह्म(काल) द्वारा अर्जुन को एक पूर्णब्रह्म की शरण में - जाने को कहना ----------492

-: विशेष वास्तविकता :-

1. विशेष वास्तविकता ----------493
2. अर्जुन भगवान ब्रह्म(काल) की शरण में रहा फिर भी - पाप मुक्त नहीं हुआ ----------493
3. साहेब कबीर की गोरख नाथ से ज्ञान गोष्ठी----------494
4. चित्र - (साहेब कबीर व गोरख नाथ की ज्ञान गोष्ठी)----------495
5. साहेब कबीर द्वारा श्री नानक जी को सतज्ञान समझाना ----------500
6. साहेब कबीर ने श्री रामानन्द जी को सतज्ञान कराया ----------502
7. गीता का ज्ञान सुनने व सुनाने वाले भी काल के ही जाल में--502

अठारहवें अध्याय के अनुवाद सहित श्लोक------504

आँखों वाले अंधे

-: शंका समाधान :-

1. मुझ दास (संत रामपाल दास) का तत्व भेद प्राप्ति----------527
2. संत धर्मदास जी के वंशों के विषय में----------529
3. चौदहवीं महंत गद्दी का परिचय ----------530
4. पवित्र कबीर सागर में अद्भभुत रहस्य----------533
5. प्रभु प्रेमी पाठकों की शंकाओं का समाधान-रामपाल दास----------543
6. तीनों गुण क्या हैं ? प्रमाण सहित ----------549
7. तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी)अर्थात् त्रिगुण माया की पूजा व्यर्थ----------550

जगत् गुरु तत्वदर्शी संत रामपाल जी महाराज

Road map to reach Satlok Ashram Karontha

Satlok Ashram Karontha

Note: Village Karontha is 1.5 kms. away and village Dighal is 3 kms. away from Satlok Ashram

संत रामपाल जी साहेब का संक्षिप्त जीवन परिचय

सतगुरु रामपाल जी महाराज का जन्म 8 सितम्बर सन् 1951 में - गाँव-धनाना, तहसील गोहाना, जिला सोनीपत(हरियाणा) के एक किसान परिवार में हुआ। इनके पिता जी का नाम भक्त नन्दराम व माता जी का नाम भक्तमति ईन्द्रादेवी है। महाराज जी जूनियर ईन्जिनियरिंग का डिप्लोमा प्राप्त करने के बाद हरियाणा सरकार के सिंचाई विभाग में जे.ई. के पद पर नियुक्त हो गए। आप जी बचपन से ही धार्मिक प्रवृत्ति के हैं। 25 वर्षो तक लगातार हनुमान जी की साधना की। प्रतिदिन सात बार हनुमान चालीसा का पाठ किया और लगातार अठारह वर्षो तक राजस्थान में चुरू जिले के गांव सालाहसर में हनुमान जी के प्रसिद्ध मन्दिर में पूजा के लिए गए। इसके साथ-साथ श्री कृष्ण जी को भी अपना ईष्ट मानते थे। इनसे बड़ा किसी को नहीं मानते थे तथा घरेलू उपासना खाटू श्याम जी की भी करते थे। घण्टों ध्यान लगाते थे। इतनी उपासना करने के बाद भी न तो परमात्मा का साक्षात्कार हुआ और न ही शारीरिक सुख व मानसिक शांति मिली। परमात्मा को पाने की तड़प से आप साधु महात्माओं से मिलते रहते थे।

एक दिन आपकी मुलाकात कबीर पंथी महान संत 107 वर्षीय स्वामी रामदेवानन्द जी महाराज से हुई। आपने स्वामी जी से पूछा कि परमात्मा की प्राप्ति कैसे हो व मानसिक शांति कैसे मिले? स्वामी जी ने पूछा कि आप क्या उपासना करते हो? आपने बताया कि मैं व्रत उपवास रखता हूँ, मन्दिरों में जाता हूँ, हनुमान-श्री कृष्ण व श्याम जी की उपासना करता हूँ। सभी त्यौहार मनाता हूँ और श्राद्ध आदि भी निकालता हूँ। तब स्वामी जी ने आप जी से कहा कि आप जो साधना करते हो यह न तो परमात्मा को पाने की है और न ही मानसिक शांति दे सकती है। कबीर साहेब जी ने अपनी वाणी में कहा है कि -

कबीर, माई मसानी सेढ शीतला, भैरो भूत हनुमंत। साहेब से न्यारा रहे, जो इनको पूजंत।।
कबीर, पत्थर पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूं पहार। तातैं चक्की भली, पीस खाए संसार।

स्वामी जी ने बताया कि इन साधनाओं के करने से न तो कर्म की मार समाप्त होती है, न ही मन को शांति मिलती है और न ही पूर्ण मुक्ति प्राप्त होती है। चूंकि ये साधनाएँ पूर्ण परमात्मा की न हो कर काल निरंजन(ब्रह्म) का फैलाया हुआ मिथ्या जाल है। 21 ब्रह्माण्ड का मालिक काल निरंजन भगवान है जिसको वेदों में ज्योति निरंजन निराकार परमात्मा (ब्रह्म) कहते हैं। इसकी पत्नी का नाम अष्टंगी (प्रकृति-शेराँवाली) माया है तथा इसके तीन पुत्र ब्रह्मा, विष्णु व महेश हैं। इन पाँचों ने मिल कर अपनी योग माया से जीवों को भ्रमित कर रखा है और दयाल परमात्मा सतपुरुष की भक्ति पर पर्दा डाला हुआ है। जिसके परिणाम स्वरूप ये अपनी भक्ति करवाते हैं। इनकी भक्ति करने से जीव के कर्म की मार समाप्त नहीं हो सकती। कर्मो का फल भोगना पड़ता है। अच्छे कर्म स्वर्ग में और बुरे नरक में और फिर लख चौरासी में जाते हैं। सतगुरु गरीबदास जी महाराज अपनी वाणी में कहते हैं कि -

गरीब,ब्रह्मा विष्णु महेश्वर, माया और धर्मराय कहिये। इन पाँचों मिल प्रपंच बनाया, वाणी हमरी लहिये।।

स्वामी जी ने आपजी को बताया कि इस ब्रह्म(क्षर पुरुष) से ऊपर परब्रह्म(अक्षर पुरुष) व इससे ऊपर पूर्णब्रह्म(परम अक्षर पुरुष) परमात्मा सतपुरुष है। सतपुरुष की भक्ति करने से कर्मो की मार समाप्त हो कर मानसिक शांति व पूर्ण मोक्ष मिलता है। जब आपजी ने ये बातें सुनी तो

मन में उथल-पुथल सी मच गई। चूंकि ये बातें पहले कभी नहीं सुनी थी। आप ने स्वामी जी की बात को सत्य मान कर 17 फरवरी 1988 को उनसे नाम उपदेश लिया।

एक दिन आपजी का स्वामी जी के साथ उनके पैतृक गाँव बड़ा पैंतावास, तहसील चरखी दादरी, जिला भिवानी(हरियाणा) में जाना हुआ। स्वामी जी 16 वर्ष की आयु में गाँव से बाहर जंगल में पशु चरा रहे थे। उनकी मुलाकात एक कबीर पंथी महात्मा जी से हुई। महात्मा जी ने स्वामी जी को भक्ति करने की प्ररेणा दी। स्वामी जी महात्मा की प्रेरणा से अति उत्तेजित हो कर और यह समझते हुए कि मनुष्य जन्म बार-२ नहीं मिलता उसी समय स्वामी जी ने अपने कपड़े उतार कर वहीं जंगल में फैंक दिए और अन्य वस्त्र पहन कर उस महात्मा जी के साथ चले गए। उस दिन के पश्चात आज से पहले तक कभी घर पर वापिस नहीं आए थे। घर वालों ने स्वामी जी के कपड़े जंगल में पड़े देख कर यह मान लिया कि उनको तो कोई जंगली जानवर खा गया है। उस दिन से उनको मृत जान कर उनके श्राद्ध निकालने शुरु कर दिए। स्वामी जी की भाभी ने आपको बताया कि मैं स्वामी जी के अपने हाथ से 70 श्राद्ध निकाल चुकी हूँ। इस घटना को देख कर आपके जीवन में बदलाव आ गया। आपजी ने सोचा कि ये श्राद्ध निकालना, पत्थर पूजा करना सब व्यर्थ की बाते हैं।

एक बार आपजी अपनी रिश्तेदारी में गए हुए थे। वहाँ आपने खाना खाते समय वहीं पर खड़े हुए कुत्ते को रोटी डाल दी। वह कुत्ता उस रोटी को तुरंत न खा कर उठा कर ले गया और पास में पड़े हुए कूड़े के ढेर में दबा देता है। आपने ये सब बड़े ध्यान से देखा। अगले दिन सुबह वही कुत्ता उस कूड़े के ढेर में दबी हुई वही रोटी निकाल कर जो सूख चुकी थी खाने लगा। आपजी उस समय चाय पी रहे थे। आपजी ने बड़े ध्यान से उस कुत्ते को देखा और अपने रिश्तेदार को यह बात बताई। उस रिश्तेदार ने बताया कि यह कुत्ता मंगलवार के दिन कभी रोटी नहीं खाता। कल मंगलवार था इसलिए इसने इस रोटी को न खा कर कुड़े के ढेर में दबा दिया था जिसे अब खा रहा है। आपजी ने सोचा कि यह कुत्ता मनुष्य जन्म में कितना उपवास रखता होगा जिसके कारण इसको अब भी व्रत याद हैं परंतु इस व्रत ने इसको लख चौरासी में डाल दिया और कुत्ता बना दिया। आपने सत्य को जानने के लिए स्वामी जी के दिए हुए नाम का स्मरण किया तथा साथ में सभी शास्त्रों का अध्ययन किया।

आपने श्री मद्भगवद्गीता, कबीर सागर, संत गरीबदास जी महाराज कृत 'सत ग्रन्थ साहेब', सभी पुराणों व अन्य सभी संतों की वाणी का अध्ययन किया। जिसके अध्ययन से पाया कि जो बातें स्वामी जी ने आपको बताई थी उनका प्रमाण पुराणों व गीता जी में भी मिला। गीता के अध्याय नं. 14 के श्लोक नं. 3 से 5 में काल निरंजन कहता है कि ये प्रकृति तो मेरी पत्नी है और सभी जीवों की माता है अर्थात् जगत् जननी है और मैं इसके पेट में बीज स्थापन करने वाला पिता हूँ। प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुण(रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) जीव आत्मा को शरीर से बाँधे रखते हैं। अध्याय नं. 3 के श्लोक नं. 14-15 में भी पूर्णब्रह्म के बारे में भी लिखा है कि सभी प्राणियों की उत्पत्ति अन्न से होती है, अन्न की उत्पत्ति वर्षा से होती है, वर्षा यज्ञ से, यज्ञ शुभ कर्मो से, कर्म ब्रह्म ने लगाए हैं और ब्रह्म की उत्पत्ति अविनाशी परमात्मा से हुई है तथा यज्ञों का फल भी परम अक्षर परमात्मा से ही प्राप्त होता है। इसी प्रकार देवी-भागवद् महापुराण तीसरे स्कन्द में भी लिखा है कि अष्टंगी आदि माया (प्रकृति) तीनों देवताओं(ब्रह्मा, विष्णु, शिव) की माता है और ज्योति निरंजन इनका पिता है। इन्हीं से यहाँ की

सृष्टी चली हुई है। शिव पुराण के छठे अध्याय में लिखा है कि महाशिव व शिवा के रमण करने से तीनों देवों की उत्पत्ति हुई। यहाँ महाशिव ज्योति निरंजन ब्रह्म(काल) व शिवा प्रकृति(दुर्गा) अर्थात् आदि माया है। विष्णु पुराण में लिखा है कि विष्णु का परम रूप काल है। गीता जी के अध्याय नं. 11 के श्लोक नं. 32 में स्वयं ब्रह्म(ज्योति निरंजन) कह रहा है कि मैं काल हूँ। आपने स्वामी जी से नाम ले कर सतनाम व सारनाम का घोर जाप किया। जिसके परिणाम स्वरूप आपको पूर्णब्रह्म कबीर साहेब का साक्षात्कार हुआ व सत्य का ज्ञान हुआ। इसके बाद मन को शांति व परम सुख की अनुभूति हर पल रहने लगी। सन् 1994 में स्वामी रामदेवानन्द जी महाराज ने आपको नाम-दान देने की आज्ञा दी। नाम-दान की जिम्मेदारी को अपना परम कर्त्तव्य समझते हुए व उसे पूर्ण करने के लिए आपने शहर-शहर, गाँव-गाँव में घर-घर जा कर व्यक्तियों को समझाना शुरु किया। आप इतने अधिक व्यस्त हो गए कि आपको अठारह वर्ष नौकरी करने के बाद त्याग देनी पड़ी ताकि लोगों को सतमार्ग का ज्ञान करवाया जा सके। आपसे नाम-दान लेने से भक्तों को सांसारिक सुख व अध्यात्मिक अनुभव होने लगे। जिनको देख कर दुःखी लोग आपजी से मिलने आने लगे और दुःख निवारण करने की प्रार्थना करने लगे। आपने उनको समझाया कि मैं कोई जन्त्र-मन्त्र व झाड़ा आदि नहीं लगाता हूँ। मैं तो केवल कबीर साहेब के सतनाम का उपदेश देता हूँ। आपको उपदेश लेना पड़ेगा। इस पर कुछ लोग कहते हैं कि हमने नाम-दान तो बहुत बड़े संत से लिया हुआ है। जिसके लाखों अनुयायी हैं तथा हम पूर्ण विश्वास के साथ कई-कई घंटों तक ध्यान में भी बैठते हैं। परन्तु हमारे को कोई सांसारिक सुख व अध्यात्मिक अनुभूति नहीं हुई। इस पर महाराज जी उन फरियादी लोगों को समझाते हैं कि जिसके पास सतनाम उपदेश है और श्रद्धा-भाव से जपते हैं उनके सभी दुःख दूर हो कर मन में शांति मिलती है। कबीर साहेब कहते हैं कि -

कबीर, जब ही सतनाम हृदय धरो, भयो पाप का नाश। जैसे चिनगी अग्नि की, परी पुराने घास।।
गरीब, नाम रटे निर्गुण कला, मानुष नहीं मुरार। ज्यों पारस संग लोहा लगे, कटि हैं कर्म लगार।।
नानक दुखिया सब संसार, सुखिया सोई नाम आधार। नानक नाम चढदी कला, तेरे भाणे सबदा भला।।

आपजी ने जब उनसे नाम उपदेश पूछा तो पाया कि नाम ही गलत दिया हुआ है जो कि किसी भी संत की वाणी व ग्रन्थ में प्रमाणित नहीं है। जो सतनाम कहलाता है उसका प्रमाण कबीर साहेब, धर्मदास साहेब, गरीबदास साहेब, घीसा संत, नानक साहेब, दादू साहेब आदि संतों की वाणी में मिलता है। जिसको सुरति निरति मन और पवन के साथ किया जाता है जिसे अजपा जाप भी कहते हैं। इसके जपने से परमात्मा का साक्षात्कार होता है व सांसारिक दुःख भी दूर होते हैं। आप बतातें हैं कि सबका मालिक एक है और मुक्ति का मार्ग भी एक है। उस मार्ग को न अपनाने से सुर नर मुनिजन सब इस काल निरंजन के लोक में कर्मो के फल भोगते रहते हैं तथा पूर्ण मोक्ष प्राप्ति नहीं होते हैं। यदि इस लोक का भी मोक्ष प्राप्त करना है तो उसको प्राप्त करने का भी सबके लिए एक ही रास्ता है जो कि बिना जानकारी के बहुत कठिन है।

गरीब, बंका पुर गढ बंकी पोर, संख जन्म जुग भरमी गौर।अठोतर जन्म शिव संग साथ, जीव जुनी की कहां बात।।

भगवान शंकर की पत्नी माता पार्वती 108 जन्मों तक शिवजी के साथ रहने पर भी जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त नहीं हुई। एक दिन उनको नारद मुनि मिले और कहा कि माता तुम बार-बार गर्भ में जाती हो व घोर कष्ट उठाती हो। भगवान शिव को गुरु बना कर उनसे मुक्त होने का मार्ग क्यों नहीं पूछ लेती? नारद जी के कहने पर पार्वती को भक्ति करने की

प्रेरणा हुई उसने शिव भगवान को गुरु बना कर मुक्त होने का मार्ग पूछा तो शिव भगवान ने समझाया कि मानव शरीर परमात्मा ने केवल भक्ति करने के लिए ही दिया है। चूंकि इसके अन्दर परमात्मा से साक्षात्कार करने की व्यवस्था है, जो कि अन्य प्राणियों में नहीं है। भगवान शिव ने एकांत में ले जाकर जहां कोई भी ज्ञान को न सुन सके पार्वती को बताया कि आसन पदम लगा कर व मेरुदंड सीधा रखते हुए भंवर को सुन्न में स्थापित करो। मूल कमल, स्वाद कमल, नाभि कमल, हृदय कमल, कंठ कमल, त्रिकुटी कमल व सहस्रांर कमल में जाने का रास्ता बतलाया। तब जा कर पार्वती को केवल सामिप्य मुक्ति प्राप्त हुई और जब तक शिव रहेंगे तब तक पार्वती रहेगी। जब काल निरंजन(ब्रह्म) महाप्रलय करेगा उस समय ये सभी नष्ट होंगे, न लोक रहेंगे, न भगवान रहेंगे। क्योंकि ये सभी पूर्ण मुक्त नहीं हुए हैं।

आपजी के हरियाणा, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, पंजाब व पश्चिमी बंगाल आदि राज्यों में लाखों शिष्य हैं जो आपसे सतनाम का उपदेश लेकर शराब, अफीम, धूम्रपान, मांस, अंडा आदि व सामाजिक बुराईयों - मूर्ति पूजा, श्राद्ध निकालना, व्रत रखना आदि ओच्छी उपासनाएँ छोड़ कर कबीर साहेब द्वारा बताए हुए सतनाम का जाप करके सांसारिक सुख व अध्यात्मिक अनुभूति प्राप्त कर रहे हैं। आपकी शरण में आने से हजारों व्यक्तियों के दीर्घ रोग दूर हुए हैं और उजड़े हुए परिवार फिर से आबाद हुए हैं। हरियाणा राज्य के जींद शहर के अर्बनस्टेट कॉलोनी में एक नव रत्न दीक्षित का परिवार जो कि मूल रूप से राजस्थान के पुष्कर कस्बे जिला अजमेर के रहने वाले हैं। उनकी पत्नी का नाम श्यामा दीक्षित है जो माता शेराँ वाली की कट्टर उपासक थी। उनके दो लड़के हैं। एक दिन श्यामा बहन पड़ोस में हो रहे माता जी के जागरण में चली जाती है। वहाँ पर एक औरत के अन्दर माता जी प्रकट हो कर श्यामा का नाम ले कर पुकारने लगी तथा कहा कि आप मेरी परम भक्त हो। आप मेरी 14 मास तक अखण्ड ज्योति जगा दो। मैं तेरे ऊपर कोई कष्ट नहीं आने दूंगी। उस बहन ने तभी से अखण्ड ज्योति जगा दी। तब उस बहन के घर में तीन गाड़ियाँ थी। बाजार में हौजरी(गॉरमैन्टस) की दुकान थी और हैचरी का व्यापार था। माता जी के कहे अनुसार अखण्ड ज्योति जगाने के बाद उसको हानि होनी शुरु हो गई। 14 मास के अन्दर उसके घर का सर्वनाश हो गया। सब कुछ बिक गया और कई लाख रूपए का कर्जा हो गया। घर में खाने को अन्न भी नहीं रहा। तब पड़ोसियों ने कुछ आटा इकट्ठा करके उनके घर पहुँचाया। उसके छोटे लड़के की जेल हो गई और बड़े लड़के व बहन श्यामा की नौकरी छूट गई। इसे कहते हैं सर्वनाश।

एक दिन स्वप्न में स्वयं माता ने उस बहन से कहा कि श्यामा तेरा दुःख निवारण करना मेरे वश की बात नहीं है तथा आपका नाम लेकर कहा है कि ''उस परम संत रामपाल जी महाराज की शरण में जा। वे ही आपके दुःख का निवारण कर सकते हैं।'' तब वह बहन आपकी शरण में आई और नाम लिया। नाम लेने के कुछ ही दिन बाद उसका लड़का जेल से बरी हो गया। उसके परिवार के चारों सदस्यों की नौकरी लग गई तथा अति सुख प्राप्त होने लगा और सतभक्ति मार्ग मिल गया।

"दूसरों की दिखावटी घटिया साधना से अपनी शास्त्र विधि अनुसार साधना अच्छी"

गीता अध्याय नं. 3 का श्लोक नं. 35

श्रेयान्, स्वधर्मः, विगुणः, परधर्मात्, स्वनुष्ठितात्,
स्वधर्मे निधनम्, श्रेयः, परधर्मः, भयावहः।।

अनुवाद : (विगुणः) गुणरहित (स्वनुष्ठितात्) स्वयं मनमाना अच्छी प्रकार आचरणमें लाये हुए (परधर्मात्) दूसरोंकी पूजासे (स्वधर्मः) अपनी पूजा (श्रेयान्) अति उत्तम है जो शास्त्रानुकूल है (स्वधर्मे) अपनी पूजा में तो (निधनम्) मरना भी (श्रेयः) कल्याणकारक है और (परधर्मः) दूसरेकी पूजा (भयावहः) भयको देनेवाली है।

अनुवाद : गुणरहित स्वयं मनमाना अच्छी प्रकार आचरणमें लाये हुए दूसरोंकी पूजासे अपनी पूजा अति उत्तम है जो शास्त्रानुकूल है अपनी पूजा में तो मरना भी कल्याणकारक है और दूसरेकी पूजा भयको देनेवाली है।

विचार करें :-- अध्याय नं. 3 का श्लोक नं. 35 में कहा है कि दूसरों की गलत साधना(गुण रहित) जो शास्त्रानुकूल नहीं है। चाहे वह कितनी ही अच्छी नजर आवे या वो नादान चाहे आपको कितना ही डराये उनकी साधना भयवश होकर स्वीकार नहीं करनी चाहिए। अपनी शास्त्रानुकूल गुरु जी द्वारा दिये गये उपदेश पर दृढ़ विश्वास के साथ लगे रहना चाहिए। विचलित नहीं होना चाहिए। अपनी सत्य पूजा अंतिम स्वांस तक करनी चाहिए तथा अपनी सत्य साधना में मरना भी बेहतर है।

"एक दुःखी परिवार की कहानी"

उदाहरण :-- भक्त रमेश जैन पुत्र श्री ओमप्रकाश जैन, 509/3, शांती नगर, पटियाला चौंक, जीन्द(हरियाणा) में रहता है। जिसका टेलिफोन नं. 01681-25903 है। इसकी पत्नी का नाम भक्तमती कमलेश है तथा चार संतान हैं - दो लड़की तथा छोटे दो जुड़वा लड़के(सुनिल व अनिल) हैं। इस परिवार पर कर्मदण्ड की मार इतनी थी कि सुनकर भी कलेजा कांप उठता है। भक्त रमेश जैन की पटियाला चौंक, जीन्द(हरियाणा) में रंग रोगन की दुकान है। इसकी पत्नी कमलेश को दमा बहुत वर्षो से था। एक लड़की बड़ी से छोटी जो उस समय 8 वर्ष की थी को बचपन से दौरे पड़ते थे। सब जगह डॉ. व हस्पतालों से ईलाज करवा लिया था। लेकिन आराम नहीं मिला। अपनी परम्परागत पूजा जैन धर्म की भी करते थे। इसके साथ-साथ अन्य संतों, सेवड़ों व झाड़ा आदि लगाने वालों से भी राहत चाही। देवी-देवताओं की पूजा, पित्रों की पूजा, गुगा पीर की पूजा, हनुमान की पूजा, राम-कृष्ण की पूजा, मन्दिर में मूर्ती पूजा, श्राद्ध निकालना आदि सब करते थे। दोनों लड़के(सुनिल-अनिल) जन्म से बिमार रहते थे। उस समय(जब यह परिवार जनवरी 1995 में नाम लेकर कबीर साहिब की शरण में इस दास के माध्यम से आया) जुड़वाँ बच्चों की आयु 5 वर्ष की थी। भक्त रमेश व बहन कमलेश ने बताया कि इन लड़कों पर दवाई खर्च लगभग तीन लाख रूपए हो चुका है और कमलेश व लड़की की बिमारी का खर्च अलग था। एक साधारण दुकानदार भला इतने खर्च को किस प्रकार सहन करे? जो पैसा बचता सब बिमारी पर लग जाता था। कर्ज भी काफी हो गया था। फिर उन्होंने आप जी का सतसंग सुना कि दुःखी जीव जो परमात्मा कबीर साहिब की शरण में आकर ठीक हो गए और सत भक्ति पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष कबीर साहिब) की कर रहे हैं। अन्य सर्व पूजा जो काल तक कि करते थे त्याग कर सुखी हो गए। उनकी जुबानी सुन कर विश्वास हो गया कि अब हमें सही ठिकाना (सतमार्ग) पाया है और जनवरी 1995 में उन्होंने आपजी से उपदेश (नाम) ले लिया। अपने पूर्ण ब्रह्म कबीर साहिब के चरणों में सच्चे दिल से भक्ती करने लग गए और शास्त्रानुकूल साधना गुरु जी के बताए अनुसार शुरु कर दी।

कुछ दिनों बाद बहन कमलेश को दमा नहीं रहा, न ही लड़की को दौरे तथा दोनों लड़के भी पूर्णरूप से स्वस्थ हो गए। उन्होंने सुख की स्वांस ली। फिर लगभग नौ महीने के बाद गुगापीर की पूजा का दिन आ गया। उस दिन कमलेश की पड़ोसन ने आकर कहा 'क्या कमलेश गुगा पीर की पूजा नहीं करनी?' बहन कमलेश ने कहा 'हमने कबीर साहिब की शरण(नाम मन्त्र) ले रखी है और

हमारे गुरु जी ने सर्व देवी-देवताओं की पूजा तथा व्रत आदि मना कर रखे हैं।' यह सुन कर पड़ोसन ने कहा 'नादान अपनी पुरानी साधना नहीं छोड़ा करते। मैंने भी अमूक संत से नाम ले रखा है। मैं तो सारी पूजा करती हूँ। एक हमारे रिस्तेदार ने गुगा की पूजा नहीं की थी। उसका एक ही लड़का था वही मर गया। अब तूँ देख ले।' इस बात से भयभीत हो कर भक्तमति कमलेश ने गुगा की पूजा कर ली। अगले ही दिन लड़की को दौरा आ गया, दोनों लड़के सिविल हस्पताल(जीन्द) में दाखिल हो गए और कमलेश को दमा फिर शुरु हो गया। कबीर साहिब कहते हैं :--

कबीर, सौ वर्ष तो गुरु की पूजा, एक दिन आन उपासी।
वो अपराधी आत्मा, पड़े काल की फांसी।।

भक्त रमेश का सारा परिवार फिर आपजी के (संत रामपाल दास के) पास आया। अपनी गलती की क्षमा याचना की। फिर दोबारा उपदेश(नाम) दिया। उसके बाद वह पूरा परिवार बिल्कुल स्वस्थ है। कोई आन उपासना नहीं करते हैं। पुराना मकान बेच कर नई कोठी बना ली है और कर्ज मुक्त भी हो गए हैं। आज(अक्तूबर 2003) नौ वर्ष से ज्यादा हो चुके हैं। सबको कहते हैं कि हमारे जैसा दुःखी कोई नहीं था। जैसी कबीर साहिब ने हमारी प्रार्थना सुनी ऐसी सब जीवों की सुनें और गुरुदेव जी(रामपाल दास महाराज) से नाम लेकर अपना जीवन धन्य बनाएँ तथा काल-जाल से निकलें।

इसी तरह रोहतक शहर(हरियाणा) में दस वर्ष के विक्की नामक लड़के की दोनों किडनी(गुर्दे) खराब हो गई थी। उन्होंने सभी जगह उपचार करवाया। डॉक्टरों ने ऑपरेशन के लिए कह दिया था। उस लड़के का मामा ऑल इन्डिया हॉस्पिटल दिल्ली में डॉक्टर है। उसने उस लड़के को वहाँ ले जाने की तैयारी कर ली थी। तब लड़के की माता बहन सरोज देवी और विक्की ने जुलाई सन् 1999 में आपजी से नाम उपदेश ले लिया। तब वह लड़का आपकी कृपा से बिना ऑपरेशन के ठीक हो गया। जो आज सन् 2005 तक बिल्कुल स्वस्थ है। आपजी सतगुरु कबीर साहेब द्वारा बताया सतनाम देते हैं और अन्य सभी आन उपासनाएँ छुटवाते हैं। ऐसे हजारों परिवार हैं जो शराब व अन्य नशीली वस्तुओं का सेवन करके अपने जीवन को बर्बाद कर रहे थे। आपके सत्यज्ञान से उन्होंने वे सभी विकार छोड़ दिए व आपकी दया से अब वे सतगुरु कबीर साहेब की भक्ति करते हैं।

एक दिन एक व्यक्ति ने प्रश्न किया कि आपके महाराज जी गन मैन (बन्दूक वाले) क्यों रखते हैं। संत को क्या आवश्यकता है ? वह व्यक्ति श्री हनुमान जी का उपासक था तथा श्री राम, श्री कृष्ण आदि को पूजता था। मैंने उससे पूछा कि श्री हनुमान जी ने गदा किस लिए रखी है ? क्या हवा करने को ? जब श्री हनुमान जी जैसे महाबली को तथा श्री राम, श्री कृष्ण जैसे भगवानों को भी शैतानों के लिए हथियार रखने आवश्यक थे तो संत रामपाल जी महाराज के विषय में शंका किस लिए। उसने कहा कि बात तो आपकी सत्य है। दूसरे ने प्रश्न किया कि अन्य संत तो गन मैन नहीं रखते। उसको बताया कि हमारे महाराज जी वह ज्ञान बता रहे हैं जो अपने सद्ग्रन्थों में विद्यमान है। परंतु अन्य संत शास्त्र विरूद्ध ज्ञान व भक्ति बता कर सम्मानित हैं। अब उनकी पोल खुल रही है। वे कुछ भी घिनौनी हरकत करवा सकते हैं। इसलिए बचाव करना अति आवश्यक है। दूसरा कारण है कि बैंक में गन मैन होता है। क्योंकि वहाँ पर धन है। किसी अन्य साधारण मकान पर गन मैन नहीं होता है। क्योंकि वहाँ पर खजाना नहीं है। इसी प्रकार संत रामपाल जी महाराज के पास भक्ति व तत्व ज्ञान रूपी खजाना है।

कुछेक श्रद्धालु, ईषालु व्यक्तियों के द्वारा भ्रमित किए गए हैं कि संत रामपाल जी महाराज जे.ई.(कनिष्ठ अभियन्ता) की नौकरी से निलम्बित या बर्खास्त किए गए हैं। उनसे प्रार्थना है कि

ऐसे भक्ति द्रोही व्यक्तियों की बातों में न आ करके वास्तविकता से परीचित हों। जब-जब परम संत आए हैं, तब उनके विरोधियों की कमी नहीं रही। इस भ्रमणा के निवारण के लिए कृप्या देखें संत जी का नौकरी से त्याग पत्र जो सरकार द्वारा स्वीकृत है।

P.W. IRRIGATION DEPARTMENT, HARYANA. CHANDIGARH.

ORDER

No. 3492/SNGE-II/2000: The resignation of Shri Ramp al Singh, Jatin Junior Engineer Irrigation Department, Haryana is hereby accepted with effect from 21.5.1995.

The acceptance of resignation is subject to the recovery/settlement of Govt. dues, outstanding against this official and further in view of the under-taking furnished by Shri Ramp al Singh Jatin Junior Engineer.

Usual events may be reported

Dated Chandigarh
the 16th May, 2000

J.L. Gambhir
General Manager.
Irrigation Department,
Haryana, Chandigarh.

No 3493-3500 SNGE-II/2000 Dated 16-5-2000

A copy of above is forwarded to the following for information and necessary action:-

1. Superintending Engineer, YWS Circle, Rohtak.
2. Superintending Engineer, WJC Command Lining Circle, CADA, Rohtak.
3. PA to EIC & PA to G.M.
4. Steno to E.O. & Supdt./NGE-II & Supdt./Disciplinary Cell IDHD, Haryana, Chandigarh.
5. 5 & 7 NGE-II.

Shri Ramp al Singh Jatin S/o Sh. Nand Lal
House No. 4475, Defence Colony, Jind.

16-5-2000
Establishment Officer
for General Manager, Irrigation Deptt.
Haryana, Chandigarh

भक्त सोमवीर दास
सतलोक आश्रम करौंथा,
जिला रोहतक(हरि.)-124001
मोब. - **9812026821, 9812142324, 9812166044**

गहरी नजर गीता में

भूमिका

पूर्ण परमात्मा(पूर्ण ब्रह्म) अर्थात् सतपुरुष का ज्ञान न होने के कारण सर्व विद्वानों को ब्रह्म(निरंजन- काल भगवान जिसे महाविष्णु कहते हैं) तक का ज्ञान है। पवित्र आत्माऐं चाहे वे ईसाई हैं, मुसलमान, हिन्दू या सिख हैं इनको केवल अव्यक्त अर्थात् एक ओंकार परमात्मा की पूजा का ही ज्ञान पवित्र शास्त्रों (जैसे पुराणों, उपनिष्दों, कतेबों, वेदों, गीता आदि नामों से जाना जाता है) से हो पाया। क्योंकि इन सर्व शास्त्रों में ज्योति स्वरूपी(प्रकाशमय) परमात्मा ब्रह्म की ही पूजा विधि का वर्णन है तथा जानकारी पूर्ण ब्रह्म(सतपुरुष) की भी है। पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) न मिलने से पूर्ण ब्रह्म की पूजा का ज्ञान नहीं हुआ। जिस कारण से पवित्र आत्माऐं ईसाई फोर्मलैस गौड (निराकार प्रभु) कहते हैं। जबकि पवित्र बाईबल में उत्पत्ति विषय के सृष्टि की उत्पत्ति नामक अध्याय में लिखा है कि प्रभु ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया तथा छः दिन में सृष्टि रचना करके सातवें दिन विश्राम किया। इससे स्वसिद्ध है कि प्रभु भी मनुष्य जैसे आकार में है। इसी का प्रमाण पवित्र कुर्आन शरीफ में भी है। इसी प्रकार पवित्र आत्माऐं मुस्लमान प्रभु को बेचून (निराकार) अल्लाह (प्रभु) कहते हैं, जबकि पवित्र कुर्आन शरीफ के सुरत फूर्कानि संख्या 25, आयत संख्या 52 से 59 में लिखा है कि जिस प्रभु ने छः दिन में सृष्टि रची तथा सातवें दिन तख्त पर जा विराजा, उसका नाम कबीर है। पवित्र कुर्आन को बोलने वाला प्रभु किसी और कबीर नामक प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है तथा कह रहा है कि वही कबीर प्रभु ही पूजा के योग्य है, पाप क्षमा करने वाला है, परन्तु उसकी भक्ति के विषय में मुझे ज्ञान नहीं, किसी तत्वदर्शी संत से पूछो। उपरोक्त दोनों पवित्र शास्त्रों (पवित्र बाईबल व पवित्र कुर्आन शरीफ) ने मिल-जुल कर सिद्ध कर दिया है कि परमेश्वर मनुष्य सदृश शरीर युक्त है। उसका नाम कबीर है। पवित्र आत्माऐं हिन्दू व सिख उसे निरंकार(निर्गुण ब्रह्म) के नाम से जानते हैं। जबकि आदरणीय नानक साहेब जी ने सतपुरुष के आकार रूप में दर्शन करने के बाद अपनी अमृतवाणी महला पहला 'श्रीगुरु ग्रन्थ साहेब' में पूर्ण ब्रह्म का आकार होने का प्रमाण दिया है, लिखा है ''धाणक रूप रहा करतार(पृष्ठ 24), हक्का कबीर करीम तू बेएब परवरदिगार(पृष्ठ 721)'' तथा प्रभु के मिलने से पहले पवित्र हिन्दू धर्म में जन्म होने के कारण श्री ब्रजलाल पाण्डे से पवित्र गीता जी को पढ़कर श्री नानक साहेब जी ब्रह्म को निराकार कहा करते थे। उनकी दोनों प्रकार की अमृतवाणी गुरु ग्रन्थ साहेब में लिखी हैं। हिन्दुओं के शास्त्रों में पवित्र वेद व गीता विशेष हैं, उनके साथ-2 अठारह पुराणों को भी समान दृष्टी से देखा जाता है। श्रीमद् भागवत सुधासागर, रामायण, महाभारत भी विशेष प्रमाणित शास्त्रों में से हैं। विशेष विचारणीय विषय यह है कि जिन पवित्र शास्त्रों को हिन्दुओं के शास्त्र कहा जाता है, जैसे पवित्र चारों वेद व पवित्र श्रीमद् भगवत गीता जी आदि, वास्तव में ये सद् शास्त्र केवल पवित्र हिन्दु धर्म के ही नहीं हैं। ये सर्व शास्त्र महर्षि व्यास जी द्वारा उस समय लिखे गए थे जब कोई अन्य धर्म नहीं था। इसलिए पवित्र वेद व पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी तथा पवित्र पुराणादि

सर्व मानव मात्र के कल्याण के लिए हैं। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 1 मंत्र 15-16 तथा अध्याय 5 मंत्र 1 व 32 में स्पष्ट किया है कि ''{अग्नेः तनूर् असि, विष्णवे त्वा सोमस्य तनुर् असि, कविरंघारिः असि, स्वर्ज्योति ऋतधामा असि} परमेश्वर का शरीर है, पाप के शत्रु परमेश्वर का नाम कविर्देव है, उस सर्व पालन कर्त्ता अमर पुरुष अर्थात् सतपुरुष का शरीर है। वह स्वप्रकाशित शरीर वाला प्रभु सत धाम अर्थात् सतलोक में रहता है। पवित्र वेदों को बोलने वाला ब्रह्म यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 8 में कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा कविर्मनीषी अर्थात् कविर्देव ही वह तत्वदर्शी है जिसकी चाह सर्व प्राणियों को है, वह कविर्देव परिभूः अर्थात् सर्व प्रथम प्रकट हुआ, जो सर्व प्राणियों की सर्व मनोकामना पूर्ण करता है। वह कविर्देव स्वयंभूः अर्थात् स्वयं प्रकट होता है, उसका शरीर किसी माता-पिता के संयोग से (शुक्रम् अकायम्) वीर्य से बनी काया नहीं है, उसका शरीर (अस्नाविरम्) नाड़ी रहित है अर्थात् पांच तत्व का नहीं है, केवल तेजपुंज से एक तत्व का है, जैसे एक तो मिट्टी की मूर्ति बनी है, उसमें भी नाक, कान आदि अंग हैं तथा दूसरी सोने की मूर्ति बनी है, उसमें भी सर्व अंग हैं। ठीक इसी प्रकार पूज्य कविर्देव का शरीर तेज तत्व का बना है, इसलिए उस परमेश्वर के शरीर की उपमा में अग्नेः तनूर् असि वेद में कहा है।

सर्व प्रथम पवित्र शास्त्र श्रीमद्भगवत गीता जी पर विचार करते हैं।

"पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी का ज्ञान किसने कहा?"

पवित्र गीता जी के ज्ञान को उस समय बोला गया था जब महाभारत का युद्ध होने जा रहा था। अर्जुन ने युद्ध करने से इन्कार कर दिया था। युद्ध क्यों हो रहा था? इस युद्ध को धर्मयुद्ध की संज्ञा भी नहीं दी जा सकती क्योंकि दो परिवारों का सम्पत्ति वितरण का विषय था। कौरवों तथा पाण्डवों का सम्पत्ति बंटवारा नहीं हो रहा था। कौरवों ने पाण्डवों को आधा राज्य भी देने से मना कर दिया था। दोनों पक्षों का बीच-बचाव करने के लिए प्रभु श्री कृष्ण जी तीन बार शान्ति दूत बन कर गए। परन्तु दोनों ही पक्ष अपनी-अपनी जिद्द पर अटल थे। श्री कृष्ण जी ने युद्ध से होने वाली हानि से भी परिचित कराते हुए कहा कि न जाने कितनी बहन विधवा होंगी ? न जाने कितने बच्चे अनाथ होंगे ? महापाप के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलेगा। युद्ध में न जाने कौन मरे, कौन बचे ? तीसरी बार जब श्री कृष्ण जी समझौता करवाने गए तो दोनों पक्षों ने अपने-अपने पक्ष वाले राजाओं की सेना सहित सूची पत्र दिखाया तथा कहा कि इतने राजा हमारे पक्ष में हैं तथा इतने हमारे पक्ष में। जब श्री कृष्ण जी ने देखा कि दोनों ही पक्ष टस से मस नहीं हो रहे हैं, युद्ध के लिए तैयार हो चुके हैं। तब श्री कृष्ण जी ने सोचा कि एक दाव और है वह भी आज लगा देता हूँ। श्री कृष्ण जी ने सोचा कि कहीं पाण्डव मेरे सम्बन्धी होने के कारण अपनी जिद्द इसलिए न छोड़ रहे हों कि श्री कृष्ण हमारे साथ हैं, विजय हमारी ही होगी(क्योंकि श्री कृष्ण जी की बहन सुभद्रा जी का विवाह श्री अर्जुन जी से हुआ था)। श्री कृष्ण जी ने कहा कि एक तरफ मेरी सर्व सेना होगी और दूसरी तरफ मैं होऊँगा और इसके साथ-साथ मैं वचन बद्ध भी होता हूँ कि मैं हथियार भी नहीं उठाऊँगा। इस घोषणा से पाण्डवों के पैरों के नीचे की जमीन खिसक गई। उनको लगा कि अब हमारी पराजय निश्चित है। यह विचार कर पाँचों पाण्डव यह कह कर सभा से बाहर गए कि हम कुछ विचार कर लें। कुछ समय उपरान्त श्री कृष्ण जी को सभा से बाहर आने की प्रार्थना की। श्री कृष्ण जी के बाहर आने पर पाण्डवों ने कहा कि हे भगवन् ! हमें पाँच गाँव दिलवा दो। हम युद्ध नहीं चाहते हैं। हमारी इज्जत भी रह जाएगी और आप चाहते हैं कि

युद्ध न हो, यह भी टल जाएगा।

पाण्डवों के इस फैसले से श्री कृष्ण जी बहुत प्रसन्न हुए तथा सोचा कि बुरा समय टल गया। श्री कृष्ण जी वापिस आए, सभा में केवल कौरव तथा उनके समर्थक शेष थे। श्री कृष्ण जी ने कहा दुर्योधन युद्ध टल गया है। मेरी भी यह हार्दिक इच्छा थी। आप पाण्डवों को पाँच गाँव दे दो, वे कह रहे हैं कि हम युद्ध नहीं चाहते। दुर्योधन ने कहा कि पाण्डवों के लिए सुई की नोक तुल्य भी जमीन नहीं है। यदि उन्हें राज्य चाहिए तो युद्ध के लिए कुरुक्षेत्र के मैदान में आ जाऐं। इस बात से श्री कृष्ण जी ने नाराज होकर कहा कि दुर्योधन तू इंसान नहीं शैतान है। कहाँ आधा राज्य और कहाँ पाँच गाँव? मेरी बात मान ले, पाँच गाँव दे दे। श्री कृष्ण से नाराज होकर दुर्योधन ने सभा में उपस्थित योद्धाओं को आज्ञा दी कि श्री कृष्ण को पकड़ो तथा कारागार में डाल दो। आज्ञा मिलते ही योद्धाओं ने श्री कृष्ण जी को चारों तरफ से घेर लिया। श्री कृष्ण जी ने अपना विराट रूप दिखाया। जिस कारण सर्व योद्धा और कौरव डर कर कुर्सियों के नीचे घुस गए तथा शरीर के तेज प्रकाश से आँखें बंद हो गई। श्री कृष्ण जी वहाँ से निकल गए।

आओ विचार करें :- उपरोक्त विराट रूप दिखाने का प्रमाण संक्षिप्त महाभारत गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित में प्रत्यक्ष है। जब कुरुक्षेत्र के मैदान में पवित्र गीता जी का ज्ञान सुनाते समय अध्याय 11 श्लोक 32 में पवित्र गीता बोलने वाला प्रभु कह रहा है कि 'अर्जुन मैं बढ़ा हुआ काल हूँ। अब सर्व लोकों को खाने के लिए प्रकट हुआ हूँ।' जरा सोचें कि श्री कृष्ण जी तो पहले से ही श्री अर्जुन जी के साथ थे। यदि पवित्र गीता जी के ज्ञान को श्री कृष्ण जी बोल रहे होते तो यह नहीं कहते कि अब प्रवर्त्त हुआ हूँ। फिर अध्याय 11 श्लोक 21 व 46 में अर्जुन कह रहा है कि भगवन् ! आप तो ऋषियों, देवताओं तथा सिद्धों को भी खा रहे हो, जो आप का ही गुणगान पवित्र वेदों के मंत्रों द्वारा उच्चारण कर रहे हैं तथा अपने जीवन की रक्षा के लिए मंगल कामना कर रहे हैं। कुछ आपके दाढ़ों में लटक रहे हैं, कुछ आप के मुख में समा रहे हैं। हे सहस्त्र बाहु अर्थात् हजार भुजा वाले भगवान ! आप अपने उसी चतुर्भुज रूप में आईये। मैं आपके विकराल रूप को देखकर धीरज नहीं कर पा रहा हूँ।

अध्याय 11 श्लोक 47 में पवित्र गीता जी को बोलने वाला प्रभु काल कह रहा है कि 'हे अर्जुन यह मेरा वास्तविक काल रूप है, जिसे तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा था।'

उपरोक्त विवरण से एक तथ्य तो यह सिद्ध हुआ कि कौरवों की सभा में विराट रूप श्री कृष्ण जी ने दिखाया था तथा यहाँ युद्ध के मैदान में विराट रूप काल (श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके अपना विराट रूप काल) ने दिखाया था। नहीं तो यह नहीं कहता कि यह विराट रूप तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा है। क्योंकि श्री कृष्ण जी अपना विराट रूप कौरवों की सभा में पहले ही दिखा चुके थे।

दूसरी यह बात सिद्ध हुई कि पवित्र गीता जी को बोलने वाला काल(ब्रह्म-ज्योति निरंजन) है, न कि श्री कृष्ण जी। क्योंकि श्री कृष्ण जी ने पहले कभी नहीं कहा कि मैं काल हूँ तथा बाद में कभी नहीं कहा कि मैं काल हूँ। श्री कृष्ण जी काल नहीं हो सकते। उनके दर्शन मात्र को तो दूर-दूर क्षेत्र के स्त्री तथा पुरुष तड़फा करते थे। यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में है जिसमें गीता ज्ञान दाता प्रभु ने कहा है कि बुद्धिहीन जन समुदाय मेरे उस घटिया (अनुत्तम) विद्यान को नहीं जानते कि मैं कभी भी मनुष्य की तरह किसी के सामने प्रकट नहीं होता। मैं अपनी योगमाया से छिपा रहता हूँ।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता श्री कृष्ण जी नहीं है। क्योंकि श्री कृष्ण जी तो सर्व समक्ष साक्षात् थे। श्री कृष्ण नहीं कहते कि मैं अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। इसलिए गीता जी का ज्ञान श्री कृष्ण जी के अन्दर प्रेतवत् प्रवेश करके काल ने बोला था।

नोट :- विराट रूप क्या होता है ?

विराट रूप : आप दिन के समय या चाँदनी रात्री में जब आप के शरीर की छाया छोटी लगभग शरीर जितनी लम्बी हो या कुछ बड़ी हो, उस छाया के सीने वाले स्थान पर दो मिनट तक एक टक देखें, चाहे आँखों से पानी भी क्यों न गिरें। फिर सामने आकाश की तरफ देखें। आपको अपना ही विराट रूप दिखाई देगा, जो सफेद रंग का आसमान को छू रहा होगा। इसी प्रकार प्रत्येक मानव अपना विराट रूप रखता है। परन्तु जिनकी भक्ति शक्ति ज्यादा होती है, उनका उतना ही तेज अधिक होता जाता है।

इसी प्रकार श्री कृष्ण जी भी पूर्व भक्ति शक्ति से सिद्धि युक्त थे, उन्होंने भी अपनी सिद्धि शक्ति से अपना विराट रूप प्रकट कर दिया, जो काल के तेजोमय शरीर(विराट) से कम तेजोमय था। तीसरी बात यह सिद्ध हुई कि पवित्र गीता जी बोलने वाला प्रभु काल सहस्त्रबाहु अर्थात् हजार भुजा युक्त है तथा श्री कृष्ण जी तो श्री विष्णु जी के अवतार हैं जो चार भुजा युक्त हैं। श्री विष्णु जी सोलह कला युक्त हैं तथा श्री ज्योति निरंजन काल भगवान एक हजार कला युक्त है। जैसे एक बल्ब 60 वाट का होता है, एक बल्ब 100 वाट का होता है, एक बल्ब 1000 वाट का होता है, रोशनी सर्व बल्बों की होती है, परन्तु बहुत अन्तर होता है। ठीक इसी प्रकार दोनों प्रभुओं की शक्ति तथा विराट रूप का तेज भिन्न-भिन्न था।

इस तत्वज्ञान के प्राप्त होने से पूर्व जो गीता जी के ज्ञान को समझाने वाले महात्मा जी थे, उनसे प्रश्न किया करते थे कि पहले तो भगवान श्री कृष्ण जी शान्ति दूत बनकर गए थे तथा कहा था कि युद्ध करना महापाप है। जब श्री अर्जुन जी ने स्वयं युद्ध करने से मना करते हुए कहा कि हे देवकी नन्दन मैं युद्ध नहीं करना चाहता हूँ। सामने खड़े स्वजनों व नातियों तथा सैनिकों का होने वाला विनाश देख कर मैंने अटल फैसला कर लिया है कि मुझे तीन लोक का राज्य भी प्राप्त हो तो भी मैं युद्ध नहीं करूँगा। मैं तो चाहता हूँ कि मुझ निहत्थे को दुर्योधन आदि तीर से मार डालें, ताकि मेरी मृत्यु से युद्ध में होने वाला विनाश बच जाए। हे श्री कृष्ण ! मैं युद्ध न करके भिक्षा का अन्न खाकर भी निर्वाह करना उचित समझता हूँ। हे कृष्ण ! स्वजनों को मारकर तो पाप को ही प्राप्त होंगे। मेरी बुद्धि काम करना बंद कर गई है। आप हमारे गुरु हो, मैं आपका शिष्य हूँ। आप जो हमारे हित में हो वही दीजिए। परन्तु मैं नहीं मानता हूँ कि आपकी कोई भी सलाह मुझे युद्ध के लिए राजी कर पायेगी अर्थात् मैं युद्ध नहीं करूँगा। (प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 1 श्लोक 31 से 39, 46 तथा अध्याय 2 श्लोक 5 से 8)

फिर श्री कृष्ण जी में प्रवेश काल बार-बार कह रहे हैं कि अर्जुन कायर मत बन, युद्ध कर। या तो युद्ध में मारा जाकर स्वर्ग को प्राप्त होगा, या युद्ध जीत कर पृथ्वी के राज्य को भोगेगा, आदि-आदि कह कर ऐसा भयंकर विनाश करवा डाला जो आज तक के संत-महात्माओं तथा सभ्य लोगों के चरित्र में ढूंढने से भी नहीं मिलता है। तब वे नादान गुरु जी(नीम-हकीम) कहा करते थे कि अर्जुन क्षत्री धर्म को त्याग रहा था। इससे क्षत्रित्व को हानि तथा शूरवीरता का सदा के लिए विनाश हो जाता। अर्जुन को क्षत्री धर्म पालन करवाने के लिए यह महाभारत का युद्ध श्री कृष्ण जी ने करवाया था। पहले तो मैं उनकी इस नादानों वाली कहानी से चुप हो

जाता था, क्योंकि मुझे स्वयं ज्ञान नहीं था।

पुनर् विचार करें :- भगवान श्री कृष्ण जी स्वयं क्षत्री थे। कंस के वध के उपरान्त श्री अग्रसैन जी ने मथुरा की बाग-डोर अपने दोहते श्री कृष्ण जी को संभलवा दी थी। एक दिन नारद जी ने श्री कृष्ण जी को बताया कि निकट ही एक गुफा में एक सिद्धि युक्त राक्षस राजा मुचकन्द सोया पड़ा है। वह छः महीने सोता है तथा छः महीने जागता है। जागने पर छः महीने युद्ध करता रहता है तथा छः महीने सोने के समय यदि कोई उसकी निन्द्रा भंग कर दे तो मुचकन्द की आँखों से अग्नि बाण छूटते हैं तथा सामने वाला तुरन्त मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, आप सावधान रहना। यह कह कर श्री नारद जी चले गए।

कुछ समय उपरान्त श्री कृष्ण जी को छोटी उम्र में मथुरा के सिंहासन पर बैठा देख कर एक काल्यवन नामक राजा ने अठारह करोड़ सैना लेकर मथुरा पर आक्रमण कर दिया। श्री कृष्ण जी ने देखा कि दुश्मन की सैना बहु संख्या में है तथा न जाने कितने सैनिक मृत्यु को प्राप्त होंगे, क्यों न काल्यवन का वध मुचकन्द से करवा दूं। यह विचार कर भगवान श्री कृष्ण जी ने काल्यवन को युद्ध के लिए ललकारा तथा युद्ध छोड़ कर(क्षत्री धर्म को भूलकर विनाश टालना आवश्यक जानकर) भाग लिये और उस गुफा में प्रवेश किया जिसमें मुचकन्द सोया हुआ था। मुचकन्द के शरीर पर अपना पीताम्बर(पीली चद्दर) डाल कर श्री कृष्ण जी गुफा में गहरे जाकर छुप गए। पीछे-पीछे काल्यवन भी उसी गुफा में प्रवेश कर गया। मुचकन्द को श्री कृष्ण कर समझ उसका पैर पकड़ कर घुमा दिया तथा कहा कि कायर तुझे छुपे हुए को थोड़े ही छोडूंगा। पीड़ा के कारण मुचकन्द की निंद्रा भंग हुई, नेत्रों से अग्नि बाण निकलें तथा काल्यवन का वध हुआ। काल्यवन के सैनिक तथा मंत्री अपने राजा के शव को लेकर वापिस चल पड़े। क्योंकि युद्ध में राजा की मृत्यु सैना की हार मानी जाती थी। जाते हुए कह गए कि हम नया राजा नियुक्त करके शीघ्र ही आयेंगे तथा श्री कृष्ण तुझे नहीं छोड़ेंगे।

श्री कृष्ण जी ने अपने मुख्य अभियन्ता (चीफ इन्जिनियर) श्री विश्वकर्मा जी को बुला कर कहा कि कोई ऐसा स्थान खोजो, जिसके तीन तरफ समुद्र हो तथा एक ही रास्ता(द्वार) हो। वहाँ पर अति शीघ्र एक द्वारिका(एक द्वार वाली) नगरी बना दो। हम शीर्घ ही यहाँ से प्रस्थान करेंगे। ये मूर्ख लोग यहाँ चैन से नहीं जीने देंगे। श्री कृष्ण जी इतने नेक आत्मा तथा युद्ध विपक्षी थे कि अपने क्षत्रीत्व को भी दाव पर रख कर जुल्म को टाला। क्या फिर वही श्री कृष्ण जी अपने प्यारे साथी व सम्बन्धी को ऐसी बुरी सलाह दे सकते हैं तथा स्वयं युद्ध न करने का वचन करने वाले दूसरे को युद्ध की प्रेरणा दे सकते हैं? अर्थात् कभी नहीं। गीता अध्याय 18 श्लोक 43 में गीता ज्ञान दाता ने क्षत्री के स्वभाविक कर्मों का उल्लेख करते हुए कहा है कि ''युद्ध से न भागना'' आदि-२ क्षत्री के स्वभाविक कर्म है। इस से भी सिद्ध हुआ कि गीता जी का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने नहीं बोला। क्योंकि श्री कृष्ण जी स्वयं क्षत्री होते हुए कालयवन के सामने से युद्ध से भाग गए थे। व्यक्ति स्वयं किए कर्म के विपरीत अन्य को राय नहीं देता। न उसकी राय श्रोता को ठीक जचेगी। वह उपहास का पात्र बनेगा। यह गीता ज्ञान ब्रह्म(काल) ने प्रेतवत् श्री कृष्ण जी में प्रवेश करके बोला था। भगवान श्री कृष्ण रूप में स्वयं श्री विष्णु जी ही अवतार धार कर आए थे।

एक समय श्री भृगु ऋषि ने आराम से बैठे भगवान श्री विष्णु जी(श्री कृष्ण जी) के सीने में लात घात किया। श्री विष्णु जी ने श्री भृगु ऋषि जी के पैर को सहलाते हुए कहा कि 'हे ऋषिवर! आपके

कोमल पैर को कहीं चोट तो नहीं आई, क्योंकि मेरा सीना तो कठोर पत्थर जैसा है।' यदि श्री विष्णु जी(श्री कृष्ण जी) युद्ध प्रिय होते तो सुदर्शन चक्र से श्री भृगु जी के इतने टुकड़े कर सकते थे कि गिनती न होती।

वास्तविकता यह है कि काल भगवान जो इक्कीस ब्रह्मण्ड का प्रभु है, उसने प्रतिज्ञा की है कि मैं स्थूल शरीर में व्यक्त(मानव सदृश अपने वास्तविक) रूप में सबके सामने नहीं आऊँगा। उसी ने सूक्ष्म शरीर बना कर प्रेत की तरह श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके पवित्र गीता जी का ज्ञान तो सही(वेदों का सार) कहा, परन्तु युद्ध करवाने के लिए भी अटकल बाजी में कसर नहीं छोड़ी। काल(ब्रह्म) कौन है? यह जानने के लिए कृप्या पढ़िए सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ नं. 15 पर।

जब तक महाभारत का युद्ध समाप्त नहीं हुआ तब तक ज्योति निरंजन (काल - ब्रह्म - क्षर पुरुष) श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश रहा तथा युधिष्ठिर जी से झूठ बुलवाया कि कह दो कि अश्वत्थामा मर गया, श्री बबरु भान(खाटू श्याम जी) का शीश कटवाया तथा रथ के पहिए को हथियार रूप में उठाया, यह सर्व काल ही का किया-कराया उपद्रव था, प्रभु श्री कृष्ण जी का नहीं। महाभारत का युद्ध समाप्त होते ही काल भगवान श्री कृष्ण जी के शरीर से निकल गया। श्री कृष्ण जी ने श्री युधिष्ठिर जी को इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) की राजगद्दी पर बैठाकर द्वारिका जाने को कहा। तब अर्जुन आदि ने प्रार्थना की कि हे श्री कृष्ण जी! आप हमारे पूज्य गुरुदेव हो, हमें एक सतसंग सुना कर जाना, ताकि हम आपके सद्वचनों पर चल कर अपना आत्म-कल्याण कर सकें।

यह प्रार्थना स्वीकार करके श्री कृष्ण जी ने तिथि, समय तथा स्थान निहित कर दिया। निश्चित तिथि को श्री अर्जुन ने भगवान श्री कृष्ण जी से कहा कि प्रभु आज वही पवित्र गीता जी का ज्ञान ज्यों का त्यों सुनाना, क्योंकि मैं बुद्धि के दोष से भूल गया हूँ। तब श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे अर्जुन तू निश्चय ही बड़ा श्रद्धाहीन है। तेरी बुद्धि अच्छी नहीं है। ऐसे पवित्र ज्ञान को तूं क्यों भूल गया ? फिर स्वयं कहा कि अब उस पूरे गीता ज्ञान को मैं नहीं कह सकता अर्थात् मुझे ज्ञान नहीं। कहा कि उस समय तो मैंने योग युक्त होकर बोला था। विचारणीय विषय है कि यदि भगवान श्री कृष्ण जी युद्ध के समय योग युक्त हुए होते तो शान्ति समय में योग युक्त होना कठीन नहीं था। जबकि श्री व्यास जी ने वही पवित्र गीता जी का ज्ञान वर्षों उपरान्त ज्यों का त्यों लिपिबद्ध कर दिया। उस समय वह ब्रह्म(काल-ज्योति निरंजन) ने श्री व्यास जी के शरीर में प्रवेश कर के पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी को लिपिबद्ध कराया, जो वर्तमान में आप के कर कमलों में है।

प्रमाण के लिए संक्षिप्त महाभारत पृष्ठ नं. 667 तथा पुराने के पृष्ठ नं. 1531 पर :-

न शक्यं तन्मया भूयस्तथा वक्तुमशेषतः।।
परं हि ब्रह्म कथितं योगयुक्तेन तन्मया।
(महाभारत, आश्रवः **1612-13**)

भगवान बोले - 'वह सब-का-सब उसी रूपमें फिर दुहरा देना अब मेरे वशकी बात नहीं है। उस समय मैंने योगयुक्त होकर परमात्मतत्वका वर्णन किया था।'

संक्षिप्त महाभारत द्वितीय भाग के
पृष्ठ नं. **1531** से सहाभार :

('श्रीकृष्णका अर्जुनसे गीता का विषय पूछना सिद्ध महर्षि वैशम्पायन और काश्यपका संवाद') - पाण्डुनन्दन अर्जुन श्रीकृष्णके साथ रहकर बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने एक बार उस रमणीय सभाकी ओर दृष्टि डालकर भगवान्से यह वचन कहा --'देवकीनन्दन ! जब युद्धका अवसर उपस्थित था, उस समय मुझे आपके माहात्म्यका ज्ञान और ईश्वरीय स्वरूपका दर्शन हुआ था, किंतु केशव ! आपने स्नेहवश पहले मुझे जो ज्ञानका उपदेश किया था, वह सब इस समय बुद्धिके दोषसे भूल गया है। उन विषयोंको सुननेके लिये बारंबार मेरे मनमें उत्कण्ठा होती है, इधर, आप जल्दी ही द्वारका जानेवाले हैं। अतः पुनः वह सब विषय मुझे सुना दीजिये।

वैशम्पायनजी कहते हैं --अर्जुनके ऐसा कहनेपर वक्ताओं में श्रेष्ठ महातेजस्वी भगवान् श्रीकृष्णने उन्हें गलेसे लगाकर इस प्रकार उत्तर दिया।

श्रीकृष्ण बोले --अर्जुन ! उस समय मैंने तुम्हें अत्यन्त गोपनीय विषयका श्रवण कराया था, अपने स्वरूपभूत धर्म सनातन पुरुषोत्तमतत्त्वका परिचय दिया था और (शुक्ल-कृष्ण गतिका निरूपण करते हुए) नित्य लोकोंका भी वर्णन किया था। किंतु तुमने जो अपनी नासमझीके कारण उस उपदेशको याद नहीं रक्खा यह जानकर मुझे बड़ा खेद हुआ है। उन बातोंका अब पूरा-पूरा स्मरण होना सम्भव नहीं जान पड़ता। पाण्डुनन्दन ! निश्चय ही तुम बड़े श्रद्धाहीन हो, तुम्हारी बुद्धि अच्छी नहीं जान पड़ती। अब मेरे लिये उस उपदेशको ज्यों-का-त्यों दुहरा देना कठिन है, क्योंकि उस समय योगयुक्त होकर मैंने परमात्मतत्त्वका वर्णन किया था। (अधिक जानकारी के लिए पढ़ें - 'संक्षिप्त महाभारत द्वितीय भाग')

विचार करें :- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री कृष्ण जी ने श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान नहीं बोला, यह तो काल (ज्योति निरंजन अर्थात् ब्रह्म) ने बोला था।

अन्य प्रमाण :- (1) कुछ समय उपरान्त श्री युधिष्ठिर जी को भयंकर स्वपन आने लगे। श्री कृष्ण जी से कारण तथा समाधान पूछा तो बताया कि तुमने युद्ध में जो पाप किए हैं वह नर संहार का दोष तुम्हें दुःख दाई हो रहा है। इसके लिए एक यज्ञ करो। श्री कृष्ण जी के मुख कमल से यह वचन सुन कर श्री अर्जुन को बहुत दुःख हुआ तथा मन ही मन विचार करने लगा कि भगवान श्री कृष्ण जी पवित्र गीता बोलते समय तो कह रहे थे कि अर्जुन तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा, तूं युद्ध कर ले(पवित्र गीता अध्याय 2 श्लोक 37-38)। यदि युद्ध में मारा भी गया तो स्वर्ग का सुख भोगेगा, अन्यथा युद्ध में जीत कर पृथ्वी के राज्य का आनन्द लेगा। अर्जुन ने विचार किया कि जो समाधान दुःख निवारण का श्री कृष्ण जी ने बताया है इसमें करोड़ों रूपया व्यय होना है। जिससे बड़े भाई युधिष्ठिर का कष्ट निवारण होगा। यदि मैं श्री कृष्ण जी से वाद-विवाद करूंगा कि आप पवित्र गीता जी का ज्ञान देते समय तो कह रहे थे कि तुम्हें पाप नहीं लगेगा। अब उसके विपरित कह रहे हो। इससे मेरा बड़ा भाई यह न सोच बैठे कि करोड़ों रूपये के खर्च को देख कर अर्जुन बौखला गया है तथा मेरे कष्ट निवार्ण से प्रसन्न नहीं है। इसलिए मौन रहना उचित जान कर सहर्ष स्वीकृति दे दी कि जैसा आप कहोगे वैसा ही होगा। श्री कृष्ण जी ने उस यज्ञ की तिथि निर्धारित कर दी। वह यज्ञ भी श्री सुदर्शन स्वपच के भोजन खाने से सफल हुई। (यज्ञ का प्रकरण देखें इसी पवित्र पुस्तक के पृष्ठ नं. 463 पर)

कुछ समय उपरान्त ऋषि दुर्वासा जी के शापवश सर्व यादव कुल विनाश हो गया, श्री कृष्ण भगवान के पैर के तलुवे में एक शिकारी (जो त्रेतायुग में सुग्रीव के भाई बाली की ही आत्मा थी) ने विषाक्त तीर मार दिया। तब पाँचों पाण्डवों के घटना स्थल पर पहुँच जाने के उपरान्त श्री कृष्ण जी ने कहा कि आप मेरे शिष्य हो मैं आप का धार्मिक गुरु भी हूँ। इसलिए मेरी अन्तिम आज्ञा सुनो। एक तो यह है कि अर्जुन, द्वारिका की सर्व स्त्रियों को इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) ले जाना,

क्योंकि यहाँ कोई नर नहीं बचा है तथा दूसरे आप सर्व पाण्डव राज्य त्याग कर हिमालय में साधना करके शरीर को गला देना। क्योंकि तुमने महाभारत के युद्ध के दौरान जो हत्याऐं की थी, तुम्हारे शीश पर वह पाप बहुत भयंकर है। उस समय अर्जुन अपने आप को नहीं रोक सका तथा कहा प्रभु वैसे तो आप ऐसी स्थिति में हैं कि मुझे ऐसी बातें नहीं करनी चाहिऐं, परन्तु प्रभु यदि आज मेरी शंका का समाधान नहीं हुआ तो मैं चैन से मर भी नहीं पाऊँगा। पूरा जीवन रोता रहूँगा। श्री कृष्ण जी ने कहा अर्जुन पूछ ले जो कुछ पूछना है, मेरी अन्तिम घड़ियाँ हैं। श्री अर्जुन ने आँखों में आंसू भर कर कहा कि प्रभु बुरा न मानना। जब आपने पवित्र गीता जी का ज्ञान कहा था उस समय मैं युद्ध करने से मना कर रहा था। आपने कहा था कि अर्जुन तेरे दोनों हाथों में लड्डू हैं। यदि युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग को प्राप्त होगा और यदि विजयी हुआ तो पृथ्वी का राज्य भोगेगा तथा तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा। हमने आप ही की देख-रेख व आज्ञानुसार युद्ध किया(प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 2 श्लोक 37-38)। हे भगवन ! हमारे तो एक हाथ में भी लड्डू नहीं रहा। न तो युद्ध में मर कर स्वर्ग प्राप्ति हुई तथा अब राज्य त्यागने का आदेश आप दे रहे हैं, न ही पृथ्वी के राज्य का आनन्द ही भोग पाए। ऐसा छल युक्त व्यवहार करने में आपका क्या हित था? अर्जुन के मुख से यह वचन सुन कर युधिष्ठिर जी ने कहा कि अर्जुन ऐसी स्थिति में जब कि भगवान अन्तिम स्वांस गिन रहे हैं आपका शिष्टाचार रहित व्यवहार शोभा नहीं देता। श्री कृष्ण जी ने कहा अर्जुन आज मैं अन्तिम स्थिति में हूँ, तुम मेरे अत्यन्त प्रिय हो, आज वास्तविकता बताता हूँ कि कोई खलनायक जैसी और शक्ति है जो अपने को यन्त्र की तरह नचाती रही, मुझे कुछ मालूम नहीं मैंने गीता में क्या बोला था। परन्तु अब मैं जो कह रहा हूँ वह तुम्हारे हित में है। श्री कृष्ण जी यह वचन अश्रुयुक्त नेत्रों से कह कर प्राण त्याग गए। उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि पवित्र गीता जी का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने नहीं कहा। यह तो ब्रह्म(ज्योति निरंजन-काल) ने बोला है, जो इक्कीश ब्रह्मण्ड का स्वामी है। काल(ब्रह्म) कौन है? यह जानने के लिए सृष्टि रचना पढ़े।

श्री कृष्ण सहित सर्व यादवों का अन्तिम संस्कार कर अर्जुन को छोड़ कर चारों भाई इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) चले गए। पीछे से अर्जुन द्वारिका की स्त्रियों को लिए आ रहा था। रास्ते में जंगली लोगों ने सर्व गोपियों को लूटा तथा कुछेक को भगा ले गए तथा अर्जुन को पकड़ कर पीटा। अर्जुन के हाथ में वही गांडीव धनुष था जिससे महाभारत के युद्ध में अनगिन हत्याऐं कर डाली थी, वह भी नहीं चला। तब अर्जुन ने कहा कि यह श्री कृष्ण वास्तव में झूठा तथा कपटी था। जब युद्ध में पाप करवाना था तब तो मुझे शक्ति प्रदान कर दी, एक तीर से सैकड़ों योद्धाओं को मार गिराता था और आज वह शक्ति छीन ली, खड़ा-खड़ा पिट रहा हूँ। इसी विषय में पूर्ण ब्रह्म कबीर साहेब (कविर्देव) जी का कहना है कि श्री कृष्ण जी कपटी व झूठे नहीं थे। यह सर्व जुल्म काल(ज्योति निरंजन) कर रहा है। जब तक यह आत्मा कबीर परमेश्वर(सतपुरुष) की शरण में पूरे सन्त(तत्वदर्शी) के माध्यम से नहीं आ जाएगी, तब तक काल इसी तरह कष्ट पर कष्ट देता रहेगा। पूर्ण जानकारी तत्वज्ञान से होती है। इसीलिए काल कौन है? यह जानने के लिए कृपया पढ़िए सृष्टि रचना।

अन्य प्रमाण :-

(2) गीता अध्याय 10 श्लोक 9 से 11 में गीता ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि जो श्रद्धालु मुझ ब्रह्म का ही निरन्तर चिन्तन करते रहते हैं उनके अज्ञान को नष्ट करने के लिए में ही उनके अन्दर(आत्मभावस्थः) जीवात्मा की तरह बैठकर शास्त्रों का ज्ञान देता हूँ।

(3) श्री विष्णु पुराण(गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के चतुर्थ अंश अध्याय 2 श्लोक 21 से 26 में पृष्ठ 233 पर लिखा है कि देवताओं और राक्षसों के युद्ध में देवताओं की प्रार्थना पर भगवान विष्णु ने कहा है कि मैं राजर्षि शशाद के शरीर में कुछ समय प्रवेश करके असुरों का नाश करूंगा।

(4) श्री विष्णु पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के चतुर्थ अंश अध्याय 3 श्लोक 4 से 6 में पृष्ठ 242 पर लिखा है कि ''नागेश्वरों की प्रार्थना स्वीकार करके श्री विष्णु जी ने कहा कि मैं मान्धाता के पुत्र पुरूकुत्स के शरीर में प्रवेश करके गन्धर्वों का नाश करूंगा। {यहाँ पर विष्णु रूप में काल(ब्रह्म) बोल रहा है}

विशेष विचार :- उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण ने नहीं बोला, यह तो श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश होकर ब्रह्म(काल अर्थात् ज्योति निरंजन) ने बोला था।

क्योंकि वह उपरोक्त नियम से किसी भी योग्य व्यक्ति में प्रेतवत् प्रवेश करके अपना कार्य सिद्ध करता है। पश्चात् निकल जाता है जैसे अर्जुन में प्रवेश करके विरोधी सेना मार डाली पश्चात् निकल गया। फिर अर्जुन को जंगली व्यक्तियों ने मारा-पीटा। अर्जुन में पूर्व वाली शक्ति नहीं रही।

"काल की परिभाषा"

पवित्र विष्णु पुराण में वर्णन है कि भगवान विष्णु (महाविष्णु रूप में काल) का प्रथम रूप तो पुरुष (प्रभु जैसा) है परन्तु उसका परम रूप 'काल' है। जब भगवान विष्णु (काल जो महाविष्णु रूप में ब्रह्मलोक में रहता है तथा प्रकृति अर्थात् दुर्गा को अपनी पत्नी महालक्ष्मी रूप में रखता है) अपनी प्रकृति (दुर्गा) से अलग हो जाता है तो काल रूप में प्रकट हो जाता है। (विष्णु पुराण अध्याय 2 पृष्ठ 4-5 गीता प्रैस गोरख पुर से प्रकाशित, अनुवादक हैं श्री मुनिलाल गुप्त)

विशेष :- उपरोक्त विवरण का भावार्थ है कि यह महाविष्णु अर्थात् काल पुरुष पहले तो लगता है कि यह दयावान भगवान है। जैसे खाने के लिए अन्न, मेवा व फल आदि कितने स्वादिष्ट प्रदान किए हैं तथा पीने के लिए दूध, जल कितने स्वादिष्ट तथा प्राण दायक प्रदान किए हैं। कितनी अच्छी वायु जीने के लिए चला रखी है, कितनी विस्तृत पृथ्वी रहने तथा घूमने के लिए प्रदान की है, फिर पति-पत्नी का योग, पुत्रों व पुत्रियों की प्राप्ति से लगता है कि यह तो बड़ा दयावान प्रभु है। जिसके लोक में हम रह रहे हैं।

महाविष्णु का वास्तविक रूप काल कैसे है :- किसी के पुत्र की मृत्यु, किसी की पुत्री की मृत्यु, किसी के दोनों पुत्रों की मृत्यु, किसी का पूरा परिवार दुर्घटना में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। किसी क्षेत्र में बाढ़ आकर हजारों व्यक्तियों की परिवार सहित मृत्यु, किसी क्षेत्र में भूकंप से लाखों व्यक्ति सपरिवार मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रकार इस विष्णु (महाविष्णु रूप में ज्योति निरंजन) का वास्तविक रूप काल है। क्योंकि ज्योति निरंजन (काल) शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करता है। इसलिए इसने अपने तीनों पुत्रों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) से उत्पत्ति, स्थिति व संहार करवाता है।

उदाहरण :- पूर्ण ब्रह्म कविर्देव ने अपने प्रिय सेवक श्री धर्मदास जी द्वारा काल की स्थिति पूछने पर बताया कि जैसे कसाई बकरे पालता है। उन प्राणियों के चारे की व्यवस्था करता है,

पानी का प्रबन्ध करता है, गर्मी व सर्दी से बचने के लिए कुछ मकान आदि का भी प्रबन्ध करता है, जिससे वे अबोध बकरे समझते हैं कि हमारा स्वामी बहुत नेक है। हमारा कितना ध्यान रखता है। जब कसाई उनके पास आता है तो वे नर व मादा बकरे उसे अपना सुखदाई मालिक जान कर उसको प्यार जताने के लिए आगे वाले पैर उठाकर कसाई के शरीर को स्पर्श करते हैं, कुछ उसके पैरों को चाटते हैं। कुछ को वह स्वयं छूकर कमर पर हाथ लगा कर दबा दबा कर देखता है तो वे बकरे समझते हैं कि हमें प्यार दे रहा है। परन्तु कसाई देख रहा होता है कि इस बकरे में कितने किलोग्राम मास हो चुका है। जब मास लेने के लिए ग्राहक आता है तो उस समय कसाई नहीं देखता कि किसका बाप मर रहा है, किसकी बेटी या पुत्र या सर्व परिवार मर रहा है। उनको सुविधा देने का उसका यही उद्देश्य था। ठीक इसी प्रकार सर्व प्राणी काल(ब्रह्म) साधना करके काल आहार ही बने हैं। इससे छूटने की विधि आपको इसी पुस्तक में विस्तृत मिलेगी।

एक बहन ने मुझ दास का सतसंग सुना तथा बाद में अपनी दुःख भरी कथा सुनाई जो निम्न है :--

उस बहन ने कहा महाराज जी मैं विधवा हूँ। एक पुत्र की प्राप्ति होते ही मेरे पति की मृत्यु हो गई। मैंने अपने पुत्र की परवरिश बहुत ही चाव तथा प्यार के साथ इस दृष्टि कोण से की कि कहीं पुत्र को पिता का अभाव महसूस न हो जाए। उसने जो सम्भव वस्तु की प्रार्थना की मैंने दुःखी सुखी होकर उपलब्ध करवाई। जब वह ग्यारहवीं कक्षा में कॉलेज में जाने लगा तो मोटर साईकिल की जिद कर ली। दुर्घटना के भय से मैंने बहुत मना किया, परन्तु पुत्र ने खाना नहीं खाया। तब मैंने उसके प्यारवश होकर मोटर साईकिल जैसे-तैसे करके मोल लेकर दे दी। मैंने दूसरी शादी भी इसी उद्देश्य से नहीं करवाई की कि कहीं मेरे पुत्र को कष्ट न हो जाए। मैंने अपने पुत्र को गर्म-गर्म खाना खिलाया। वह प्रतिदिन की तरह अपने एक दोस्त को उसके घर से मोटर साईकिल पर बैठाकर कॉलेज जाने के लिए चला गया।

मैंने शेष भोजन बनाया तथा स्वयं खाने के लिए भोजन डाल कर प्रथम ग्रास ही तोड़ा था इतने में मेरे पुत्र का दोस्त दौड़ा हुआ आया, उसको कुछ चोट लगी हुई थी। उसने कहा कि चाची भईया को दुर्घटना में बहुत ज्यादा चोट आई है। इतना सुनते ही हाथ का ग्रास थाली में गिर गया। नंगे पैरों उस बच्चे के साथ पागलों की तरह रोती हुई दौड़ कर उस स्थान पर गई जहाँ मेरे पुत्र की दुर्घटना हुई थी। वहाँ पर केवल क्षति ग्रस्त मोटर साईकिल पड़ी थी। उपस्थित व्यक्तियों ने बताया कि आपके पुत्र को हस्पताल लेकर गये हैं। मैं हस्पताल पहुँची तो डाक्टरों ने मृत घोषित कर दिया। मैंने हस्पताल की दीवार को टक्कर मारी, मेरा सिर फट गया, सात टांके लगे, बेहोश हो गई, लगभग दो घंटे में होश आया।

उस दिन के बाद सर्व भगवानों के चित्र घर से बाहर फैंक दिए तथा स्वपन में भी किसी भगवान को याद नहीं करती। क्योंकि मैंने अपने पुत्र की कुशलता के लिए लोकवेद अनुसार सर्व साधनाऐं की, परन्तु कुछ भी काम नहीं आई। आज आप का सतसंग जो सृष्टि रचना का प्रकरण आपने सुनाया तथा पवित्र गीता जी से भी बताया कि यह सर्व काल का जाल है, अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए कसाई की तरह सर्व प्राणियों को विवश किए हुए है। मेरी तो आज आंखें खुल गई। अब फिर मन करता है कि आपका उपदेश लेकर काल जाल से निकल जाऊं। उस बहन ने उपदेश लिया तथा अपना कल्याण करवाया।

मैंने उस बहन से पूछा आप क्या साधना करते थे?

उस बहन ने उत्तर दिया :- एक सुप्रसिद्ध संत का नाम लेकर कहा कि उस मूर्ख से दस वर्ष से उपदेश भी ले रखा था। उसके बताए अनुसार नाम जाप घण्टों किया करती थी। श्री विष्णु जी का सहस्त्रनामा का जाप भी करती थी। गीता जी का नित पाठ, पितर पूजा (श्राद्ध निकालना) करती थी। गांव में परम्परागत बाबा श्याम जी की पूजा भी करती थी। अष्टमी तथा सोमवार का व्रत भी करती थी। निकटतम मन्दिर में प्रतिदिन जाती थी। वर्ष में दो बार वैष्णों देवी के दर्शन करने जाती थी। गुड़गांव वाली माता की पूजा भी करती थी। नवरात्रों का व्रत भी किया करती थी। एक बहन ने कहा बाबा गरीबदास जी की पूजा करने तथा वहाँ छुड़ानी धाम(जिला झज्जर) पर जाने से कोई आपत्ति नहीं आ सकती। वहाँ भी छठे महीने मेला भरता है जाया करती थी तथा पाठ भी करवाती थी। और क्या बताऊँ? बाबा हरिदास जी झाड़ौदा वाले की भी पूजा करती थी। मुझे कोई लाभ नहीं हुआ। पहले तो लगता था कि मेरा परिवार सुखी है। जो उपरोक्त साधना का ही परिणाम है।

परन्तु अब आप के सतसंग से ज्ञान हुआ कि यह तो मेरा प्रारब्ध ही मिल रहा था। ये पूजायें पवित्र गीता जी में तथा पवित्र अमृत वाणी गरीबदास जी के सद्ग्रन्थ में वर्णित न होने से शास्त्र विरुद्ध थी। जिस कारण से कोई लाभ होना ही नहीं था। हमारा क्या दोष है? जो गुरु जी ने साधना बताई मैं तो तन-मन-धन से कर रही थी। अब पता चला कि वे गुरु नहीं है, वे तो नीम हकीम हैं। मानव जीवन के सब से बड़े शत्रु हैं। यदि मुझे यह सत्य साधना मिल जाती तो मेरा पुत्र नहीं मरता। क्योंकि मैंने आपके सेवकों के सुखों को देखा है तथा उन पर आने वाली भयंकर आपतियों को टलते देखा है। तब मैं आपका सतसंग सुनने आई हूं तथा आप का लगातार चार दिन तक सतसंग सुनकर आज उपदेश लेने की इच्छा हुई है। मैंने उस बहन से कहा कि जिन साधनाओं को आप कर रही थी वे सर्व शास्त्र विधि अनुसार नहीं थी, जिस कारण आपको परमेश्वर का सहयोग प्राप्त नहीं हुआ। यह तो आप ने स्वयं ही निर्णय लेकर बता दिया। क्योंकि आज तक आपको सत्संग ही प्राप्त नहीं हुआ था। जिसे आप सतसंग जान कर श्रवण करती थी वह सतसंग नहीं लोक वेद (सुना सुनाया शास्त्र विरुद्ध ज्ञान) था। जो आप किसी धाम पर जाती थी तथा पाठ करवाती थी। आदरणीय गरीबदास जी की पूजा करती थी। जब कि आदरणीय गरीबदास जी तो कहते हैं कि :-

सब पदवी के मूल हैं, सकल सिद्ध हैं तीर। दास गरीब सतपुरुष भजो, अविगत कला कबीर।।
अलल पंख अनुराग है, सुन्न मण्डल रहे थीर।दास गरीब उधारिया,सतगुरु मिलें कबीर।।
पूजें देई धाम को, शीश हलावें जो। गरीबदास साची कहैं, हद काफिर हैं सो।

उपरोक्त अमृतवाणी में प्रमाण है कि आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि मेरा उद्धार भी परमेश्वर कबीर(कविर्देव) ने किया तथा तुम भी उसी सर्वशक्तिमान कबीर(कविरमितौजा) परमेश्वर की ही भक्ति करो। उसके लिए कहा है कि पूर्ण संत जो कबीर परमेश्वर(कविर्देव) का कृपा पात्र हो, उससे उपदेश लेकर अपना कल्याण करवाओ। झूठे गुरुओं के आश्रित रहने से जीवन व्यर्थ होता है। उस शास्त्र विरुद्ध साधना बताने वाले नकली गुरु को त्याग देना चाहिये। उसके तो दर्शन भी अशुभ होते हैं। आदरणीय गरीबदास साहेब जी अपनी अमृतवाणी में कहते हैं कि :-

झूठे गुरु को लीतर लावैं, उसको निश्चय पीटे। उसके पीटे पाप नहीं है, घर से काढ़ घसीटे।।

उपरोक्त अमृतवाणी में आदरणीय गरीबदास साहेब जी शास्त्र विधि रहित साधना बता कर अनमोल मानव जन्म को नष्ट करने वाले नकली (झूठे) मार्ग दर्शकों (गुरुओं) के विषय में कह रहे हैं कि वे आप का जीवन नष्ट करने वाले हैं। उनसे तुरंत छुटकारा लेना चाहिये। घर में घुसने नहीं देना चाहिए। वे तो परमेश्वर कबीर (कविर्देव) के द्रोही हैं तथा काल के भेजे दूत हैं।

"अन् अधिकारी से यज्ञ व पाठ करवाना व्यर्थ है"

जिसको पूर्ण परमात्मा का मार्ग दर्शन करने का अधिकार नहीं है तथा उसके पास सत्य भक्ति तीन मंत्र की नहीं है, वह अन अधिकारी होता है। पूर्ण संत जो पूर्ण परमेश्वर की वास्तविक साधना बताता है उसे गुरु बना कर उसी के माध्यम से सर्व धार्मिक अनुष्ठान करवाना हितकर है।

कबीर गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान। गुरु बिन दोनों निष्फल हैं, पूछो वेद पुराण।।
गुरु बिन यज्ञ हवन जो करही, निष्फल जाएं कबहुं नहीं फलहीं।

एक बार राजा परिक्षित को सातवें दिन सर्प ने डसना था। उस समय सर्व ऋषियों ने यह निर्णय लिया कि राजा को सात दिन तक श्रीमद्भागवद सुधासागर का पाठ सुनाया जाये, ताकि राजा का मोह संसार से हट जाए। कौन ऐसा कथा करने वाला ऋषि है जिसके पाठ करने से राजा का कल्याण हो सके ?

विचार करें :- सातवें दिन पता लग जाना था कि कथा (पाठ) करने वाला अधिकारी है या नहीं। इसलिए पृथ्वी पर उपस्थित सर्व ऋषियों व महर्षियों ने पाठ (कथा) करने का कार्य स्वीकार नहीं किया। क्योंकि वे महापुरुष प्रभु के संविधान से परिचित थे, इसलिए राजा परिक्षित के जीवन से खिलवाड़ नहीं किया तथा जो ढोंगी थे वे इस डर से सामने नहीं आए कि सातवें दिन पोल खुल जायेगी। उस समय स्वर्ग से महर्षि सुखदेव जी बुलाए गए जो विमान में बैठ कर आए। आते ही श्री सुखदेव जी ने राजा परिक्षित जी से कहा कि राजन आप मेरे से उपदेश प्राप्त करो अर्थात् मुझे गुरु बनाओ तब कथा (पाठ) करने का फल प्राप्त होगा। राजा परिक्षित ने श्री सुखदेव जी को गुरु बनाया तब सात दिन श्री भागवत सुधासागर (श्री विष्णु उर्फ श्री कृष्ण जी की लीला) की कथा सुनाई। राजा को सर्प ने डसा। राजा की मृत्यु हो गई। सूक्ष्म शरीर में राजा परिक्षित अपने गुरु श्री सुखदेव जी के साथ विमान में बैठ कर स्वर्ग गए। क्योंकि पहले राजा बहुत धार्मिक होते थे, पुण्य करते रहते थे।

राजा परिक्षित ने श्री कृष्ण जी से उपदेश भी प्राप्त था। उन्हीं के मार्ग दर्शन अनुसार बहुत धर्म किया था। परन्तु बाद में कलयुग के प्रभाव से ऋषि भिंडी के गले में सर्प डालने से तथा अन्य मर्यादा हीन कार्य करने से राजा परिक्षित का उपदेश खण्ड हो गया था। उस समय न तो किसी ऋषि जी ने राजा को उपदेश दे कर शिष्य बनाने की हिम्मत की, क्योंकि वे गुरु बनने योग्य नहीं थे। उन्हें उपदेश देने का अधिकार नहीं था। केवल श्री कृष्ण जी ही उपदेश देते थे, जो पाण्डवों के भी गुरु जी थे तथा छप्पन (56) करोड़ यादवों के भी गुरु जी थे। राजा परिक्षित के पुण्यों के आधार से श्री सुखदेव जी गुरु बन कर उसको कथा सुनाकर संसार से आस्था हटवा कर केवल स्वर्ग ले गए। इतना लाभ राजा परिक्षित को हुआ। स्वर्ग का समय पूरा होने अर्थात् पुण्य क्षीण होने के उपरान्त राजा परिक्षित तथा सुखदेव जी भी नरक जायेंगे, फिर चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में नाना कष्ट उठायेंगे। जन्म-मृत्यु समाप्त नहीं हुआ अर्थात् मुक्त नहीं हुए।

वर्तमान के सन्तों व महन्तों को स्वयं ही ज्ञान नहीं कि हम जो शास्त्र विरुद्ध साधना कर तथा

करवा रहे हैं यह कितनी भयंकर कष्ट दायक दोनों (गुरु जी व शिष्यों) को होगी। इसलिए पुनर् विचार करना चाहिए तथा झूठे गुरुजी को तथा झूठी (शास्त्र विरुद्ध) पूजाओं को तुरन्त त्याग कर सत्य साधना प्राप्त करके आत्म कल्याण करवाना चाहिए। वह साधना मुझ दास के पास पूर्ण रूपेण उपलब्ध है।

सन्त रामपाल जी महाराज

❑❑❑

सृष्टि रचना

श्री देवी भागवत पुराण के पहले स्कन्ध में अध्याय 1 से 8 पृष्ठ 21 से 43 पर प्रमाण है। कि महर्षि व्यास जी के परम शिष्य श्री सूत जी से शौनकादि ऋषियों ने प्रश्न किया कि हे सूत जी! कृपा आप देवी पुराण की पावन कथा सुनाऐं। श्री सूत जी ने कहा (पृष्ठ 23) पौराणिकों एवं वैदिकों का कथन है तथा यह भली–भांति विदित भी है कि ब्रह्मा जी इस अखिल जगत् के सृष्टा हैं। साथ ही वे यह भी कहते हैं कि ब्रह्मा जी का जन्म भगवान् विष्णु जी के नाभि कमल से हुआ है। फिर ऐसी स्थिती में ब्रह्मा जी स्वतन्त्र सृष्टा कैसे ठहरे ? भगवान् विष्णु को स्वतन्त्र सृष्टा नहीं कह सकते क्योंकि वे शेष नाग की शय्या पर सोए थे। नाभि से कमल निकला और उस पर ब्रह्मा जी प्रकट हुए। किन्तु वे श्री विष्णु जी भी तो किसी आधार पर अवलम्बित थे। उनके आधार भूत क्षीर समुन्द्र को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं माना जा सकता क्योंकि वह रस है, रस बिना पात्र के ठहरता नहीं कोई न कोई उसका आधार रहना ही चाहिए। अतएव चराचर जगत् की आधार भूता भगवती जगदम्बिका ही सृष्टा रूप में निश्चित हुई'' (देवी पुराण के पृष्ठ 41 पर लिखा है :–) ऋषियों ने पूछा :– महाभाग सूत जी ! इस कथा प्रसंग को जानकर तो हमें बड़ा ही आश्चर्य हो रहा है, क्योंकि वेद, शास्त्र, पुराण और विज्ञ जनों ने सदा यही निर्णय किया है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर–ये ही तीनों सनातन देवता हैं। इनसे बढ़कर इस ब्रह्माण्ड में दूसरा कोई देवता है ही नहीं। आपने इस सर्व की सृष्टि कारण भूत जिस जगदम्बिका (दुर्गा) के विषय में कहा है वह कौन शक्ति है उसकी सृष्टि (उत्पति) कैसे हुई। यह सब बताने की कृपा करें।

सूत जी कहते हैं :– मुनिवरों ! चराचर सहित इस त्रिलोकी में कौन ऐसा है जो इस संदेह को दूर कर सके। ब्रह्मा जी के पुत्र नारद, कपिल आदि दिव्य महापुरूष भी इस प्रश्न का समाधान करने में निरूपाय हो जाते हैं। महानुभावों ! यह बड़ा ही गहन और विचारणीय है। इस सम्बन्ध मैं क्या कह सकता हूँ ?

(श्री देवीपुराण के तीसरे स्कन्ध के अध्याय 13 पृष्ठ 115 पर) नारद जी ने अपने पिता ब्रह्मा जी से पूछा ''पिता जी! यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कहां से उत्पन्न हुआ है। विभो ! अपने सम्यक प्रकार से इसकी रचना की है ? अथवा विष्णु इस विश्व के रचियता हैं ? या शंकर ने इसकी सृष्टि की है ? जगत् प्रभो ! आप विश्व की आत्मा हैं। सच्ची बात बताने की कृपा करें। किस देवता की पूजा करनी चाहिए ? तथा कौन देवता (प्रभु) सबसे बड़ा एवं सर्व समर्थ है ? इन सभी प्रश्नों का समाधान करके मेरे हृदय के संदेह को दूर करने की कृपा कीजिए। ब्रह्मा जी ने कहा – बेटा मैं इस प्रश्न का क्या उत्तर दूँ ? यह प्रश्न बड़ा ही जटिल है। इस संसार में कोई भी रागी पुरूष ऐसा नहीं है जिसे यह रहस्य विदित हो। (श्री देवी पुराण से लेख समाप्त)

प्रिय पाठक जनों ! जिस सृष्टि रचना के विषय में तथा सर्व समर्थ प्रभु के विषय में न व्यास जी जानते हैं न श्री ब्रह्मा जी। उस रहस्य को इस सृष्टि रचना के उल्लेख में निम्न पढ़ें :-

प्रभु प्रेमी आत्माऐं प्रथम बार निम्न सृष्टि की रचना को पढ़ेंगे तो ऐसे लगेगा जैसे दन्त कथा हो, परन्तु सर्व पवित्र सद्ग्रन्थों के प्रमाणों को पढ़कर दाँतों तले ऊँगली दबाऐंगे कि यह वास्तविक अध्यात्मिक अमृत ज्ञान कहाँ छुपा था? कृप्या धैर्य के साथ पढ़ते रहिए तथा इस अमृत ज्ञान को सुरक्षित रखिए। आप की एक सौ एक पीढ़ी तक काम आएगा। पवित्रात्माऐं कृप्या सत्यनारायण (अविनाशी प्रभु अर्थात् सतपुरुष) द्वारा रची सृष्टि रचना अर्थात् अपने द्वारा निर्मित सर्व लोकों की रचना का वास्तविक ज्ञान पढ़ें।

1. इस सृष्टी रचना में सतपुरुष, सतलोक का स्वामी (प्रभु), अलख पुरुष, अलख लोक का स्वामी (प्रभु), अगम पुरुष अगम लोक का स्वामी (प्रभु) तथा अनामी पुरुष अनामी लोक का स्वामी (प्रभु) तो एक ही पूर्ण ब्रह्म है, जो वास्तव में अविनाशी प्रभु है। जो भिन्न-2 रूप धारण

परमेश्वर कबीर साहेब के असंख्य ब्रह्मण्डों का लघु चित्र

अनामी लोक : इस लोक में आत्मा और परमात्मा एक रूप होकर कबीर साहेब ही अनामी रूप में है। जैसे मिट्टी के ढले (छोटे-छोटे टुकड़े) हो जाते हैं। फिर वर्षा होने पर एक पृथ्वी बन जाती है, अलग अस्तित्व नहीं रहता।

अगम लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अगम पुरूष रूप में रहते हैं।

अलख लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अलख पुरूष रूप में रहते हैं।

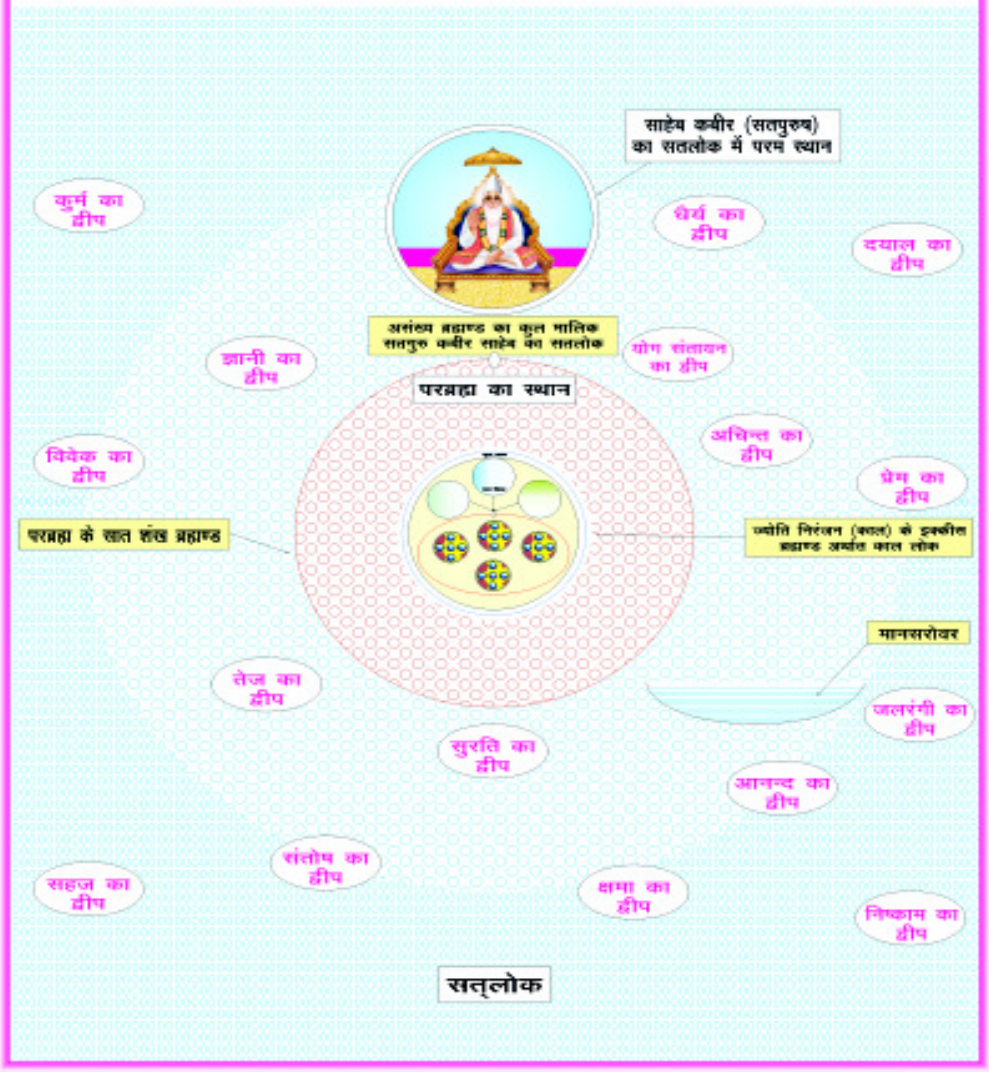

करके अपने चारों लोकों में रहता है। जिसके अन्तर्गत असंख्य ब्रह्मण्ड आते हैं।

2. परब्रह्म :- यह केवल सात संख ब्रह्मण्ड का स्वामी (प्रभु) है। यह अक्षर पुरुष भी कहलाता है। परंतु यह तथा इसके ब्रह्मण्ड भी वास्तव में अविनाशी नहीं है।

3. ब्रह्म :- यह केवल इक्कीस ब्रह्मण्ड का स्वामी (प्रभु) है। इसे क्षर पुरुष, ज्योति निरंजन, काल आदि उपमा से जाना जाता है। यह तथा इसके सर्व ब्रह्मण्ड नाशवान हैं।

4. ब्रह्मा :- इसी ब्रह्म का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा कहलाता है तथा विष्णु मध्य वाला पुत्र है तथा शिव अंतिम तीसरा पुत्र है। ये तीनों ब्रह्म के पुत्र केवल एक ब्रह्मण्ड में एक विभाग (गुण) के स्वामी (प्रभु) हैं तथा नाशवान हैं। विस्तृत विवरण के लिए कृप्या पढ़ें निम्न लिखित सृष्टी रचना।

{कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया है। उसी ज्ञान को कृप्या पढ़िए लेखक के शब्दों में}

परमेश्वर कबीर जी द्वारा दिया ज्ञान लेखक के शब्दों में :- सर्व प्रथम केवल एक स्थान 'अनामी (अनामय) लोक' था। जिसे अकह लोक भी कहा जाता है पूर्ण परमात्मा उस अनामी अर्थात् अकह लोक में अकेला रहता था। उस परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है। सर्व आत्माऐं उस पूर्ण धनी के शरीर में समाई हुई थी। इसी कविर्देव का उपमात्मक (पदवी का) नाम अनामी पुरुष है (पुरुष का अर्थ प्रभु होता है। प्रभु ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप में बनाया है, इसलिए मानव का नाम भी पुरुष ही पड़ा है।) अनामी पुरूष के एक रोम कूप का प्रकाश असंख्य सूर्यों की रोशनी से भी अधिक है।

विशेष :- जैसे किसी देश के आदरणीय प्रधान मंत्री जी का शरीर का नाम तो अन्य होता है तथा पद का उपमात्मक (पदवी का) नाम प्रधानमंत्री होता है। कई बार प्रधानमंत्री जी अपने पास कई विभाग भी रख लेता है। तब जिस भी विभाग के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करता है तो उस समय उसी पद को लिखता है। जैसे गृहमंत्रालय के हस्ताक्षर करेगा तो अपने को गृह मंत्री लिखेगा। वहाँ उसी व्यक्ति के हस्ताक्षर की शक्ति प्रधान मंत्री रूप में किए हस्ताक्षर से कम होती है। जबकि व्यक्ति वही होता है इसी प्रकार कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की रोशनी में अंतर होता जाता है।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने नीचे के तीन और लोकों (अगमलोक, अलख लोक, सतलोक) की रचना शब्द (वचन) से की। यही पूर्णब्रह्म परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही अगम लोक में प्रकट हुआ तथा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अगम लोक का भी स्वामी है तथा वहाँ इनका उपमात्मक (पदवी का) नाम अगम पुरुष अर्थात् अगम प्रभु है। इसी प्रभु का मानव सदृश शरीर बहुत तेजोमय है। जिसके एक रोम कूप की रोशनी खरब सूर्य की रोशनी से भी अधिक है।

यह पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अलख लोक में प्रकट हुआ तथा स्वयं ही अलख लोक का भी स्वामी है तथा उपमात्मक (पदवी का) नाम अलख पुरुष भी इसी परमेश्वर का है तथा इस पूर्ण प्रभु का मानव सदृश शरीर तेजोमय (स्वर्ज्योति स्वयं प्रकाशित) है। एक रोम कूप की रोशनी अरब सूर्यों के प्रकाश से भी ज्यादा है।

यही पूर्ण प्रभु सतलोक में प्रकट हुआ तथा सतलोक का भी अधिपति यही है। इसलिए इसी का उपमात्मक (पदवी का) नाम सतपुरुष (अविनाशी प्रभु)है। इसी का नाम अकालमूर्ति - शब्द

स्वरूपी राम - पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। इसी सतपुरुष कविर्देव (कबीर प्रभु) का मानव सदृश शरीर तेजोमय है। जिसके एक रोमकूप का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के प्रकाश से भी अधिक है।

इस कविर्देव (कबीर प्रभु) ने सतपुरुष रूप में प्रकट होकर सतलोक में विराजमान होकर प्रथम सतलोक में अन्य रचना की।

एक शब्द (वचन) से सोलह द्वीपों की रचना की। फिर सोलह शब्दों से सोलह पुत्रों की उत्पत्ति की, एक मानसरोवर की रचना की जिसमें अमृत भरा। सोलह पुत्रों के नाम हैं :-(1) ''कूर्म'', (2)''ज्ञानी'', (3) ''विवेक'', (4) ''तेज'', (5) ''सहज'', (6) ''सन्तोष'', (7)''सुरति'', (8) ''आनन्द'', (9) ''क्षमा'', (10) ''निष्काम'', (11) 'जलरंगी' (12)''अचिन्त'', (13) ''प्रेम'', (14) ''दयाल'', (15) ''धैर्य'' (16) ''योग संतायन'' अर्थात् ''योगजीत''।

सतपुरुष कविर्देव ने अपने पुत्र अचिन्त को सत्यलोक की अन्य रचना का भार सौंपा तथा शक्ति प्रदान की। अचिन्त ने अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की शब्द से उत्पत्ति की तथा कहा कि मेरी मदद करना। अक्षर पुरुष स्नान करने मानसरोवर पर गया, वहाँ जल में प्रवेश करके स्नान करने लगा। शीतल जल में आनन्द आया तथा जल में ही सो गया (क्योंकि सतलोक में शरीर स्वांसों पर आधारित नहीं है) *लम्बे समय तक बाहर नहीं आया। तब अचिन्त की प्रार्थना पर अक्षर पुरुष को नींद से जगाने के लिए कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने उसी मानसरोवर से कुछ अमृत जल लेकर एक अण्डा बनाया तथा उस अण्डे में एक आत्मा प्रवेश की तथा अण्डे को मानसरोवर के अमृत जल में छोड़ा। अण्डे की गड़गड़ाहट से अक्षर पुरुष की निंद्रा भंग हुई। अण्डे को क्रोध से देखा जिस कारण से अण्डे के दो भाग हो गए। उसमें से ज्योति निंरजन (क्षर पुरुष) निकला जो आगे चलकर 'काल' कहलाया। इसका वास्तविक नाम ''कैल'' है। तब सतपुरुष (कविर्देव) ने आकाशवाणी की कि आप दोनों अचिंत के द्वीप में रहो। आज्ञा पाकर अक्षर पुरुष तथा क्षर पुरुष(कैल) दोनों अचिंत के द्वीप में रहने लगे। (बच्चों की नालायकी उन्हीं को दिखाई कि कहीं फिर प्रभुता की तड़फ न बन जाए, क्योंकि समर्थ बिन कार्य सफल नहीं होता) फिर पूर्ण धनी कविर्देव ने सर्व रचना स्वयं की। अपनी शब्द शक्ति से एक राजेश्वरी (राष्ट्री) शक्ति उत्पन्न की, जिससे सर्व ब्रह्मण्डों को स्थापित किया। इसी को पराशक्ति/परानन्दनी भी कहते हैं। सर्व आत्माओं को अपने ही अन्दर से अपनी वचन शक्ति से अपने मानव शरीर सदृश उत्पन्न किया। प्रत्येक हंस आत्मा का परमात्मा जैसा ही शरीर रचा जिसका तेज 16(सोलह) सूर्यों जैसा मानव सदृश ही है। परन्तु परमेश्वर के शरीर का करोड़ों सूर्यों से भी अधिक एक रोम कूप का प्रकाश है। बहुत समय उपरान्त क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने सोचा कि हम तीनों (अचिन्त - अक्षर पुरुष - क्षर पुरुष) एक द्वीप में रह रहे हैं तथा अन्य एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। मैं भी साधना करके अलग द्वीप प्राप्त करूँगा। ऐसा विचार करके एक पैर पर खड़ा होकर सत्तर (70) युग तक तप किया।*

"आत्माऐं काल के जाल में कैसे फंसी ?"

विशेष :- जब ब्रह्म (ज्योति निरंजन) तप कर रहा था हम सर्व आत्माऐं जो आज ज्योति निरंजन के इक्कीस ब्रह्मण्डों में रहते हैं इसकी साधना पर आसक्त हो गए तथा आत्मा से इसे चाहने लगे। अपने सुखदाई प्रभु से विमुख हो गए। जिस कारण से पतिव्रता पद से गिर गए।

पूर्ण प्रभु के बार-बार सावधान करने पर भी हमारी आसक्तता क्षर पुरुष से नहीं हटी। {यही प्रभाव आज भी काल सृष्टि में सर्व प्राणियों में विद्यमान है। जैसे नौजवान बच्चे फिल्मी स्टारों (अभिनेताओं तथा अभिनेत्रियों) की बनावटी अदाओं तथा अपने रोजगार उद्देश्य से कर रहे अभिनय पर अति आसक्त हो जाते हैं, रोकने से नहीं रूकते। यदि कोई अभिनेता या अभिनेत्री निकटवर्ती शहर में आ जाए तो देखें उन नादान बच्चों की भीड़ केवल दर्शन करने के लिए बहु संख्या में एकत्रित हो जाते हैं। 'लेना एक न देने दो' रोजी रोटी अभिनेता कमा रहे हैं, नौजवान बच्चे लुट रहे हैं। माता–पिता कितना ही समझाऐं किन्तु बच्चे नहीं मानते। कहीं न कहीं – कभी न कभी लुक–छिप कर जाते ही रहते हैं।}

पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) ने क्षर पुरुष से पूछा कि बोलो क्या चाहते हो? उसने कहा कि पिता जी यह स्थान मेरे लिए कम है, मुझे अलग से द्वीप प्रदान करने की कृपा करें। हक्का कबीर (सत् कबीर) ने उसे 21 (इक्कीस) ब्रह्मण्ड प्रदान कर दिए। कुछ समय उपरान्त ज्योति निरंजन ने सोचा इस में कुछ रचना करनी चाहिए। खाली ब्रह्मण्ड (प्लाट) किस काम के। यह विचार कर 70 युग तप करके पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) से रचना सामग्री की याचना की। सतपुरुष ने उसे तीन गुण तथा पाँच तत्व प्रदान कर दिए, जिससे ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने अपने ब्रह्मण्डों में कुछ रचना की। फिर सोचा कि इसमें जीव भी होने चाहिए, अकेले का दिल नहीं लगता। यह विचार करके 64 (चौसठ) युग तक फिर तप किया। पूर्ण परमात्मा कविर् देव के पूछने पर बताया कि मुझे कुछ आत्मा दे दो, मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा। तब सतपुरुष कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि हे ब्रह्म ! तेरे तप के प्रतिफल में मैं तुझे और ब्रह्मण्ड दे सकता हूँ, परन्तु अपनी प्रिय आत्माओं को किसी भी जप-तप साधना के फल रूप में नहीं दे सकता। हाँ, यदि कोई स्वइच्छा से तेरे साथ जाना चाहे तो वह जा सकता है। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुन कर ज्योति निरंजन उन आत्माओं के पास आया। जो पहले से ही उस पर आसक्त थे। वे आत्माऐं उसे चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गए। ज्योति निंरजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्मण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार से रमणिक स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सर्व हंसों ने जो आज 21 ब्रह्मण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं यदि पिता जी आज्ञा दें तो। तब क्षर पुरुष पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूंगा। क्षर पुरुष (कैल) तथा परम अक्षर पुरुष (कविरमितौजा) दोनों उन हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंस ब्रह्म के साथ जाना चाहता है हाथ ऊपर करके स्वीकृति दे। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल (ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्मण्डों में फंसी हैं उन) सर्व आत्माओं ने हाँ कर दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूंगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्मण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्मण्ड सतलोक में ही थे।

तत् पश्चात पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा उन सर्व आत्माओं को जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि

एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र

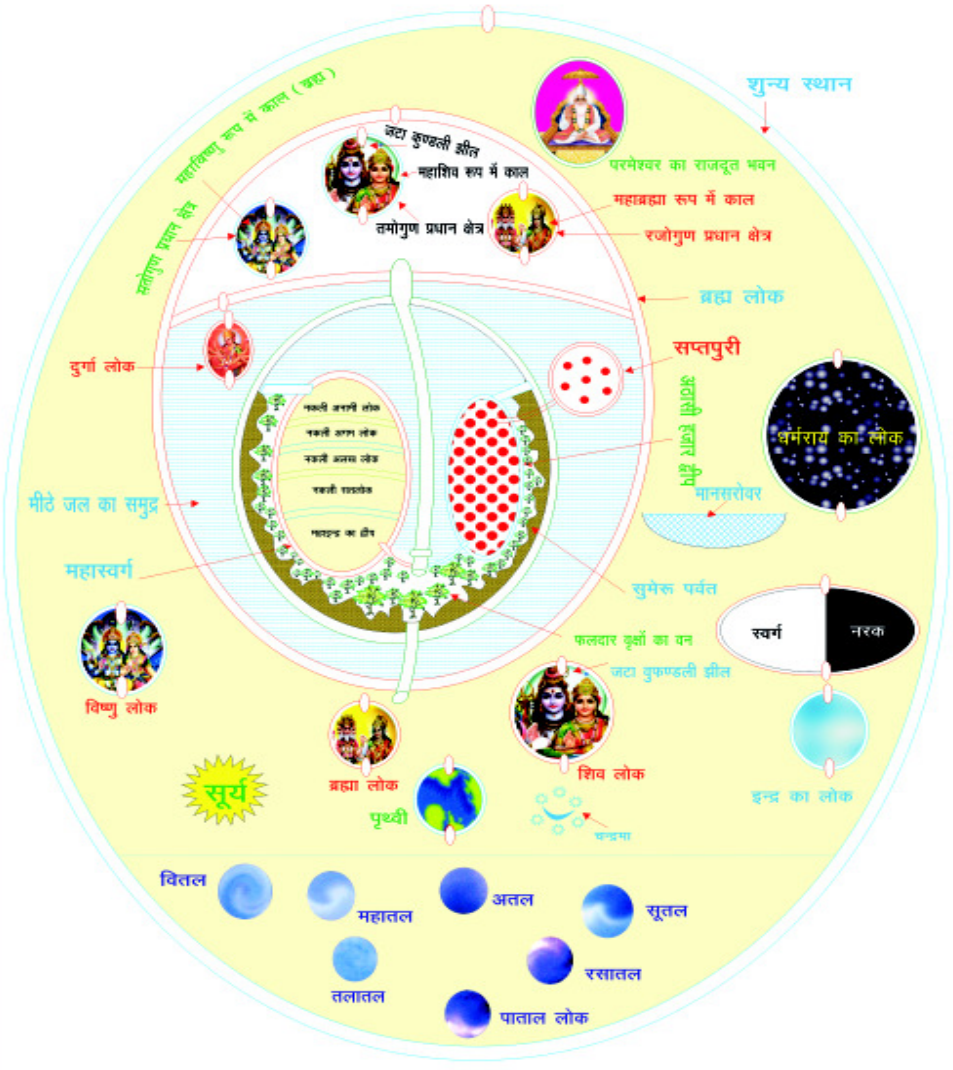

ब्रह्म लोक का लघु चित्र

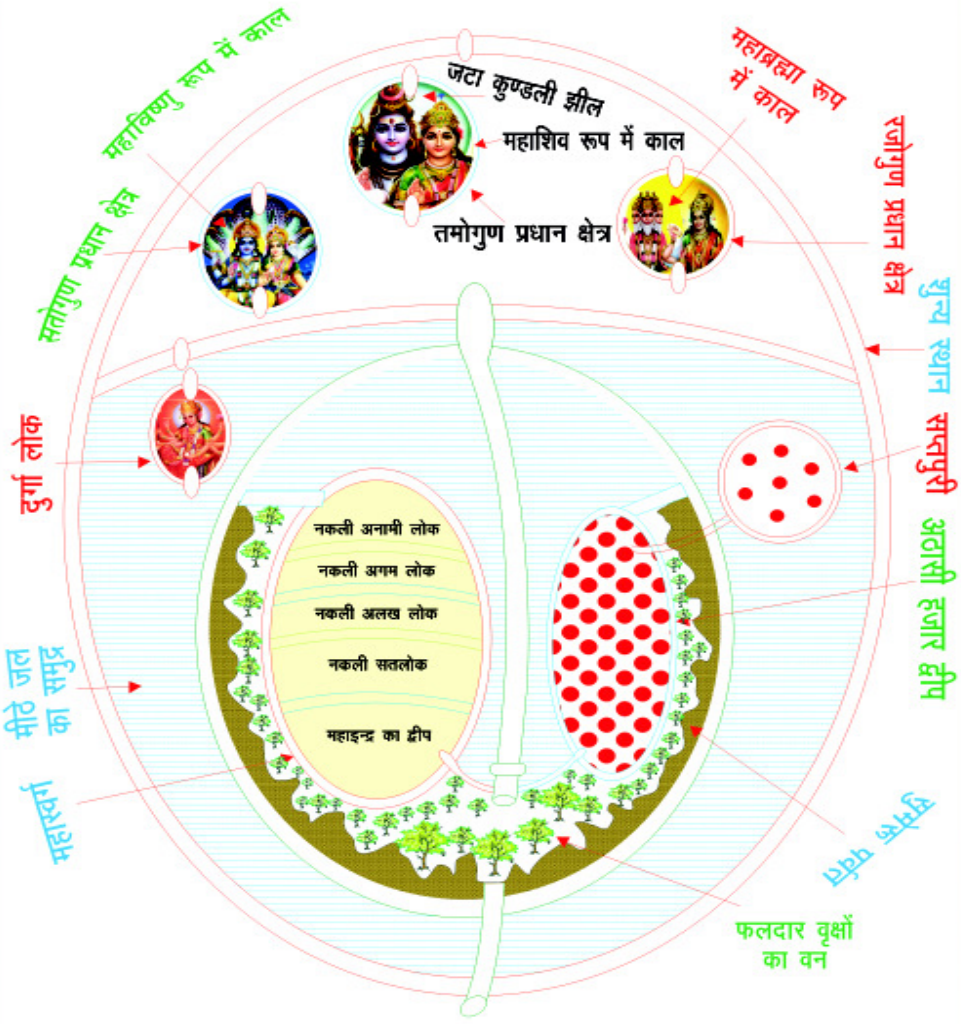

माया/ प्रकृति देवी/ दुर्गा) पड़ा तथा कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है जितने जीव ब्रह्म कहे आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कर्विदेव (कबीर साहेब) अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरुष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सर्व आत्माओं को प्रवेश कर दिया है जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी तथा इस बहन को वचन शक्ति प्रदान की है। आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कह कर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवती होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गति विधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा प्रारम्भ मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह विवाहकर्म महापाप का कारण है। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखूनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकृति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देख सूक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्णब्रह्म कविर् देव (कबीर प्रभु)से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कविर्देव (कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा कि ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरुष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इक्कीस ब्रह्मण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्मण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह संख कोस (एक कोस लगभग 3 कि. मी. का होता है) की दूरी पर आकर रूक गए।

{विशेष विवरण – अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरुष, अकालपुरुष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/परम अक्षर पुरुष आदि। यह पूर्णब्रह्म सर्व ब्रह्मण्डों का स्वामी है अर्थात् वासुदेव है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरुष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्मण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरुष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है। जो केवल इक्कीस ब्रह्मण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सृष्टि के एक ब्रह्मण्ड का परिचय दिया जाएगा, जिसमें आपको तीन अन्य नाम पढ़ने को मिलेंगे – ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद – एक ब्रह्मण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्म (क्षर पुरुष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है वह एक ब्रह्मण्ड में बने चौदह लोकों में से केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकीय ब्रह्मा कहा जाता है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप

में रहता है उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकीय ब्रह्मा कहा जाता है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा जाता है।}

"श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति"

काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाड़ेगा? मन मानी करूंगा। प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो, क्योंकि उसी कबीर पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आप ब्रह्म की अण्डे से उत्पत्ति हुई है तथा बाद में मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ, मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी तू कहेगा मैं वचन से उत्पन्न कर दूंगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी मिल गई, मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मनमानी करूंगा। यह कह कर प्रकृति के साथ बलपूर्वक विवाह किया तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त - ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त - विष्णु जी तथा तमगुण युक्त - शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। युवा होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करा दिया, युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इक्त्रित किया तथा प्रकृति (दुर्गा) के द्वारा इन तीनों का विवाह किया। एक ब्रह्मण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक-एक विभाग के मंत्री (प्रभु) नियुक्त किए। जैसे श्री ब्रह्मा जी को रजोगुण विभाग का तथा विष्णु जी को सत्तोगुण विभाग का तथा श्री शिव शंकर जी को तमोगुण विभाग का प्रभु बनाया तथा स्वयं गुप्त (महाब्रह्मा - महाविष्णु - महाशिव) रूप से मुख्य मंत्री पद को संभालता है। एक ब्रह्मण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। उसका नाम ब्रह्मा रखता है दूसरा सत्तोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरुष स्वयं महाविष्णु रूप बना कर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रखता है दोनों के संयोग से जो पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सत्तोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से तमोगुण युक्त पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम शिव रख देते हैं।(प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, रूद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7, 8, 9 पृष्ठ नं. 99 से 110 तक, अनुवाद कर्त्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रैस गोरख पुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद्देवीमहापुराण तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्त्ता हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी) ***इन्हीं को धोखे में रख कर अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रख कर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार श्री शिव जी द्वारा करवाता है।*** (क्योंकि काल पुरुष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकाल कर खाना होता है उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वयं गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिंघला

कर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) ***गुण प्रधान क्षेत्र को समझने के लिए :- जैसे किसी घर में तीन कक्ष बने हों। एक कक्ष में अश्लील चित्र लगे हों। उस कक्ष में जाते ही मन में वैसे ही मलीन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कक्ष में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार उत्पन्न होते हैं तथा प्रभु का चिन्तन ही बना रहता है। तीसरे कक्ष में देश भक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म (काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना ब्रह्मलोक में की हुई है।***

''तीनों गुण क्या हैं ? प्रमाण सहित''

''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पृष्ठ सं. 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पौद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कंद, अध्याय 5 पृष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कृपा से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मृत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ ? अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की सृष्टि-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कृत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पृष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा - अहम् ईश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः, के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा (42)।

हिन्दी अनुवाद :- हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकृति तथा सनातनी देवी हो। (42)

पृष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्द्रमना न सदांबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः। (8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् हम तीनों को जीवों के जन्म-मृत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

निष्कर्ष :- उपरोक्त प्रमाणों से प्रमाणित हुआ की रजगुण - ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव हैं ये तीनों नाशवान है। दुर्गा का पति ब्रह्म (काल) है यह उसके साथ भोग विलास करता है।

"ब्रह्म काल की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा"

तीनों पुत्रों की उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्म ने अपनी पत्नी दुर्गा (प्रकृति) से कहा कि भविष्य में मैं किसी को अपने वास्तविक रूप में दर्शन नहीं दूंगा। जिस कारण से मैं अव्यक्त माना जाऊँगा। दुर्गा से कहा कि आप मेरा भेद किसी को मत देना। मैं गुप्त रहूँगा। दुर्गा ने पूछा कि क्या आप अपने पुत्रों को भी दर्शन नहीं दोगे ? ब्रह्म ने कहा मैं अपने पुत्रों को तथा अन्य को किसी भी साधना से दर्शन नहीं दूंगा, यह मेरा अटल नियम रहेगा। दुर्गा ने कहा यह तो आपका उत्तम नियम नहीं है जो आप अपनी संतान से भी छुपे रहोगे। तब काल ने कहा दुर्गा मेरी विवशता है। मुझे एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करने का शाप लगा है। यदि मेरे पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को पता लग गया तो ये उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्य नहीं करेंगे। इसलिए यह मेरा अनुत्तम नियम सदा रहेगा। आप मेरी आज्ञा का पालन करो जब ये तीनों कुछ बड़े हो जाऐं तो इन्हें अचेत कर देना। मेरे विषय में नहीं बताना, नहीं तो मैं तुझे भी दण्ड दूंगा। दुर्गा इस डर के मारे वास्तविकता नहीं बताती। इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में कहा है कि यह बुद्धिहीन जन समुदाय मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया हुआ अर्थात् कृष्ण मानते हैं।

अध्याय 7 का श्लोक 24

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्। २४।

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः।
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्।।24।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धि हीन (मम) मेरे अनुत्तम अर्थात् घटिया (अव्ययम्) अविनाशी (परम् भावम्) विशेष भाव को (अजानन्तः) न जानते हुए (माम् अव्यक्तम्) मुझ अव्यक्त को (व्यक्तिम्) मनुष्य रूप में (आपन्नम) आया (मन्यन्ते) मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 24)

केवल हिन्दी अनुवाद : बुद्धि हीन मेरे अनुत्तम अर्थात् घटिया अविनाशी विशेष भाव को न जानते हुए मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (24)

गीता अध्याय 11 श्लोक 47 तथा 48 में कहा है कि यह मेरा वास्तविक काल रूप है। इसके दर्शन अर्थात् ब्रह्म प्राप्ति न वेदों में वर्णित विधि से, न जप से, न तप से तथा न किसी क्रिया से हो सकती है।

जब तीनों बच्चे युवा हो गए तब माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टंगी) ने कहा कि तुम सागर मन्थन करो। (ज्योति निरंजन ने अपने श्वांसों द्वारा चार वेद उत्पन्न किए। उनको गुप्त वाणी द्वारा आज्ञा दी कि सागर में निवास करो) प्रथम बार सागर मन्थन किया तो चारों वेद निकले वह ब्रह्मा ने लिए। वस्तु लेकर तीनों बच्चें माता के पास आए तब माता ने कहा कि चारों वेदों को ब्रह्मा रखे व पढ़े।

नोट :- वास्तव में पूर्णब्रह्म ने, ब्रह्म काल को पाँच वेद प्रदान किए थे। लेकिन ब्रह्म ने केवल चार

वेदों को प्रकट किया। पाँचवां वेद छुपा दिया। जो पूर्ण परमात्मा ने स्वयं प्रकट होकर कविर्गिरिः अर्थात् कविर्वाणी(कबीर वाणी) द्वारा लोकोक्तियों व दोहों के माध्यम से प्रकट किया है।

दूसरी बार सागर मन्थन किया तो तीन कन्याऐं मिली। माता ने तीनों को बांट दिया। प्रकृति (दुर्गा) ने अपने ही अन्य तीन रूप (सावित्री,लक्ष्मी तथा पार्वती) धारण किए तथा समुन्द्र में छुप गई। सागर मन्थन के समय तीन भिन्न-2 रूपों में बाहर आई। गीता अध्याय 7 श्लोक 4 से 6 में स्पष्ट है कि जो जड़ प्रकृति है उससे भिन्न जो चेतन प्रकृति है। वह दुर्गा है। गीता अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में स्पष्ट किया है कि सर्व प्राणी प्रकृति से उत्पन्न किए हैं मैं उसकी योनि में बीज स्थापित करता हूँ मैं सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा दुर्गा (प्रकृति) सब की माता है फिर श्लोक 5 में कहा है कि तीनों गुण (रजगुण, सतगुण, तमगुण) प्रकृति से उत्पन्न हुए हैं।

सिद्ध हुआ कि प्रकृति अर्थात् दुर्गा ही तीन रूप हुई। उन्हीं में से वही प्रकृति तीन रूप हुई तथा भगवान ब्रह्मा को सावित्री, भगवान विष्णु को लक्ष्मी, भगवान शंकर को पार्वती पत्नी रूप में दी। तीनों ने भोग विलास किया, सुर तथा असुर दोनों पैदा हुए।

{जब तीसरी बार सागर मन्थन किया तो चौदह रत्न ब्रह्मा को तथा अमृत विष्णु को व देवताओं को, मद्य(शराब) असुरों को तथा विष परमार्थ शिव ने अपने कंठ में ठहराया। यह तो बहुत बाद की बात है।} ***जब ब्रह्मा वेद पढ़ने लगा तो पता चला कि कोई सर्व ब्रह्मण्डों की रचना करने वाला कुल का मालिक पुरूष (प्रभु) और है। तब ब्रह्मा जी ने विष्णु जी व शंकर जी से बताया कि वेदों में वर्णन है कि सृजनहार कोई और प्रभु है परन्तु वेद कहते हैं कि भेद हम भी नहीं जानते, उसके लिए संकेत है कि किसी तत्वदर्शी संत से पूछो। तब ब्रह्मा माता के पास आया और सब वृतांत कह सुनाया। माता कहा करती थी कि मेरे अतिरिक्त अन्य कोई प्रभु नहीं है। मैं ही कर्त्ता हूँ। मैं ही सर्वशक्तिमान हूँ परन्तु ब्रह्मा ने कहा कि वेद ईश्वर कृत हैं यह झूठ नहीं हो सकते। दुर्गा ने कहा कि तेरा पिता तुझे दर्शन नहीं देगा, उसने कसम खाई है। तब ब्रह्मा ने कहा माता जी अब आप की बात पर अविश्वास हो गया है। मैं उस पुरूष (प्रभु) का पता लगाकर ही रहूँगा। दुर्गा ने कहा कि यदि वह तुझे दर्शन नहीं देगा तो तू क्या करेगा? ब्रह्मा ने कहा कि मैं आपको मुख नहीं दिखाऊँगा। दूसरी तरफ ज्योति निरंजन ने कसम खाई है कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा अर्थात् 21 ब्रह्मण्ड में कभी भी अपने वास्तविक काल रूप में आकार में नहीं आऊँगा।***

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 24

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्। २४।
अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः।
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्।।24।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धिहीन लोग (मम) मेरे (अनुतमम्) अश्रेष्ठ (अव्ययम्) अटल (परम्) परम (भावम्) भावको (अजानन्तः) न जानते हुए (अव्यक्तम्) अदृश्यमान छुपे हुए अर्थात् परोक्ष (माम्) मुझ (व्यक्तिम्) मानव आकार में अर्थात् कृष्ण अवतार (आपन्नम्) प्राप्त हुआ (मन्यन्ते) मानते हैं।(24)

केवल हिन्दी अनुवाद : बुद्धिहीन लोग मेरे अश्रेष्ठ अटल परम भावको न जानते हुए अदृश्यमान छुपे हुए अर्थात् परोक्ष मुझ मानव आकार में अर्थात् कृष्ण अवतार प्राप्त हुआ मानते हैं।(24)

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 25

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्। २५।

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः।
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम्।

अनुवाद : (अहम्) मैं (योगमाया समावृतः) योगमायासे छिपा हुआ अर्थात् अव्यक्त रूप में रहता हुआ (सर्वस्य) सबके (प्रकाशः) प्रत्यक्ष (न) नहीं होता अर्थात् अदृश्य रहता हूँ इसलिये (अजम्) जन्म न लेने वाले (अव्ययम्) अविनाशी अटल भावको (अयम्) यह (मूढः) अज्ञानी (लोकः) जनसमुदाय संसार (माम्) मुझे (न) नहीं (अभिजानाति) जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया कृष्ण समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने भिन्न–भिन्न रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।(25)

केवल हिन्द अनुवाद : मैं योगमायासे छिपा हुआ अर्थात् अव्यक्त रूप में रहता हुआ सबके प्रत्यक्ष नहीं होता अर्थात् अदृश्य रहता हूँ इसलिये जन्म न लेने वाले अविनाशी अटल भावको यह अज्ञानी जनसमुदाय संसार मुझे नहीं जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया कृष्ण समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने भिन्न-भिन्न रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।(25)

"ब्रह्मा का अपने पिता(काल) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न"

जब दुर्गा ने ब्रह्मा जी से कहा कि अलख निंरजन तुम्हारा पिता है परन्तु वह तुम्हें दर्शन नहीं देगा। यह सुनकर ब्रह्मा जी व्याकुल होकर उत्तर दिशा की ओर चल दिया। जहां अन्धेरा ही अन्धेरा है। वहाँ ब्रह्मा ने चार युग तक ध्यान लगाया परन्तु कुछ भी प्राप्ति नहीं हुई। काल ने आकाशवाणी की कि दुर्गा सृष्टि रचना क्यों नहीं की। भवानी ने कहा आप का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा जिद्द करके आप की तलाश में गया है। ब्रह्म(काल) ने कहा उसे वापिस बुला लो। मैं उसे दर्शन नहीं दूँगा। ब्रह्मा के बिना सब कार्य असम्भव है। तब दुर्गा(प्रकृति) ने अपनी शब्द शक्ति से गायत्री नाम की लड़की उत्पन्न की तथा उसे ब्रह्मा को लौटा लाने को कहा। गायत्री ब्रह्मा जी के पास गई परंतु ब्रह्मा जी समाधि लगाए हुए था उसे कोई आभास ही नहीं था कि कोई आया है। तब आदि कुमारी (प्रकृति) ने गायत्री को ध्यान द्वारा बताया कि इस के चरण स्पर्श कर। तब गायत्री ने ऐसा ही किया। ब्रह्मा जी का ध्यान भंग हुआ तो क्रोध वश बोला तू कौन पापिन है जिसने मेरा ध्यान भंग किया है। मैं तुझे शाप दूंगा। गायत्री ने कहा की मेरा दोष नहीं है पहले मेरी बात सुनो तब शाप देना। मेरे को माता ने तुम्हें लौटा लाने को कहा है क्योंकि आपके बिना जीव उत्पत्ति नहीं हो सकती। ब्रह्मा ने कहा कि मैं कैसे जाऊँ? पिता जी के दर्शन हुए नहीं, ऐसे जाऊँ तो मेरा उपहास होगा। यदि आप माता जी के समक्ष यह कह दें कि ब्रह्मा ने पिता (ज्योति निरंजन) के दर्शन हुए हैं, मैंने अपनी आँखो से देखा है तो मैं आपके साथ चलूं। तब गायत्री ने कहा कि आप मेरे साथ संभोग (सैक्स) करोगे तो मैं आपकी झूठी साखि (गवाही) भरूँ। तब ब्रह्मा ने सोचा कि पिता के दर्शन हुए नहीं वैसे जाऊँ तो माता के सामने शर्म लगेगी अन्य विकल्प न देख गायत्री से रति क्रिया (संभोग) की।

तब गायत्री ने कहा कि क्यों न एक गवाह और तैयार किया जाए। ब्रह्मा ने कहा बहुत ही अच्छा है। तब गायत्री ने शब्द शक्ति से एक लड़की पुहपवति नाम की उत्पन्न की तथा उससे दोनों ने कहा कि आप गवाही देना कि ब्रह्मा ने पिता के दर्शन किए हैं। तब पुहपवति ने कहा कि मैं क्यों झूठी गवाही दूँ। हाँ यदि ब्रह्मा मेरे से रति क्रिया (संभोग) करे तो गवाही दे सकती हूँ। गायत्री ने ब्रह्मा को समझाया (उकसाया) कि और कोई चारा नहीं है तब ब्रह्मा ने पुहपवति से संभोग किया तो तीनों मिलकर आदि माया (प्रकृति) के पास आए। दोनों देवियों ने उपरोक्त शर्त इसलिए रखी थी

कि यदि ब्रह्मा माता के सामने हमारी झूठी गवाही को बता देगा तो माता हमें शाप दे देगी। इसलिए उसे भी दोषी बना लिया।

(यहां महाराज गरीबदास जी कहते हैं कि – ''दास गरीब यह चूक धुरों धुर'')

"माता दुर्गा द्वारा ब्रह्मा को शाप देना"

तब माता ने ब्रह्मा से पूछा क्या तुझे तेरे पिता के दर्शन हुए? तब तीनों ने कहा कि हाँ हमने अपनी आँखों से देखा है। भवानी (प्रकृति) को संशय हुआ कि मुझे तो ब्रह्म ने कहा था कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा, परन्तु ये कहते हैं कि दर्शन हुए हैं। तब अष्टंगी ने ध्यान लगाया और काल ज्योति निरंजन से पूछा कि यह क्या कहानी है? ज्योति निंरजन जी ने कहा कि ये तीनों झूठ बोल रहे हैं। तब माता ने कहा तुम झूठ बोल रहे हो आकाशवाणी हुई है कि इन्हें कोई दर्शन नहीं हुए। यह बात सुनकर ब्रह्मा ने कहा कि माता जी मैं प्रतिज्ञा करके पिता की खोज करने गया था। परन्तु पिता ब्रह्म के दर्शन हुए नहीं। आप के पास आने में शर्म लग रही थी। इसलिए हमने झूठ बोल दिया। तब माता (दुर्गा) ने कहा अब मैं तुम्हें शाप देती हूँ।

<u>ब्रह्मा को शाप</u> : -- तेरी पूजा जग में नहीं होगी। आगे तेरे वंशज होंगे वे बहुत पाखण्ड करेंगे। झूठी बात बना कर जग को ठगेंगे। ऊपर से तो कर्म काण्ड करते दिखाई देंगे अन्दर से विकार करेंगे। पुराणों को पढ़कर सुनाया करेंगे, स्वयं को ज्ञान नहीं होगा कि सद्ग्रन्थों में वास्तविकता क्या है, फिर भी मान वश तथा धन प्राप्ति के लिए गुरु बन कर अनुयाईयों को लोकवेद (शास्त्र विरुद्ध दंत कथा) सुनाया करेंगे। देवी-देवों की पूजा करके तथा करवाके, दूसरों की निन्दा करके कष्ट पर कष्ट उठायेंगे। जो उनके अनुयाई होंगे उनको परमार्थ नहीं बताएंगे। दक्षिणा के लिए जगत को गुमराह करते रहेंगे। अपने आपको सबसे अच्छा मानेंगे, दूसरों को नीचा समझेंगे। जब माता के मुख से यह सुना तो ब्रह्मा मूर्छित होकर जमीन पर गिर गया। बहुत समय उपरान्त होश में आया।

<u>गायत्री को शाप</u> : -- तेरे कई सांड पति होंगे। तू मृतलोक में गाय बनेगी।

<u>पुहपवति को शाप</u> : -- तेरी जगह गंदगी में होगी। तेरे फूलों को कोई पूजा में नहीं लाएगा। इस झूठी गवाही के कारण तुझे यह नरक भोगना होगा। तेरा नाम केवड़ा केतकी होगा। {हरियाणा में कुसोंधी कहते हैं। यह गंदगी (कुरड़ियों) वाली जगह पर होती है।}

इस प्रकार तीनों को शाप देकर माता भवानी बहुत पछताई। {इस प्रकार पहले तो जीव बिना सोचे मन (काल निरंजन) के प्रभाव से गलत कार्य कर देता है परन्तु जब आत्मा (सतपुरूष अंश) के प्रभाव से उसे ज्ञान होता है तो पीछे पछताना पड़ता है। जिस प्रकार माता–पिता अपने बच्चों को छोटी सी गलती के कारण ताड़ते हैं (क्रोधवश होकर) परन्तु बाद में बहुत पछताते हैं। यही प्रक्रिया मन (काल–निंरजन) के प्रभाव से सर्व जीवों में क्रियावान हो रही है।} ***यहाँ एक बात विशेष है कि निरंजन (काल/ब्रह्म) ने भी अपना कानून बना रखा है कि यदि कोई जीव किसी दुर्बल जीव को सत्ताएगा तो उसे उसका बदला देना पड़ेगा। जब भवानी (प्रकृति/अष्टंगी) ने ब्रह्मा, गायत्री व पुहपवति को शाप दिया तो अलख निंरजन (ब्रह्म/काल) ने कहा कि हे भवानी (प्रकृति/अष्टंगी) यह आपने अच्छा नहीं किया। अब मैं (ज्योति निरंजन) आपको शाप देता हूँ कि द्वापर युग में तेरे भी पाँच पति होंगे। (द्रोपदी ही दुर्गा का अवतार हुई है।) जब यह आकाश वाणी सुनी तो आदि माया ने कहा कि हे ज्योति निंरजन (काल) मैं तेरे वश पड़ी हूँ जो चाहे सो कर ले।***

"विष्णु का अपने पिता ब्रह्म की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आर्शीवाद पाना"

इसके बाद विष्णु से प्रकृति ने कहा कि पुत्र तू भी अपने पिता का पता लगा ले। तब विष्णु अपने पिता जी ब्रह्म का पता करते-करते पाताल लोक में चले गए, जहाँ शेषनाग था। उसने विष्णु को अपनी सीमा में प्रवेश किया देख कर क्रोधित हो कर विष भरा फूंकारा मारा। उसके विष के प्रभाव से विष्णु जी का रंग सांवला हो गया, जैसे स्प्रे पेंट हो जाता है। तब विष्णु ने चाहा कि इस नाग को सजा देनी चाहिए। ज्योति निरंजन (काल) ने देखा कि विष्णु को शांत करना चाहिए तब आकाशवाणी हुई कि विष्णु अब तू अपनी माता जी के पास जा और सत्य-सत्य सारा विवरण बता देना तथा जो कष्ट आपको शेषनाग से हुआ है, इसका प्रतिशोद्ध द्वापर युग में लेना। द्वापर युग में आप (विष्णु) तो कृष्ण अवतार धारण करोगे और कालीदह में कालिन्द्री नामक नाग, शेष नाग का अवतार होगा।

ऊँच होई के नीच सतावै, ताकर ओएल (बदला) मोही सों पावै।
जो जीव दवे पीर पुनी काँहु, हम पुनि ओएल दिवावें ताहूँ।।

तब विष्णु जी माता जी के पास आए तथा सत्य-सत्य कह दिया कि मुझे पिता के दर्शन नहीं हुए। इस बात से माता प्रकृति बहुत प्रसन्न हुई और कहा कि पुत्र तू सत्यवादी है। अब मैं अपनी शक्ति से आपको तेरे पिता से मिलाती हूँ तथा तेरे मन का संशय समाप्त करती हूँ।

कबीर, देख पुत्र तोहि पिता भीटाऊँ, तौरे मन का धोखा मिटाऊँ।
मन स्वरूप कर्ता कह जानों, मन ते दूजा और न मानो।
स्वर्ग पाताल दौर मन केरा, मन अस्थीर मन अहै अनेरा।
निंरकार मन ही को कहिए, मन की आस निश दिन रहिए।
देख हूँ पलटि सुन्य मह ज्योति, जहाँ पर झिलमिल झालर होती।।

इस प्रकार अष्टंगी (प्रकृति) ने विष्णु से कहा कि मन ही जग का कर्ता है, यही ज्योति निरंजन है। ध्यान में जो एक हजार ज्योतियाँ नजर आती हैं वही उसका रूप है। जो शंख, घण्टा आदि का बाजा सुना, यह महास्वर्ग में निरंजन का ही बज रहा है। तब अष्टंगी (प्रकृति) ने कहा कि हे पुत्र तुम सब देवों के सरताज हो और तेरी हर कामना व कार्य मैं पूर्ण करूंगी। तेरी पूजा सर्व जगत् में होगी। आपने मुझे सच-सच बताया है। काल के इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों के प्राणियों की विशेष आदत है कि अपनी व्यर्थ महिमा बनाता है। जैसे दुर्गा जी श्री विष्णु जी को कह रही है कि तेरी पूजा जगत् में होगी। मैंने तुझे तेरे पिता के दर्शन करा दिए। दुर्गा ने केवल प्रकाश दिखा कर श्री विष्णु जी को बहका दिया। श्री विष्णु जी भी प्रभु की यही स्थिति अपने अनुयाईयों को समझाने लगे कि परमात्मा का केवल प्रकाश दिखाई देता है। परमात्मा निराकार है। जबकि सर्व शास्त्रों में परमात्मा साकार-मानव सदृश शरीर युक्त लिखा है। इसके बाद आदि भवानी, रूद्र (महेश जी) के पास गई तथा कहा कि महेश तू भी कर ले अपने पिता की खोज तेरे दोनों भाइयों को तो तुम्हारे पिता के दर्शन नहीं हुए उनको जो देना था वह प्रदान कर दिया है अब आप माँगो जो माँगना है। तब महेश ने कहा कि हे जननी! यदि मेरे दोनों बड़े भाईयों को पिता के दर्शन नहीं हुए फिर तो प्रयत्न करना व्यर्थ है। कृपा मुझे ऐसा वर दो कि मैं अमर (मृत्युंजय) हो जाऊँ। तब माता ने कहा कि यह मैं नहीं कर सकती। हाँ युक्ति बता सकती हूँ, जिससे तेरी आयु सबसे लम्बी बनी रहेगी। विधि योग समाधि

एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र

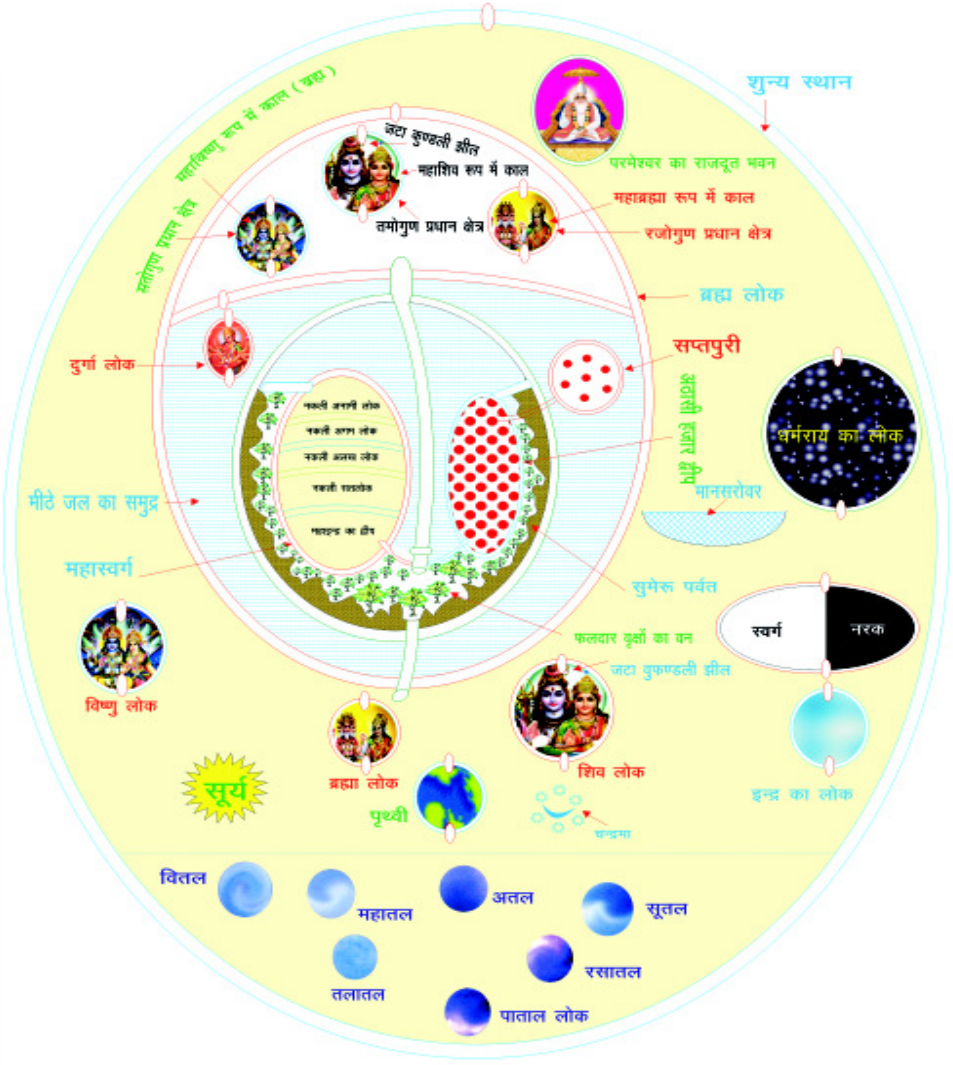

ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र

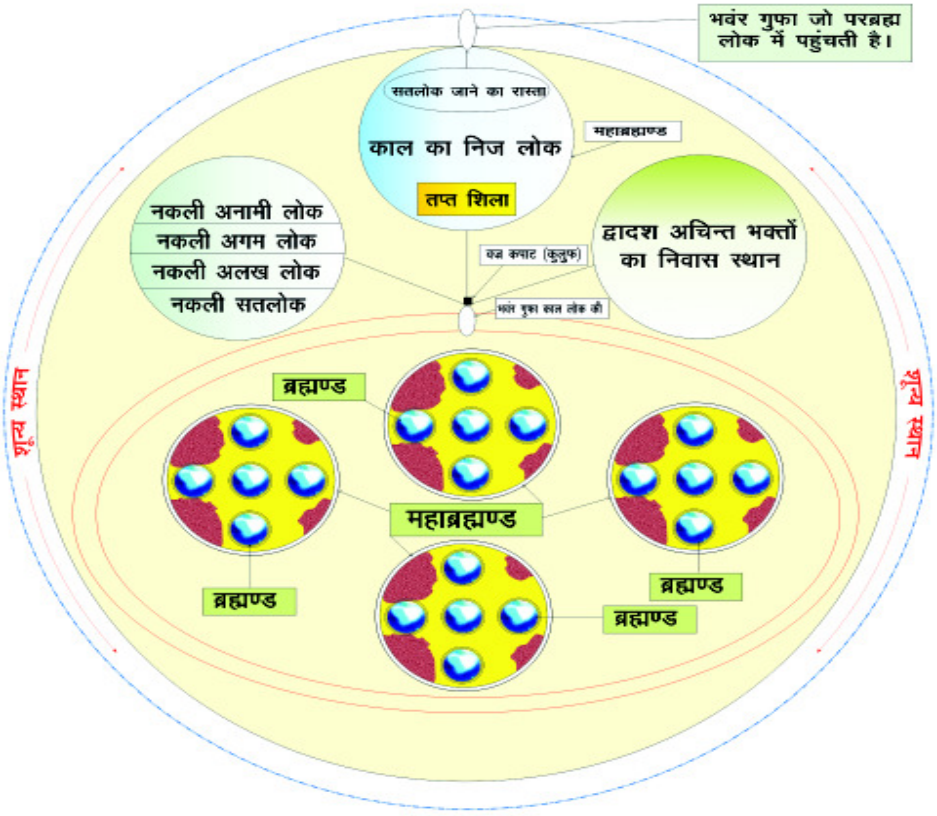

है (इसलिए महादेव जी ज्यादातर समाधि में ही रहते हैं)। तीनों पुत्रों को विभाग बांट दिए : --

भगवान ब्रह्मा जी को काल लोक में लख चौरासी के चौले (शरीर) रचने (बनाने) का अर्थात् रजोगुण प्रभावित करके संतान उत्पत्ति के लिए विवश करके जीव उत्पत्ति कराने का विभाग प्रदान किया।

भगवान विष्णु जी को इन जीवों में मोह-ममता उत्पन्न करके स्थिति बनाए रखने का विभाग प्रदान किया।

भगवान शिव शंकर (महादेव) को संहार करने का विभाग प्रदान किया।

क्योंकि इनके पिता निरंजन को एक लाख मानव शरीर धारी जीव प्रतिदिन खाने पड़ते हैं।

उपरोक्त विवरण एक ब्रह्मण्ड का है। ऐसे-ऐसे क्षर पुरुष (अर्थात् काल भगवान) के इक्कीस ब्रह्मण्ड हैं।

परन्तु क्षर पुरूष (काल) स्वयं व्यक्त नहीं होता अर्थात् वास्तविक शरीर रूप में सबके सामने नहीं आता। उसी को प्राप्त करने के लिए तीनों देवों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी, शिव जी) को वेदों में वर्णित विधि अनुसार भरसक साधना करने पर भी ब्रह्म (काल) के दर्शन नहीं हुए। बाद में ऋषियों ने वेदों को पढ़ा। परन्तु नहीं समझ सके क्योंकि सबकी बुद्धि काल वश है। वेदों में लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि' (पवित्र यजुर्वेद अ. 1 मंत्र 15) परमेश्वर सशरीर है तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 1 दो बार में लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि विष्णवे त्वा सोमस्य तनूर् असि'*। इस मंत्र में दो बार वेद गवाही दे रहा है कि सर्वव्यापक, सर्वपालन कर्ता सतपुरुष सशरीर है। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 8 में कहा है कि (कविर् मनिषी) जिस परमेश्वर की सर्व प्राणियों को चाह है, वह कविर् अर्थात् कबीर परमेश्वर पूर्ण विद्वान् है। उसका शरीर बिना नाड़ी (अस्नाविरम्) का है, (शुक्रम् अकायम्) वीर्य से बनी पाँच तत्व से बनी भौतिक काया रहित है। वह सर्व का मालिक सर्वोपरि सत्यलोक में विराजमान है, उस परमेश्वर का तेजपुंज का (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित शरीर है जो शब्द रूप अर्थात् अविनाशी है। वही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है जो सर्व ब्रह्मण्डों की रचना करने वाला (व्यदधाता) सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार (स्वयम्भूः) स्वयं प्रकट होने वाला (यथा तथ्यः अर्थान्) वास्तव में (शाश्वतिभः) अविनाशी है जिसके विषय में वेद वाणी द्वारा भी जाना जाता है कि परमात्मा साकार है तथा उसका नाम कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है(गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी प्रमाण है।) भावार्थ है कि पूर्ण ब्रह्म का शरीर का नाम कबीर (कविर देव) है। उस परमेश्वर का शरीर नूर तत्व से बना है। परमात्मा का शरीर अति सूक्ष्म है जो उस साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार जीव का भी सुक्ष्म शरीर है जिसके ऊपर पाँच तत्व का खोल (कवर) अर्थात् पाँच तत्व की काया चढ़ी होती है जो माता-पिता के संयोग से (शुक्रम) वीर्य से बनी है। शरीर त्यागने के पश्चात् जीव जिस भी योनी में जाता है। जीव का सुक्ष्म शरीर साथ रहता है। वह शरीर उसी साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार परमात्मा व जीव की साकार स्थिति को समझें। वेदों में ओ३म् नाम के स्मरण का प्रमाण है जो केवल ब्रह्म साधना है। इस उद्देश्य से ओ३म् नाम के जाप को पूर्ण ब्रह्म का जान कर ऋषियों ने भी हजारों वर्ष हठयोग (समाधी लगा कर) करके प्रभु प्राप्ति की चेष्टा की, परन्तु प्रभु दर्शन नहीं हुए, सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। उन्हीं सिद्धी रूपी खिलौनों से खेल कर ऋषि भी जन्म-मृत्यु के चक्र में ही रह गए तथा अपने अनुभव के शास्त्रों में परमात्मा को निराकार लिख दिया। ब्रह्म (काल)*

ने प्रतिज्ञा की है कि मैं अपने वास्तविक रूप में किसी को दर्शन नहीं दूँगा। मुझे अव्यक्त कहा करेंगे (अव्यक्त का भावार्थ है कि कोई आकार में है परन्तु व्यक्तिगत रूप से स्थूल रूप में दर्शन नहीं देता। जैसे आकाश में बादल छा जाने पर दिन के समय सूर्य अदृश हो जाता है। वह दृश्यमान नहीं है, परन्तु वास्तव में बादलों के पार ज्यों का त्यों है, इस अवस्था को अव्यक्त अर्थात् परोक्ष कहते हैं।)***। (प्रमाण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25, अध्याय 11 श्लोक 47, 48 तथा 32)***

पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके कह रहा है कि अर्जुन मैं बढ़ा हुआ काल हूँ और सर्व को खाने के लिए आया हूँ। यह मेरा वास्तविक रूप है, इसको तेरे अतिरिक्त न तो कोई पहले देख सका तथा न कोई आगे देख सकता अर्थात् वेदों में वर्णित यज्ञ-जप-तप तथा ओ३म् नाम आदि की विधि से मेरे इस वास्तविक स्वरूप के दर्शन नहीं हो सकते। (अध्याय 11 श्लोक 32 से 48) मैं कृष्ण नहीं हूँ, ये मूर्ख लोग कृष्ण रूप में मुझ अव्यक्त को व्यक्त (मनुष्य रूप) मान रहे हैं। क्योंकि ये मेरे घटिया नियम से अपरिचित हैं कि मैं कभी वास्तविक इस काल रूप में सबके सामने नहीं आता। क्योंकि मैं अपनी योग माया अर्थात् सिद्धी शक्ति से छिपा रहता हूँ (गीता अध्याय 7 का श्लोक 24-25) विचार करें :- अपने छूपे रहने वाले विधान को स्वयं अश्रेष्ठ (अनुत्तम) क्यों कह रहे हैं?

क्योंकि जो पिता अपनी सन्तान को भी दर्शन नहीं देता तो उसमें कोई त्रुटि है जिस कारण से छुपा है तथा सुविधाएं भी प्रदान कर रहा है। काल (ब्रह्म) को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करना पड़ता है तथा 25 हजार प्रतिदिन जो अधिक उत्पन्न होते हैं उन्हें ठिकाने लगाने के लिए तथा कर्म भोग का दण्ड देने के लिए चौरासी लाख योनियों की व्यवस्था की हुई है। यदि सबके सामने बैठ कर किसी की पुत्री, किसी की पत्नी, किसी के पुत्र, माता-पिता को खाए तो सर्व को काल ब्रह्म से घृणा हो जाए तथा जब भी कभी पूर्ण परमात्मा कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) स्वयं आऐं या अपना कोई संदेशवाहक (दूत) भेंजे तो सर्व प्राणी सत्यभक्ति करके काल के जाल से निकल जाएं। इसलिए धोखा देकर रखता है तथा पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 18,24,25 में अपनी साधना से होने वाली मुक्ति (गति) को भी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ कहा है तथा अपने विधान (नियम)को भी (अनुत्तम) अश्रेष्ठ कहा है। (कृप्या देखें एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र पृष्ठ 19 पर।)

प्रत्येक ब्रह्मण्ड में बने ब्रह्मलोक में एक महास्वर्ग बनाया है। महास्वर्ग में एक स्थान पर नकली सतलोक - नकली अलख लोक - नकली अगम लोक तथा नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखा देने के लिए प्रकृति (दुर्गा/आदि माया) द्वारा करा रखी है। एक ब्रह्मण्ड में अन्य लोकों की भी रचना है, जैसे श्री ब्रह्मा जी का लोक, श्री विष्णु जी का लोक, श्री शिव जी का लोक। जहाँ पर बैठकर तीनों प्रभु नीचे के तीन लोकों (स्वर्गलोक अर्थात् इन्द्र का लोक - पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक - एक विभाग के मालिक बन कर प्रभुता करते हैं तथा अपने पिता काल के खाने के लिए प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्यभार संभाले हैं। तीनों प्रभुओं की भी जन्म व मृत्यु होती है। तब काल इन्हें भी खाता है। इसी ब्रह्मण्ड {इसे अण्ड भी कहते हैं क्योंकि ब्रह्मण्ड की बनावट अण्डाकार है, इसे पिण्ड भी कहते हैं क्योंकि शरीर (पिण्ड) में एक ब्रह्मण्ड की रचना कमलों में टी.वी. की तरह देखी जाती है।} ***में एक मानसरोवर तथा धर्मराय (न्यायधीश) का भी लोक है तथा एक गुप्त स्थान पर पूर्ण परमात्मा अन्य रूप धारण करके रहता है। जैसे प्रत्येक देश का राजदूत भवन होता है। वहाँ पर कोई नहीं जा सकता। वहाँ पर वे***

आत्माऐं रहती हैं जिनकी सत्यलोक की भक्ति अधूरी रहती है। जब भक्ति युग आता है तो उस समय इन पुण्यात्माओं को पृथ्वी पर मानव शरीर प्राप्त होता है तथा ये शीघ्र ही सत भक्ति पर लग जाते हैं तथा पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर जाते हैं। उस स्थान पर रहने वाले हंस आत्माओं की निजी भक्ति कमाई खर्च नहीं होती। परमात्मा के भण्डारे से सर्व सुविधाऐं उपलब्ध होती हैं। ब्रह्म (काल) के उपासकों की भक्ति कमाई स्वर्ग-महा स्वर्ग में समाप्त हो जाती है। क्योंकि इस काल ब्रह्म का लोक (ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड) तथा परब्रह्म लोक (परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड) में प्राणियों को अपना किया कर्मफल ही मिलता है। (कृप्या देखें एक ब्रह्मण्ड का व ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड का लघु चित्र पृष्ठ 29 व 30 पर)

क्षर पुरुष (ब्रह्म) ने अपने 20 ब्रह्मण्डों को चार महाब्रह्मण्डों में विभाजित किया है। एक महाब्रह्मण्ड में पाँच ब्रह्मण्डों का समूह बनाया है तथा चारों ओर से अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है तथा चारों महा ब्रह्मण्डों को भी फिर अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड की रचना एक महाब्रह्मण्ड जितना स्थान लेकर की है। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में प्रवेश होते ही तीन रास्ते बनाए हैं। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में भी बांई तरफ नकली सतलोक, नकली अलख लोक, नकली अगम लोक, नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखे में रखने के लिए आदि माया (दुर्गा) से करवाई है तथा दांई तरफ बारह सर्व श्रेष्ठ ब्रह्म साधकों (भक्तों) को रखता है। {प्रत्येक युग में अपने संदेश वाहक (नकली सतगुरु) बनाकर पृथ्वी पर भेजता है, जो शास्त्र विधि रहित साधना व ज्ञान बताते हैं तथा स्वयं भी भक्तिहीन हो जाते हैं तथा अनुयाईयों को भी काल जाल में फंसा जाते हैं। वे गुरु जी तथा अनुयाई दोनों ही नरक में जाते हैं।} *सामने एक ताला (कुलुफ) लगा रखा है। वह रास्ता काल (ब्रह्म) के निज लोक में जाता है। जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) अपने वास्तविक मानव सदृश काल रूप में रहता है। इसी स्थान पर एक पत्थर की टुकड़ी तवे जैसी* (चपाती पकाने की लोहे की गोल प्लेट जैसी होती है) *स्वयं गर्म रहती है। जिस पर एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर को भूनकर उनमें से गंद निकाल कर खाता है। उस समय सर्व प्राणी बहुत पीड़ा अनुभव करते हैं तथा हा-हाकार मच जाती है। फिर कुछ समय उपरान्त बेहोश हो जाते हैं। जीव मरता नहीं। फिर धर्मराय के लोक में जाकर कर्माधार से अन्य जन्म प्राप्त करते हैं तथा जन्म - मृत्यु का चक्कर बना रहता है। उपरोक्त इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में सामने लगा ताला ब्रह्म (काल) केवल अपने आहार वाले प्राणियों के लिए कुछ क्षण के लिए खोलता है। पूर्ण परमात्मा के सत्यनाम व सारनाम से यह ताला स्वयं खुल जाता है। ऐसे काल का जाल पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर साहेब) ने स्वयं ही अपने निजी भक्त धर्मदास जी को समझाया।*

"परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों की स्थापना"

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने आगे बताया है कि परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने अपने कार्य में सतर्कता नहीं की क्योंकि यह मानसरोवर में सो गया तथा जब परमेश्वर (मैंनें अर्थात् कबीर साहेब ने) उस सरोवर में अण्डा छोड़ा तो अक्षर पुरुष (परब्रह्म) ने उसे क्रोध से देखा। इन दोनों अपराधों के कारण इसे भी यह सतलोक में रहने योग्य नहीं रहा। अन्य कारण :- अक्षर पुरुष (परब्रह्म) अपने साथी ब्रह्म (क्षर पुरुष) की वियोग में व्याकुल होकर परमपिता कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की याद भूलकर उसी को याद करने लगा तथा सोचा कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तो बहुत आनन्द मना रहा होगा, मैं पीछे रह गया तथा अन्य कुछ आत्माऐं जो परब्रह्म के साथ सात संख

ब्रह्मण्डों में जन्म-मृत्यु का कर्मदण्ड भोग रही हैं, उन आत्माओं की वियोग की याद में खो गई जो ब्रह्म (काल) के साथ इक्कीस ब्रह्मण्डों में फंसी हैं तथा पूर्ण परमात्मा, सुखदाई कविर्देव की याद भुला दी। परमेश्वर कविर् देव के बार-बार समझाने पर भी आस्था कम नहीं हुई। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने सोचा कि मैं भी अलग स्थान प्राप्त करूं तो अच्छा रहे। यह सोच कर राज्य प्राप्ति की इच्छा से सहज ध्यान प्रारम्भ कर दिया। इसी प्रकार अन्य आत्माओं ने (जो परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों में फंसी हैं) सोचा कि वे जो ब्रह्म के साथ आत्माऐं गई हैं वे तो वहाँ मौज-मस्ती मनाऐंगे, हम पीछे रह गये। परब्रह्म के मन में यह धारणा बनी कि क्षर पुरुष अलग बहुत सुखी होगा। यह विचार कर अन्तरात्मा से भिन्न स्थान प्राप्ति की ठान ली। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने हठ योग नहीं किया, परन्तु सहज समाधी का अभ्यास केवल अलग राज्य प्राप्ति के लिए विशेष कसक के साथ करता रहा। अलग स्थान प्राप्त करने के लिए पागलों की तरह विचरने लगा, खाना-पीना भी त्याग दिया। अन्य कुछ आत्माऐं उसके वैराग्य पर आसक्त होकर उसे चाहने लगी। पूर्ण प्रभु के पूछने पर परब्रह्म ने अलग स्थान मांगा तथा कुछ हंसात्माओं के लिए भी याचना की। तब कविर्देव ने कहा कि जो आत्मा आपके साथ स्वइच्छा से जाना चाहें उन्हें भेज देता हूँ। पूर्ण प्रभु के पूछने पर कि कौन हंस आत्मा परब्रह्म के साथ जाना चाहता है, सहमति व्यक्त करे। बहुत समय उपरान्त एक हंस ने स्वीकृति दी, फिर देखा-देखी उन सर्व आत्माओं ने भी सहमति व्यक्त कर दी। सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को स्त्री रूप बनाया, उसका नाम ईश्वरी माया (प्रकृति सुरति) रखा तथा अन्य आत्माओं को उस ईश्वरी माया में प्रवेश करके अचिन्त द्वारा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) के पास भेजा। (पतिव्रता पद से गिरने की सजा पाई।) कई युगों तक दोनों सात संख ब्रह्मण्डों में रहे, परन्तु परब्रह्म ने दुर्व्यवहार नहीं किया। ईश्वरी माया की स्वइच्छा से अंगीकार किया तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्रीइन्द्री (योनी) बनाई। ईश्वरी देवी की सहमति से संतान उत्पन्न की। इस लिए परब्रह्म के लोक (सात संख ब्रह्मण्डों) में प्राणियों को तप्तशिला का कष्ट नहीं है तथा वहाँ पशु-पक्षी भी ब्रह्म लोक के देवों से अच्छे चरित्र युक्त हैं। आयु भी बहुत लम्बी है, परन्तु जन्म - मृत्यु कर्माधार पर कर्म फल तथा परिश्रम करके ही उदर पूर्ति होती है। स्वर्ग तथा नरक भी ऐसे ही बने हैं। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) को सात संख ब्रह्मण्ड उसके सहज समाधी के अभ्यास की इच्छा रूपी भक्ति की कमाई के प्रतिफल में प्रदान किया तथा सत्यलोक से भिन्न स्थान पर गोलाकार परिधि में बन्द करके सात संख ब्रह्मण्डों सहित अक्षर ब्रह्म व ईश्वरी माया को निष्कासित कर दिया।

पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) असंख ब्रह्मण्डों जो सत्यलोक आदि में हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों का भी प्रभु (मालिक) है अर्थात् परमेश्वर कविर्देव कुल का मालिक है। (कृप्या देखें असंख ब्रह्मण्डों का चित्र इसी पुस्तक के पृष्ठ नं. 15 पर)

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी आदि के चार-चार भुजाएँ तथा 16 कलाऐं हैं तथा प्रकृति देवी (दुर्गा) की आठ भुजाऐं हैं तथा 64 कला हैं। ब्रह्म (क्षर पुरुष) की एक हजार भुजाऐं हैं तथा एक हजार कला है तथा इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों का प्रभु है। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) की दस हजार भुजाऐं हैं तथा दस हजार कला हैं तथा सात संख ब्रह्मण्डों का प्रभु है। {**परब्रह्म की दस हजार कला हैं का प्रमाण :-** श्री विष्णु पुराण प्रथम अंश अध्याय 9 श्लोक 53 (पृष्ठ 32) में है "यस्य अयुतांश अयुतांशे विश्वशक्तिरियं स्थिता। पर ब्रह्मस्वरूपम् यत् प्रणमाम् अस्तम् अव्ययम् (53) हिन्दी अनुवाद :– जिसके अयुतांश (दस हजारवें अंश) के अयुतांश में अर्थात् दस हजार वें अंश के दस हजार वें अंश में

यह विश्व रचना की शक्ति स्थित है तथा जो परब्रह्मस्वरूप है उस अव्यक्त को हम प्रणाम करते हैं। (53) इस प्रमाण से सिद्ध हुआ कि परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष की दस हजार कलांऐं हैं जो स्वसम वेद अर्थात् तत्वज्ञान के प्रमाण का समर्थन है। क्योंकि यह तत्व ज्ञान परमेश्वर कबीर जी ने प्रथम सत्ययुग में ऋषि सत्य सुकृत नाम से प्रकट होकर श्री ब्रह्मा जी को सुनाया था। इसलिए श्री ब्रह्मा जी ने कुछ ज्ञान उस तत्वज्ञान से तथा शेष अपना अनुभव के ज्ञान का मिश्रण करके पुराण ज्ञान कहा है।} ***पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष अर्थात् सतपुरुष) की असंख्य भुजाऐं तथा असंख्य कलाऐं हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड व परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों सहित असंख ब्रह्मण्डों का प्रभु है। प्रत्येक प्रभु अपनी सर्व भुजाओं को समेट कर केवल दो भुजाऐं भी रख सकते हैं तथा जब चाहें सर्व भुजाओं को भी प्रकट कर सकते हैं। पूर्ण परमात्मा इस परब्रह्म के प्रत्येक ब्रह्मण्ड में भी अलग स्थान बनाकर अन्य रूप में गुप्त रहता है। यूं समझो जैसे एक घूमने वाला कैमरा बाहर लगा देते हैं तथा अन्दर टी.वी. (टेलीविजन) रख देते हैं। टी.वी. पर बाहर का सर्व दृश्य नजर आता है तथा दूसरा टी.वी. बाहर रख कर अन्दर का कैमरा स्थाई करके रख दिया जाए। उसमें केवल अन्दर बैठे प्रबन्धक का चित्र दिखाई देता है। जिससे सर्व कर्मचारी सावधान रहते हैं।***

इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा अपने सतलोक में बैठ कर सर्व को नियंत्रित किए हुए है तथा प्रत्येक ब्रह्मण्ड में भी सतगुरु कविर्देव विद्यमान रहते हैं। जैसे सूर्य दूर होते हुए भी अपना प्रभाव अन्य लोकों में बनाए हुए है।

''वेदों में सृष्टि रचना का प्रमाण''

"पवित्र अथर्ववेद में सृष्टि रचना का प्रमाण"

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 1 :–

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः।।1।।

संधिछेद :– ब्रह्म जज्ञानम् प्रथमम् पुरस्तात् विसिमतः सुरुचः वेनः आवः सः बुध्न्याः उपमा अस्य विष्ठाः सतः च योनिम् असतः च वि वः। (1)

अनुवाद :– (प्रथमम्) प्राचीन अर्थात् सनातन (ब्रह्म) परमात्मा ने (जज्ञानम्) प्रकट होकर अपनी सूझ–बूझ से (पुरस्तात्) सर्व प्रथम समय में शिखर में अर्थात् सतलोक आदि को (सुरुचः) स्वइच्छा से बड़े चाव से स्वप्रकाशित (विसिमतः) सीमा रहित अर्थात् विशाल सीमा वाले भिन्न लोकों को उस (वेनः) रचनहार ने ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर (आवः) सुरक्षित किया (च) तथा (सः) वह पूर्ण ब्रह्म ही सर्व रचना करता है इसलिए उसी मूल मालिक ने मूल स्थान सतलोक की रचना की है इसलिए उसी (बुध्न्याः) मूल मालिक ने (योनिम्) मूलस्थान सत्यलोक को रच कर (अस्य) इस सतलोक के (उपमा) उपमा के सदृश अर्थात् मिलते जुलते (सतः) अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म के लोक कुछ स्थाई (च) तथा (असतः) क्षर पुरुष के अस्थाई अर्थात् नाश्वान लोक आदि (वि वः) आवास स्थान भिन्न (विष्ठाः) स्थापित किए।

भावार्थ :- पवित्र वेदों को बोलने वाला ब्रह्म(काल) कह रहा है कि सनातन परमेश्वर ने स्वयं अनामय(अनामी) लोक से सत्यलोक में प्रकट होकर अपनी सूझ-बूझ से कपड़े की तरह रचना करके ऊपर के सतलोक आदि को भिन्न-2 सीमा युक्त स्वप्रकाशित अजर - अमर अर्थात् अविनाशी ठहराए तथा नीचे के परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्मण्ड व इनमें छोटी-से छोटी रचना भी उसी परमात्मा ने अस्थाई की है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 2 :–

इयं पित्र्या राष्ट्र्येत्वग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः।
तस्मा एतं सुरुचं ह्मारमह्मं घर्मं श्रीणन्तु प्रथमाय धास्यवे।।2।।

संधिछेद :– इयम् पित्र्या राष्ट्रि एतु अग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः तस्मा एतम् सुरुचम् हवारमह्मम धर्मम् श्रीणान्तु प्रथमाय धास्यवे (2)

अनुवाद :– (इयम्) इसी (पित्र्या) जगतपिता परमेश्वर से (एतु) इस (अग्रे) सर्वोतम् (प्रथमाय) सर्व से पहली माया परानन्दनी (राष्ट्रि) राजेश्वरी शक्ति अर्थात् पराशक्ति जिसे आकर्षण शक्ति भी कहते हैं, उत्पन्न हुई जिस को (जनुषे) उत्पन्न करके (भुवनेष्ठाः) लोक स्थापना की (तस्मा) उसी परमेश्वर ने (सुरुचम्) बड़े चाव के साथ स्वइच्छा से (एतम्) इस (प्रथमाय) सर्व प्रथम उत्पन्न की गई माया अर्थात् पराशक्ति के द्वारा (ह्मारमह्मम्) एक दूसरे के वियोग को रोकने अर्थात् आकर्षर्ण शक्ति के (श्रीणान्तु) गुरूत्व आकर्षण को पूर्ण परमात्मा ने आदेश दिया कि सृष्टि समय तक बना रहो उस कभी समाप्त न होने वाले (धर्मम्) स्वभाव अर्थात् गुरूत्व आकर्षण से (धास्यवे) धारण करके ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर रोके हुए है।

भावार्थ :- जगतपिता परमेश्वर ने अपनी शब्द शक्ति से राष्ट्री अर्थात् सबसे पहली माया राजेश्वरी उत्पन्न की तथा उसी पराशक्ति के द्वारा एक-दूसरे को आकर्षण शक्ति से रोकने वाले कभी न समाप्त होने वाले गुण से उपरोक्त सर्व ब्रह्मण्डों को स्थापित किया है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 3 :–

प्र यो जज्ञे विद्वानस्य बन्धुर्विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति।
ब्रह्म ब्रह्मण उज्जभार मध्यान्नीचैरुच्चैः स्वधा अभि प्र तस्थौ।।3।।

संधिछेद :– प्र यः जज्ञे विद्वानस्य बन्धुः विश्वा देवानाम् जनिमा विवक्ति ब्रह्मः ब्रह्मणः उज्जभार मध्यात् निचैः उच्चैः स्वधा अभिः प्रतस्थौ। (3)

अनुवाद :– (प्र) सर्व प्रथम (देवानाम्) देवताओं व ब्रह्मण्डों की (जज्ञे) उत्पति के ज्ञान को (विद्वानस्य) जिज्ञासु भक्त का (यः) जो (बन्धुः) वास्तविक साथी (जनिमा) पूर्ण परमात्मा ही अपने निज सेवक को अपने द्वारा सृजन किए हुए सर्व ब्रह्मण्डों तथा सर्व देवों अर्थात् आत्माओं के विषय में (विवक्ति) स्वयं ही ठीक–ठीक विस्तार पूर्वक बताता है कि (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा ने (मध्यात्) अपने मध्य से अर्थात् शब्द शक्ति से (ब्रह्मः) ब्रह्म/क्षर पुरूष अर्थात् काल को (उज्जभार) उत्पन्न करके (विश्वा) सारे संसार को अर्थात् सर्व लोकों को (उच्चैः) ऊपर सत्यलोक आदि (निचैः) नीचे परब्रह्म व ब्रह्म के सर्व ब्रह्मण्ड (स्वधा) अपनी धारण करने वाली (अभिः प्रतस्थौ) आकर्षण शक्ति से दोनों को अच्छी प्रकार स्थित किया।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान तथा सर्व आत्माओं की उत्पत्ति का ज्ञान अपने निजी दास को स्वयं ही सही बताता है कि पूर्ण परमात्मा ने अपने मध्य अर्थात् अपने शरीर से अपनी शब्द शक्ति के द्वारा ब्रह्म(क्षर पुरुष/काल) की उत्पत्ति की तथा सर्व ब्रह्मण्डों (ऊपर सतलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक आदि तथा नीचे परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्मण्डों) को अपनी धारण करने वाली आकर्षण शक्ति से ठहराया हुआ है।

जैसे पूर्ण परमात्मा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने अपने निजी सेवक अर्थात् सखा श्री धर्मदास जी, आदरणीय गरीबदास जी आदि को अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया। उपरोक्त वेद मंत्र भी यही समर्थन कर रहा है।

इस अथर्ववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 मन्त्र 3 में स्पष्ट है कि ब्रह्म की उत्पति पूर्ण ब्रह्म से हुई है। यही प्रमाण आगे लिखे ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मन्त्र 5 में है तथा यही प्रमाण गीता अध्याय 3 मन्त्र 14-15 में है कि अविनाशी परमात्मा से ब्रह्म की उत्पति हुई है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 4

सः हि दिवः स पृथिव्या ऋतस्था मही क्षेमं रोदसी अस्कभायत्।
महान् मही अस्कभायद् वि जातो द्यां सद्म पार्थिवं च रजः।।4।।

संधिछेद :– सः हि दिवः सः पृथिव्या ऋतस्था मही क्षेमम् रोदसी अकस्भायत् महान् मही अस्कभायद विजातः धाम् सदम् पार्थिवम् च रजः। (4)

अनुवाद – (सः) वह वही परमात्मा है जिसने (हि) निःसंदेह ही (दिवः) ऊपर के चारों दिव्य लोक जैसे सत्य लोक, अलख लोक अगम लोक तथा अनामी/अकह लोक अर्थात् दिव्य गुणों युक्त लोकों को (ऋतस्था) सत्य स्थिर अर्थात् अविनाशी रूप से स्थिर किया है (सः) वह परमात्मा सर्व रचना करता है उसी ने उन्हीं के समान (मही) पृथ्वी वाले नीचे के सर्व लोक जैसे परब्रह्म के सात संख तथा ब्रह्म/काल के इक्कीस ब्रह्मण्ड (पृथिव्या) पृथ्वी तत्व से (क्षेमम्) सुरक्षा के साथ (अस्कभायत्) ठहराया (रोदसी) आकाश तत्व तथा पृथ्वी तत्व दोनों से ऊपर नीचे के ब्रह्माण्डों को उसी {**जैसे आकाश एक सुक्ष्म तत्व है, आकाश का गुण शब्द है, पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के लोक शब्द रूप रचे जो तेजपुंज के बनाए हैं तथा नीचे के परब्रह्म/अक्षर पुरूष के सप्त संख ब्रह्मण्ड तथा ब्रह्म/क्षर पुरूष के इक्कीस ब्रह्मण्डों को पृथ्वी तत्व से अस्थाई रचा**} (महान्) पूर्ण परमात्मा ने (पार्थिवम्) पृथ्वी वाले (वि) भिन्न–भिन्न (धाम्) लोक (च) और (सदम्) आवास स्थान (मही) पृथ्वी तत्व से (रजः) प्रत्येक ब्रह्मण्ड में छोटे–छोटे लोकों की (जातः) उसी परमात्मा ने रचना की तथा (अस्कभायत्) स्थिर किया।

भावार्थ :- ऊपर के चारों लोक सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक, यह तो अजर-अमर स्थाई अर्थात् अविनाशी रचे हैं तथा नीचे के ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोकों को अस्थाई रचना करके तथा अन्य छोटे-छोटे लोक भी उसी परमेश्वर ने रच कर अस्थाई स्थापित किए।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 5

स बुध्न्यादाष्ट्र जनुषोभ्यग्रं बृहस्पतिर्देवता तस्य सम्राट्।
अहर्यच्छुक्रं ज्योतिषो जनिष्टाथ द्युमन्तो वि वसन्तु विप्राः।।5।।

संधिछेद :– सः बुध्न्यात् आष्ट्र जनुषेः अभि अग्रम् बृहस्पतिः देवता तस्य सम्राट अहः यत् शुक्रम् ज्योतिषः जनिष्ट अथ द्युमन्तः वि वसन्तु विप्राः। (5)

अनुवाद :– (सः) वह (बुध्न्यात्) मूल मालिक है जिस से (अभि–अग्रम्) सर्व प्रथम वाले सतलोक स्थान पर (आष्ट्र) अष्टँगी माया/दुर्गा अर्थात् प्रकृति देवी (जनुषेः) उत्पन्न हुई क्योंकि नीचे के परब्रह्म व ब्रह्म के लोकों का प्रथम स्थान सतलोक है यह तीसरा धाम भी कहलाता है (तस्य) इस दुर्गा का भी मालिक यही (सम्राट) राजाधिराज (बृहस्पतिः) सबसे बड़ा पति व जगतगुरु (देवता) परमेश्वर है। (यत्) जिस से (अहः) सबका वियोग हुआ (अथ) इसके पश्चात् (ज्योतिषः) ज्योति रूप निरंजन अर्थात् काल के (शुक्रम्) वीर्य अर्थात् बीज शक्ति से (जनिष्ट) दुर्गा के उदर से उत्पन्न होकर (विप्राः) ब्राह्मण अर्थात् भक्त आत्माएं (द्युमन्तः) मनुष्य लोक तथा स्वर्ग लोक में ज्योति निरंजन के आदेश से दुर्गा ने कहा (वि) भिन्न–2 (वसन्तु) निवास करो, अर्थात् वे निवास करने लगी।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के चारों लोकों में से जो नीचे से सबसे प्रथम अर्थात् सत्यलोक में आष्ट्रा अर्थात् अष्टंगी(प्रकृति देवी/दुर्गा) की उत्पत्ति की। यही राजाधिराज, जगतगुरु, पूर्ण परमेश्वर(सतपुरुष) है जिससे सबका वियोग हुआ है। फिर सर्व प्राणी ज्योति निरंजन(काल) के (वीर्य) बीज से दुर्गा (आष्ट्रा) के गर्भ द्वारा उत्पन्न होकर स्वर्ग लोक व पृथ्वी लोक पर निवास करने लगे।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 6

नूनं तदस्य काव्यो हिनोति महो देवस्य पूर्व्यस्य धाम।

एष जज्ञे बहुभिः साकमित्था पूर्वे अर्धे विषिते ससन् नु।।6।।

संधिछेद :– नूनम् तत् अस्य काव्यः महः देवस्य पूर्व्यस्य धाम हिनोति पूर्वे विषिते एष जज्ञे बहुभिः साकम् इत्था अर्धे ससन् नु। (6)

अनुवाद – (नूनम्) निसंदेह (तत्) वह पूर्ण परमेश्वर अर्थात् तत् ब्रह्म ही (अस्य) इस (काव्यः) भक्त आत्मा जो पूर्ण परमेश्वर की भक्ति विधिवत करता है को वापिस (महः) सर्वशक्तिमान (देवस्य) परमेश्वर के (पूर्व्यस्य) पहले के (धाम) लोक में अर्थात् सत्यलोक में (हिनोति) भेजता है (पूर्वे) पहले वाले (विषिते) विशेष चाहे हुए (एष) इस परमेश्वर को व (जज्ञे) सृष्टि उत्पति के ज्ञान से यर्थाथता को जान कर (बहुभिः) बहुत आनन्द (साकम्) के साथ (अर्धे) आधा (ससन्) सोता हुआ (इत्था) विधिवत् इस प्रकार (नु) सच्ची लगन से स्तुति करता है।

भावार्थ :- वही पूर्ण परमेश्वर स्वयं जगत गुरु अर्थात् तत्वदर्शी सन्त के रूप में प्रकट होकर सत्य साधना करने वाले साधक को उसी पहले वाले स्थान (सत्यलोक) में ले जाता है, जहाँ से बिछुड़ कर आऐ थे। वहाँ उस वास्तविक सुखदाई प्रभु को प्राप्त करके खुशी से आत्म विभोर होकर मस्ती से स्तुति करता है कि हे परमात्मा असंख्य जन्मों के भूले-भटकों को वास्तविक ठिकाना मिल गया। इसी का प्रमाण पवित्र ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16 में भी है।

आदरणीय गरीबदास जी को इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) स्वयं सत्यभक्ति प्रदान करके सत्यलोक लेकर गए थे, तथा सत्य लोक दिखाकर वापस छोड़ा था। तब अपनी अमृतवाणी में आदरणीय गरीबदास जी महाराज ने कहाः-

गरीब, अजब नगर में ले गए, हमकुँ सतगुरु आन। झिलके बिम्ब अगाध गति, सुते चादर तान।।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बृहस्पतिं नमसाव च गच्छात्।
त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान्।।7।।

संधिछेद :– यः अथर्वाणम् पित्तरम देवबन्धुम बृहस्पतिम नमसा अव च गच्छात त्वम विश्वेषाम् जनिता यथा सः कविर्देवः न दभायत् स्वधावान्। (7)

अनुवाद :– (यः) जो (अथर्वाणम्) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम्) जगत पिता (देव बन्धुम्) भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार (बृहस्पतिम्) सबसे बड़ा मालिक अर्थात् परमेश्वर (च) तथा (नमसा) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को (अव) सुरक्षा के साथ (गच्छात्) सतलोक जा चुके हैं तथा अन्य को सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम्) सर्व ब्रह्मण्डों को (जनिता) रचने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत्) काल की तरह धोखा न देने वाले (स्वधावान्) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्–देवः) कविर्देव है। भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं। क्योंकि कविर्=कबिर् फिर अपभ्रंश होकर कबीर कहा जाने लगा तथा देव=परमेश्वर अर्थ है। इसलिए कबीर परमेश्वर उसी काशी वाले जुलाहे का सम्बोधन वेदों में है।

भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।

जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) सबसे बड़ा स्वामी अर्थात् परमेश्वर, आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार, काल(ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्मण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम्)

पिता तथा (बन्धु) भाई भी वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणम् त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।

"पवित्र ऋग्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण"

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 1

सहस्रशीर्षा पुरूषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतों वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ।। 1 ।।

संधिछेद :– सहस्रशिर्षा पुरूषः सहस्राक्षः सहस्रपात् स भूमिम् विश्वतः वृत्वा अत्यातिष्ठत् दशंगुलम् । (1)

अनुवाद :– (पुरूषः) विराट रूप काल भगवान अर्थात् क्षर पुरूष (सहस्रशिर्षा) हजार सिरों वाला (सहस्राक्षः) हजार आँखों वाला (सहस्रपात्) हजार पैरों वाला (स) वह काल (भूमिम्) पृथ्वी वाले इक्कीस ब्रह्मण्डों को (विश्वतः) सब ओर से (दशंगुलम्) दसों अंगुलियों से अर्थात् पूर्ण रूप से काबू किए हुए (वृत्वा) गोलाकार घेरे में घेर कर (अत्यातिष्ठत्) इस से बढ़कर अर्थात् अपने काल लोक में सबसे न्यारा भी इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में ठहरा है अर्थात् रहता है।

भावार्थ :- इस मंत्र में विराट (काल-ब्रह्म) का वर्णन है। (गीता अध्याय 10-11 में भी इसी काल-ब्रह्म का ऐसा ही वर्णन है गीता अध्याय 11 श्लोक 46 में अर्जुन ने कहा है कि हे सहस्रबाहु अर्थात् हजार भुजा वाले आप अपने चतुर्भुज में दर्शन दीजिए। क्योंकि अर्जुन काल का वास्तविक रूप भी आँखों देख रहा था तथा अपनी बुद्धि से उसे कृष्ण अर्थात् विष्णु मान रहा था) जिसके हजारों हाथ, पैर, हजारों आँखे, कान आदि हैं वह विराट रूप काल प्रभु अपने आधीन सर्व प्राणियों को पूर्ण काबू करके अर्थात् 20 ब्रह्मण्डों को गोलाकार परिधी में रोककर स्वयं इनसे ऊपर (अलग) इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में बैठा है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 2

पुरूष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ।। 2 ।।

संधिछेद :– पुरूष एव इदम् सर्वम् यत् भूतम् यत् च भाव्यम् उत अमृतत्वस्य इशानः यत् अन्नेन अतिरोहति । (2)

अनुवाद :– (एव) परब्रह्म ही कुछ (पुरूष) भगवान जैसे लक्षणों युक्त है (च) और (इदम्) इस के लोक में यह (यत्) जो (भूतम्) उत्पन्न हुआ है (यत्) जो (भाव्यम्) भविष्य में होगा (सर्वम्) सब (यत्) प्रयत्न से अर्थात् मेहनत द्वारा (अन्नेन) अन्न से (अतिरोहति) विकसित होता है। यह अक्षर पुरूष भी (उत) सन्देह युक्त (अमृतत्वस्य) मोक्ष का (इशानः) स्वामी है। अर्थात् भगवान तो अक्षर पुरूष भी कुछ सही है परन्तु पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है।

भावार्थ :- इस मंत्र में परब्रह्म (अक्षर पुरुष) का विवरण है जो कुछ भगवान वाले लक्षणों से युक्त है, परन्तु इसकी भक्ति से भी पूर्ण मोक्ष नहीं है, इसलिए इसे संदेहयुक्त मुक्ति दाता कहा है। इसे कुछ प्रभु के गुणों युक्त इसलिए कहा है कि यह काल की तरह तप्तशिला पर भून कर नहीं खाता। परन्तु इस परब्रह्म के लोक में भी प्राणियों को परिश्रम करके कर्माधार पर ही प्राप्त होता है तथा अन्न से ही सर्व प्राणियों के शरीर विकसित होते हैं, जन्म तथा मृत्यु का समय भले ही काल (क्षर पुरुष) से अधिक है, परन्तु फिर भी उत्पत्ति प्रलय तथा चौरासी लाख योनियों में यातना बनी रहती है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 3

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरूषः।
पादोस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्याम्ृतं दिवि।।3।।

संधिछेद :– एतावान अस्य महिमा अतः ज्यायान् च पुरूषः पादः अस्य विश्वा भूतानि त्रि पाद् अस्य अमृतम् दिवि। (3)

अनुवाद :– (अस्य) इस अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म की तो (एतावान्) इतनी ही (महिमा) प्रभुता है। (च) तथा (पुरूषः) वह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर तो (अतः) इससे भी (ज्यायान्) बड़ा है (विश्वा) समस्त (भूतानि) क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष तथा इनके लोकों में तथा सत्यलोक तथा इन लोकों में जितने भी प्राणी हैं (अस्य) इस पूर्ण परमात्मा परम अक्षर पुरूष का (पादः) एक पैर मात्र है अर्थात् एक अंश मात्र है। (अस्य) इस परमेश्वर के (त्रि) तीन (दिवि) दिव्य लोक जैसे सत्यलोक– अलख लोक–अगम लोक (अमृतम्) अविनाशी (पाद्) दूसरा पैर है अर्थात् जो भी सर्व ब्रह्मण्डों में उत्पन्न है वह सत्यपुरूष पूर्ण परमात्मा का ही अंश अर्थात् उन्हीं की रचना है।

भावार्थ :- इस उपरोक्त मंत्र 2 में वर्णित अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की तो इतनी ही महिमा है तथा वह पूर्ण पुरुष कविर्देव तो इससे भी बड़ा है अर्थात् सर्वशक्तिमान है तथा सर्व ब्रह्मण्ड उसी के अंश मात्र पर ठहरे हैं। इस मंत्र में तीन लोकों का वर्णन इसलिए है क्योंकि चौथा अनामी(अनामय) लोक अन्य रचना से पहले का है। यही तीन प्रभुओं (क्षर पुरूष-अक्षर पुरूष तथा इन दोनों से अन्य परम अक्षर पुरूष) का विवरण श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 संख्या 16-17 में तथा गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 18 से 22 में भी है इस प्रकार तीन अव्यक्त प्रभु हैं {इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास साहेब जी कहते हैं कि :- गरीब, जाके अर्ध रूम पर सकल पसारा, ऐसा पूर्ण ब्रह्म हमारा।।

गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरु पुरुष कबीर हैं, कुल के सृजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय दादू साहेब जी कह रहे हैं कि :-

जिन मोकुं निज नाम दिया, सोई सतगुरु हमार।
दादू दूसरा कोए नहीं, कबीर सृजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय नानक साहेब जी देते हैं कि :-

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर कून करतार। हक्का कबीर करीम तू, बेएब परवरदिगार।।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब, पृष्ठ नं. 721, महला 1, राग तिलंग)

कून करतार का अर्थ होता है सर्व का रचनहार, अर्थात् शब्द शक्ति से सर्व रचना करने के कारण शब्द स्वरूपी प्रभु। हक्का कबीर का अर्थ है सत् कबीर, करीम का अर्थ दयालु, परवरदिगार का अर्थ सर्व सुखदाई परमात्मा है।}

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 4

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरूषः पादोस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्व ङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि।।4।।

संधिछेद :– त्रि पाद ऊर्ध्वः उदैत् पुरूषः पादः अस्य इह अभवत् पूनः ततः विश्वङ् व्यक्रामत् सः अशनानशने अभि। (4)

अनुवाद :– (पुरूषः) यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् अविनाशी परमात्मा (ऊर्ध्वः) ऊपर (त्रि) तीन लोक जैसे सत्यलोक–अलख लोक–अगम लोक रूप (पाद) पैर अर्थात् ऊपर के हिस्से में (उदैत्) प्रकट होता है अर्थात् विराजमान है (अस्य) इसी परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म का (पादः) एक पैर अर्थात् एक हिस्सा जगत रूप (पुनर्) फिर (इह)

यहाँ (अभवत्) प्रकट होता है (ततः) इसलिए (सः) वह अविनाशी पूर्ण परमात्मा (अशनानशने) खाने वाले काल अर्थात् क्षर पुरूष व न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष के भी (अभि)ऊपर (विश्वङ्)सर्वत्र (व्यक्रामत्)व्याप्त है अर्थात् उसकी प्रभुता सर्व ब्रह्माण्डों व सर्व प्रभुओं पर है वह कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है।

भावार्थ :- यही सर्व सृष्टि रचन हार प्रभु अपनी रचना के ऊपर के हिस्से में तीनों स्थानों (सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) में तीन रूप में स्वयं प्रकट होता है अर्थात् स्वयं ही विराजमान है। यहाँ अनामी लोक का वर्णन इसलिए नहीं किया क्योंकि अनामी लोक में कोई रचना नहीं है तथा अनामी अर्थात् अकह लोक अन्य रचना से पूर्व का है। फिर कहा है कि उसी परमात्मा के सत्यलोक से बिछुड़ कर नीचे के ब्रह्म व परब्रह्म के लोक उत्पन्न होते हैं और वह पूर्ण परमात्मा खाने वाले ब्रह्म अर्थात् काल से (क्योंकि ब्रह्म/काल विराट शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को खाता है) तथा न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष से (परब्रह्म प्राणियों को खाता नहीं, परन्तु जन्म-मृत्यु, कर्मदण्ड ज्यों का त्यों बना रहता है) भी ऊपर सर्वत्र व्याप्त है अर्थात् इस पूर्ण परमात्मा की प्रभुता सर्व के ऊपर है, कबीर परमेश्वर ही कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है जैसे सूर्य अपने प्रकाश को सर्व के ऊपर फैला कर प्रभावित करता है, ऐसे पूर्ण परमात्मा ने अपनी शक्ति रूपी रेंज(क्षमता) को सर्व ब्रह्मण्डों को नियन्त्रित रखने के लिए सर्व ओर छोड़ा हुआ है। जैसे मोबाइल फोन का टावर एक देशीय होते हुए अपनी शक्ति अर्थात् मोबाइल फोन की रेंज(क्षमता) सर्वत्र अपनी सीमा में फैलाए रहता है। इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा ने अपनी निराकार शक्ति को सर्वव्यापक किया है। जिससे पूर्ण परमात्मा सर्व ब्रह्मण्डों को एक स्थान पर बैठ कर नियन्त्रित रखता है।

उपरोक्त तीन प्रभुओं (1. क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म, 2. अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म 3. परम अक्षर पुरूष अर्थात् पूर्ण ब्रह्म का प्रमाण पवित्र श्री मद्भगवत्गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 तथा अध्याय 8 श्लोक 1 तथा 3 में भी है। क्योंकि श्रीमद्भगवत् गीता जी पवित्र चारों वेदों का सारांश है)

इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास जी महाराज दे रहे हैं (अमृतवाणी राग कल्याण)

तीन चरण चिन्तामणी साहेब, शेष बदन पर छाए।
माता, पिता, कुलन न बन्धु, ना किन्हें जननी जाये।।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 5

तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरूषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः।।5।।

संधिछेद :– तस्मात् विराट अजायत विराजः अधि पुरूषः सः जातः अत्यरिच्यत पश्चात् भूमिम् अथः पुरः। (5)

अनुवाद :– (तस्मात्) उसके पश्चात् उस परमेश्वर सत्यपुरूष की शब्द शक्ति से (विराट्) विराट अर्थात् ब्रह्म, जिसे क्षर पुरूष व काल भी कहते हैं (अजायत) उत्पन्न हुआ है (पश्चात्) इसके बाद (विराजः) विराट पुरूष अर्थात् काल भगवान से (अधि) बड़े (पुरूषः) परमेश्वर ने (भूमिम्) पृथ्वी वाले लोक अर्थात् काल ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोक को (अत्यरिच्यत) अच्छी तरह रचा (अथः) फिर (पुरः) अन्य छोटे–छोटे लोक (सः) वह (जातः) पूर्ण परमेश्वर ही उत्पन्न किया करता है अर्थात् उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व लोकों को स्थापित किया।

भावार्थ :- उपरोक्त मंत्र 4 में वर्णित तीनों लोकों (अगमलोक, अलख लोक तथा सतलोक) की रचना के पश्चात पूर्ण परमात्मा ने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) की उत्पति की अर्थात् उसी सर्व

शक्तिमान परमात्मा पूर्ण ब्रह्म कविर्देव(कबीर प्रभु) से ही विराट अर्थात् ब्रह्म(काल) की उत्पत्ति हुई {यही प्रमाण गीता अध्याय 3 मन्त्र 14 में है कि अक्षर पुरूष से अर्थात् अविनाशी परमात्मा से ब्रह्म की उत्पत्ति हुई।} ***उस पूर्ण ब्रह्म ने भूमिम् अर्थात् पृथ्वी तत्व से ब्रह्म तथा परब्रह्म के उसी ने छोटे-बड़े सर्व लोकों की रचना की। वह पूर्णब्रह्म इस विराट भगवान अर्थात् ब्रह्म से भी बड़ा है अर्थात् इसका भी मालिक है।***

इस ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मन्त्र 5 में स्पष्ट है कि ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष/काल की उत्पति पूर्ण परमात्मा से हुई है। यही प्रमाण पूर्वोक्त अथर्ववेद काण्ड 4 में अनुवाक 1 मन्त्र 3 में है तथा यही प्रमाण श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 3 मन्त्र 14-15 में है कि ब्रह्म की उत्पति अक्षरम् सर्वगतम् ब्रह्म अर्थात् अविनाशी सर्व व्यापक परमात्मा से हुई है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 15

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरूषं पशुम्।।15।।

संधिछेद :– सप्त अस्य आसन् परिधयः त्रिसप्त समिधः कृताः देवा यत् यज्ञम् तन्वानाः अबध्नन् पुरूषम् पशुम्। (15)

अनुवाद :– (सप्त) सात संख ब्रह्मण्ड तो परब्रह्म के तथा (त्रिसप्त) इक्कीस ब्रह्मण्ड काल ब्रह्म के (समिधः) कर्मदण्ड दुःख रूपी आग से दुःखी (कृताः) करने वाले (परिधयः) गोलाकार घेरा रूप सीमा में (आसन्) विद्यमान हैं (यत्) जो (पुरूषम्) पूर्ण परमात्मा की (यज्ञम्) विधिवत् धार्मिक कर्म अर्थात् पूजा करता है (पशुम्) बलि के पशु रूपी काल के जाल में कर्म बन्धन में बंधे (देवा) भक्तात्माओं को (तन्वानाः) काल के द्वारा रचे अर्थात् फैलाये पाप कर्म बंधन जाल से (अबध्नन्) बन्धन रहित करता है अर्थात् बन्दी छुड़ाने वाला बन्दी छोड़ है।

भावार्थ :- वह पूर्ण परमात्मा सात संख ब्रह्मण्ड परब्रह्म के तथा इक्कीस ब्रह्मण्ड ब्रह्म के हैं जिन में गोलाकार सीमा में बंद पाप कर्मों की आग में जल रहे प्राणियों को वास्तविक पूजा विधि बता कर सही उपासना करवाता है जिस कारण से बली दिए जाने वाले पशु की तरह जन्म-मृत्यु के काल (ब्रह्म) के खाने के लिए तप्त शिला के कष्ट से पीड़ित भक्तात्माओं को काल के कर्म बन्धन के फैलाए जाल को तोड़कर बन्धन रहित करता है अर्थात् बंध छुड़वाने वाला बन्दी छोड़ है। इसी का प्रमाण पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 में है कि कविरंघारिसि=(कविर्) कबिर परमेश्वर (अंघ) पाप का (अरि) शत्रु (असि) है अर्थात् पाप विनाशक कबीर है। बम्भारिसि=(बम्भारि) बन्धन का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर (असि) है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।16।।

संधिछेद :– यज्ञेन यज्ञम् अयजन्त देवाः तानि धर्माणि प्रथमानि आसन् ते ह नाकम् महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः। (16)

अनुवाद :– जो (देवाः) देव स्वरूप भक्तात्मायें (यज्ञेन) सत्य भक्ति धार्मिक कर्म के आधार से अर्थात् शास्त्रवर्णीत विधि अनुसार (यज्ञम्) यज्ञ रूपी धार्मिक (अयजन्त्) पूजा करते हैं (तानि) वे (धर्माणि) धार्मिक शक्ति सम्पन्न (प्रथमानि) मुख्य अर्थात् उत्तम (आसन्) हैं (ते ह) वे ही वास्तव में (महिमानः) महान भक्ति शक्ति युक्त होकर (साध्याः) सफल भक्त जन अपनी भक्ति कमाई के बल द्वारा(नाकम्) पूर्ण सुखदायक परमेश्वर को (सचन्त) भक्ति निमित कारण अर्थात् सत्भक्ति की कमाई से प्राप्त होते हैं, वे वहाँ चले जाते हैं। (यत्र) जहाँ पर (पूर्वे) पहले वाली सृष्टि के (देवाः) देव स्वरूप भक्त आत्मायें (सन्ति) रहती हैं।

भावार्थ :- जो निर्विकार (जिन्होने मांस,शराब, तम्बाकू आदि नशीली व अखाद्य वस्तुओं का सेवन करना त्याग दिया है तथा अन्य बुराईयों से रहित है) देव स्वरूप भक्त आत्माऐं शास्त्रानुकूल साधना करते हैं वे भक्ति की कमाई से धनी होकर काल के ऋण से मुक्त होकर अपनी सत्य भक्ति की कमाई के कारण उस सर्व सुखदाई परमात्मा को प्राप्त करते हैं अर्थात् सत्यलोक में चले जाते हैं जहाँ पर सर्व प्रथम रची सृष्टि के देव स्वरूप अर्थात् पाप रहित हंस आत्माऐं रहती हैं।

जैसे कुछ आत्माऐं तो काल (ब्रह्म) के जाल में फंस कर यहाँ आ गई, कुछ परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्मण्डों में आ गई, फिर भी असंखों आत्माऐं जिनका विश्वास पूर्ण परमात्मा में अटल रहा, जो पतिव्रता पद से नहीं गिरे वे वहीं रह गई, इसलिए यहाँ वही वर्णन पवित्र वेदों ने भी सत्य बताया है। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 के श्लोक संख्या 8 से 10 में वर्णन है कि जो साधक उस पूर्ण परमात्मा (परम दिव्य पुरूष) की साधना अंतिम स्वांस तक करता है वह शास्त्र अनुकूल की गई साधना की कमाई के बल के कारण उस परमात्मा पूर्ण ब्रह्म को प्राप्त होता है अर्थात् उस परम दिव्य पुरूष के पास चला जाता है। इससे सिद्ध हुआ की तीन प्रभु हैं ब्रह्म - परब्रह्म - पूर्णब्रह्म। इन्हीं को 1. ब्रह्म=ईश - क्षर पुरुष 2. परब्रह्म=अक्षर पुरुष - अक्षर ब्रह्म तथा 3. पूर्ण ब्रह्म=परम अक्षर ब्रह्म - परमेश्वर - सतपुरुष आदि पर्यायवाची शब्दों से जाना जाता है।

यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 16 से 20 में स्पष्ट है कि पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) शिशु रूप धारण करके प्रकट होता है तथा अपना निर्मल ज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान (कविर्गीभिः) कबीर वाणी के द्वारा अपने अनुयाईयों को बोल-बोल कर वर्णन करता है। इस कारण से उस परमात्मा को महान कवि की उपाधी से जाना जाता है परन्तु वह कविर्देव वही परमात्मा होता है। वह कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ब्रह्म (क्षर पुरुष) के धाम तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के धाम से भिन्न जो पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) का तीसरा ऋतधाम (सतलोक) है, उसमें नराकार में विराजमान है तथा सतलोक से चौथा अनामी लोक है, उसमें भी यही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अनामी पुरुष रूप में मनुष्य सदृश अर्थात् नराकार में विराजमान है।

''पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण''

(दुर्गा अर्थात् प्रकृति तथा सदा शिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)

पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण तीसरा स्कन्द (गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवाद कर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी जी, पृष्ठ नं. 114 से)

पृष्ठ नं. 114 से 118 तक विवरण है कि कितने ही आचार्य भवानी को सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करने वाली बताते हैं। वह प्रकृति कहलाती है तथा ब्रह्म के साथ अभेद सम्बन्ध है जैसे पत्नी को अर्धांगनी भी कहते हैं अर्थात् दुर्गा, ब्रह्म (काल) की पत्नी है। एक ब्रह्मण्ड की सृष्टि रचना के विषय में राजा श्री परिक्षित के पूछने पर श्री व्यास जी ने बताया कि मैंने श्री नारद जी से पूछा था कि हे देवर्षे ! इस ब्रह्मण्ड की रचना कैसे हुई ? मेरे इस प्रश्न के उत्तर में श्री नारद जी ने कहा कि मैंने अपने पिता श्री ब्रह्मा जी से पूछा था कि हे पिता श्री इस ब्रह्मण्ड की रचना आपने की या श्री विष्णु जी इसके रचयिता हैं या शिव जी ने रचा है ? सच-सच बताने की कृपा करें। तब मेरे पूज्य पिता श्री ब्रह्मा जी

ने बताया कि बेटा नारद, मैंने अपने आपको कमल के फूल पर बैठा पाया था, मुझे नहीं मालूम इस अगाध जल में मैं कहाँ से उत्पन्न हो गया ? एक हजार वर्ष तक पृथ्वी का अन्वेषण करता रहा, कहीं जल का ओर-छोर नहीं पाया। फिर आकशवाणी हुई कि तप करो। एक हजार वर्ष तक तप किया। फिर सृष्टि करने की आकाशवाणी हुई। इतने में मधु और कैटभ नाम के दो राक्षए आए, उनके भय से मैं कमल का डण्ठल पकड़ कर नीचे उतरा। वहाँ भगवान विष्णु जी शेष शैय्या पर अचेत पड़े थे। उनमें से एक स्त्री (प्रेतवत प्रवेश दुर्गा) निकली। वह आकाश में आभूषण पहने दिखाई देने लगी। तब भगवान विष्णु होश में आए। अब मैं तथा विष्णु जी दो थे। इतने में भगवान शंकर भी आ गए। देवी ने हमें विमान में बैठाया तथा ब्रह्म लोक में ले गई। वहाँ एक ब्रह्मा, एक विष्णु तथा एक शिव और देखा। (यह ब्रह्म ही तीन रूप बना कर ऊपर लीला कर रहा है। देखें एक ब्रह्मण्ड का चित्र) फिर एक देवी देखी, उसे देख कर विष्णु जी ने विवेक पूर्वक निम्न वर्णन किया (ब्रह्म काल ने भगवान विष्णु को चेतना प्रदान कर दी, उसको अपने बाल्यकाल की याद आई तब बचपन की कहानी सुनाई)।

पृष्ठ नं. 119-120 पर भगवान विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी से कहा कि यह तीनों की माता है, यही जगत् जननी प्रकृति देवी है। मैंने इस देवी को तब देखा था जब मैं छोटा-सा बालक था, यह मुझे पालने में झुला रही थी।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 123 पर श्री विष्णु जी ने श्री दुर्गा जी की स्तुति करते हुए कहा - तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हीं से उद्भासित हो रहा है, मैं (विष्णु), ब्रह्मा और शंकर हम सभी तुम्हारी कृपा से ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव (जन्म) और तिरोभाव (मृत्यु) हुआ करता है अर्थात् हम तीनों देवता नाशवान हैं, केवल तुम ही नित्य (अविनाशी) हो, जगत जननी हो, प्रकृति देवी हो।

भगवान शंकर बोले - देवी यदि महाभाग विष्णु तुम्हीं से प्रकट (उत्पन्न) हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा भी तुम्हारे ही बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम्हीं हो।

विचार करें :- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी नाशवान हैं। मृत्युंजय (अजर-अमर) व सर्वेश्वर नहीं हैं तथा दुर्गा (प्रकृति) के पुत्र हैं तथा काल ब्रह्म (सदाशिव) इनका पिता है।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 125 पर ब्रह्मा जी ने प्रश्न किया कि हे माता! वेदों में जो ब्रह्म कहा है वह आप ही हैं या कोई अन्य प्रभु है ? इसके उत्तर में यहाँ तो दुर्गा कह रही है कि मैं तथा ब्रह्म एक ही हैं। फिर इसी स्कंद के पृष्ठ नं. 129 पर कहा है कि अब मेरा कार्य सिद्ध करने के लिए विमान पर बैठ कर तुम लोग शीघ्र पधारो (जाओ)। कोई कठिन कार्य उपस्थित होने पर जब तुम मुझे याद करोगे, तब मैं सामने आ जाऊँगी। देवताओं मेरा (दुर्गा का) तथा ब्रह्म का ध्यान तुम्हें सदा करते रहना चाहिए। हम दोनों का स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे कार्य सिद्ध होने में तनिक भी संदेह नहीं है।

उपरोक्त व्याख्या से स्वसिद्ध है कि दुर्गा (प्रकृति) तथा ब्रह्म (काल) ही तीनों देवताओं के माता-पिता हैं तथा ये तीनों देवता, ब्रह्मा, विष्णु व शिव जी नाशवान हैं व पूर्ण शक्ति युक्त नहीं हैं।

तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) का विवाह दुर्गा (प्रकृति देवी) ने किया। पृष्ठ नं. 128-129 पर, तीसरे स्कंद में।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 12

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये।
मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि। १२।

ये, च, एव, सात्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मतः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि।।12।।

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्विकाः) सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मतः,एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परंतु वास्तवमें (तेषु) उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं।(12)

केवल हिन्दी अनुवाद : और भी जो सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति भाव हैं और जो रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति तथा तमोगुण शिव से संहार हैं उन सबको तू मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं ऐसा जान परंतु वास्तवमें उनमें मैं और वे मुझमें नहीं हैं।(12)

भावार्थ :- गीता ज्ञान दाता ब्रह्म कह रहा है कि तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) द्वारा जो भी उत्पति, स्थिति तथा संहार हो रहा है इसका निमित्त मैं ही हूँ। परन्तु मैं इनसे दूर हूँ। कारण है कि काल को शापवश एक लाख प्राणियों का आहार करना होता है। इसलिए मुख्य कारण अपने आप को कहा है तथा काल भगवान तीनों देवताओं से भिन्न ब्रह्म लोक में रहता है तथा इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में रहता है। इसलिए कहा है कि मैं उनमें तथा वे मुझ में नहीं हैं।

श्री मद्देवीभागवत से लेख :-(प्रथम स्कन्ध अध्याय 23,28,29,31,38,39,41,42 पृष्ठ 1 से 8)

(प्रथम स्कन्ध अध्याय 1 पृष्ठ 23) श्री सूत जी ने कहा :-पौराणिकों एवं वैदिकोंका कथन है तथा यह भलीभाँति विदित भी है कि ब्रह्मा जी इस अखिल जगत के सृष्टा हैं। साथ ही वे यह भी कहते हैं कि ब्रह्माजी का जन्म भगवान् विष्णु के नाभिकमल से हुआ है। फिर ऐसी स्थिति में ब्रह्मजी जी स्वतन्त्र सृष्टा कैसे ठहरे? भगवान् विष्णु को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं कह सकते। वे शेषनागकी शय्यापर सोये हुए थे। नाभिसे कमल निकला और उसपर ब्रह्मा जी प्रकट हुए। किंतु वे श्रीहरि भी तो किसी आधारपर अवलम्बित थे। उनके आधारभूत क्षीरसमुद्र को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं माना जा सकता; क्योंकि वह रस है। रस बिना पात्र के ठहरता नहीं, कोई न कोई रसका आधार रहना ही चाहिये। अतएव चराचर जगत् की आधारभूता भगवती जगदम्बिका ही सृष्टा रूप में निश्चित हुई।

(प्रथम स्कन्ध, अध्याय 8 पृष्ठ 41 पर) ऋषियों ने पूछा - महाभाग सूत जी! इस कथा प्रसङ्गको जानकर तो हमें बड़ा ही आश्चर्य हो रहा है; क्योंकि वेद, शास्त्र, पुराण और विज्ञजनों ने सदा यही निर्णय किया है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर—ये ही तीनों सनातन देवता हैं। इनसे बढ़कर इस ब्रह्माण्ड में दूसरा कोई देवता है ही नहीं। ब्रह्माजी सारे संसार की सृष्टि करते हैं। जगत् का संरक्षण भगवान् विष्णु के अधीन रहता है। प्रलय के अवसर पर शंकर जी उसका संहार किया करते हैं। इस जगत्प्रपञ्च के ये ही तीनों देवता कारण हैं। ये वास्तव में एक ही हैं, किंतु कार्यवश सत्त्व, रज और तम आदि गुणों को स्वीकार करके ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर नाम से विख्यात होते हैं। इन तीनों में परमपुरूष भगवान् विष्णु सबसे श्रेष्ठ हैं। वे जगत् के स्वामी और आदिदेव कहलाते हैं। उनमें सब कुछ करने की योग्यता है। दूसरा कोई भी देवता उन अतुल तेजस्वी श्रीविष्णु के समान शक्तिशाली नहीं है। फिर ऐसे सर्वसमर्थ परमप्रभु भगवान् श्री विष्णु योगमाया के अधीन होकर कैसे सो गये? महाभाग! हमें यह महान् संदेह हो रहा है! इस मङ्गलमय प्रसङ्ग को सुनाने की कृपा कीजिये। सुव्रत! आप पहले जिसकी चर्चा कर चुके हैं तथा जिसने

परमप्रभु विष्णु पर भी अधिकार जमा लिया, वह कौन–सी शक्ति है? कहाँ से उसकी सृष्टि हुई, उसमें कैसे इतना पराक्रम हो गया और क्या उसका परिचय है – सब बताने की कृपा करें।

सूत जी कहते हैं - मुनिवरो! चराचर सहित इस त्रिलोकीमें कौन ऐसा है, जो इस संदेहको दूर कर सके। ब्रह्माजी के पुत्र नारद, कपिल आदि दिव्य महापुरूष भी इस प्रश्न का समाधान करने में निरूपाय हो जाते हैं। महानुभावो ! यह प्रश्न बड़ा ही गहन और विचारणीय है। इसके सम्बन्ध में मैं क्या कह सकता हूँ।

(**पृष्ठ 42**) विद्वान पुरूष ऐसा कहते हैं और पुराणों ने भी घोषणा की है कि ब्रह्मा में सृष्टि करने की शक्ति है और विष्णु पालन करने में समर्थ हैं तथा शंकर संहार करने में कुशल है। सूर्य जगत् को प्रकाश देते हैं। शेष और कच्छप पृथ्वी धारण किये रहते हैं। अग्नि में जलाने की और पवन में हिलाने–डुलाने की शक्ति है। सबमें जो शक्ति विराजमान है, वही आद्याशक्ति है। उसी के प्रभाव से शिव भी शिवता को प्राप्त होते हैं। जिसपर उस शक्ति की कृपा न हुई, वह कोई भी हो, शक्तिहीन हो जाता है। बुधजन उसे असमर्थ कहते हैं। सबमें व्यापक रहने वाली जो आद्याशक्ति है, उसी का 'ब्रह्म' इस नाम से निरूपण किया गया है। अतएव विद्वान् पुरूषों को चाहिये कि भलीभाँति विचार करके सदा उसी शक्तिकी उपासना करे। विष्णु में सात्त्विकी शक्ति व्याप्त है। यदि वह उनसे अलग हो जाए तो विष्णु कुछ भी न कर सकें। ब्रह्मा में जो राजसी शक्ति है, उसके बिना वे सृष्टि–कार्य में अयोग्य हैं। शिव में जो तामसी शक्ति है, उसी के प्रभाव से वे संहारलीला करते हैं। मनोयोग–पूर्वक इस प्रकार बार–बार विचार करके सारी बात समझ लेनी चाहिये। वही आद्याशक्ति इस अखिल ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करती और उसका पालन भी करती है। वही इच्छा होने पर इस चराचर जगत् का संहार भी करने में संलग्न हो जाती है। **ब्रह्मा, विष्णु, शंकर, इन्द्र, अग्नि और पवन-ये सभी किसी प्रकार भी स्वतन्त्ररूप से अपने-अपने कार्य का सम्पादन नहीं कर सकते; किंतु जब वह आद्याशक्ति इन्हें सहयोग देती है, तभी ये अपने कार्य में सफल होते हैं**। अतः इन कार्य–कारणों से यही प्रत्यक्ष सिद्ध होता है कि वह शक्ति ही सर्वोपरि है।

(**पहला स्कन्ध अध्याय 6 पृष्ठ 38-39**) ब्रह्मा जी के स्तुति करने पर भी भगवान् विष्णु की नींद नहीं टूटी। उन पर योगनिद्रा का पूरा अधिकार जम चुका था। तब ब्रह्मा जी सोचने लगे–'अब श्रीहरि शक्ति के प्रभाव से पूर्ण प्रभावित होकर खूब गाढ़ी नींद में मग्न हो गये हैं।

इससे सिद्ध हो गया, ये भगवती योगनिद्रा इन लक्ष्मीकान्त भगवान् विष्णु की भी अधिष्ठात्री हैं। लक्ष्मी जी भी इन्हीं के अधीन हो गयीं; क्योंकि पतिदेव विष्णु ही जब अधीन हो गये, तब उनकी अलग सत्ता कहाँ। इससे निश्चित होता है कि यह अखिल ब्रह्माण्ड भगवती योगनिद्रा के अधीन है। मैं (ब्रह्मा), विष्णु, शंकर, सावित्री, लक्ष्मी और उमा–सभी इन्हीं योगनिद्रा के शासनसूत्र में बँधे हैं।

ब्रह्मा जी बोले - देवी! मैं जान गया, तुम निश्चय ही इस जगत् की कारणस्वरूपा हो। सम्पूर्ण वेद–वचन इसे प्रमाणित कर रहे हैं। यही कारण है कि चराचर जगत् को प्रबुद्ध करने वाले परमपुरूष भगवान् विष्णु आज गाढ़ी नींद में मग्न हैं।

(**पहला स्कन्ध अध्याय 4 पृष्ठ 28-29**) **नारदजी ने कहा** - महाभाग व्यासजी! तुम इस विषय में जो पूछ रहे हो, ठीक यही प्रश्न मेरे पिताजी ने भगवान् श्रीहरि से किया था। देवाधिदेव भगवान् जगत् के स्वामी हैं। लक्ष्मी जी उनकी सेवा में उपस्थित रहती हैं। दिव्य कौस्तुभमणि उनकी शोभा बढ़ाती है। वे शङ्ख, चक्र और गदा लिये रहते हैं। पीताम्बर धारण करते हैं। चार भुजाएँ हैं। वक्षःस्थलपर श्रीवत्सका चिन्ह चमकता रहाता है। वे चराचर जगत् के आश्रयदाता हैं, जगत्गुरु एवं देवताओं के भी देवता हैं। ऐसे जगत्प्रभु भगवान् श्रीहरि महान् तप कर रहे थे। उनकी समाधि लगी थी। यह देखकर मेरे पिता जी ब्रह्माजी को बड़ा आश्चर्य हुआ। अतः उन्होंने उनसे जानने की इच्छा प्रकट की।

ब्रह्मा जी ने पूछा-प्रभो! आप देवताओं के अध्यक्ष, जगत् के स्वामी और भूत, भविष्य एवं वर्तमान–**सभी जीवों के एकमात्र शासक हैं। भगवन्! फिर आप क्यों तपस्या कर रहे हैं और किस देवता की आराधना में ध्यानमग्न हैं?** मुझे असीम आश्चर्य तो यह हो रहा हैं कि आप देवश्वर एवं सारे संसार के शासक होते हुए भी समाधि लगाये बैठे हैं।

ब्रह्माजी के ये विनीत वचन सुनकर भगवान् श्रीहरि (श्री विष्णु) उनसे कहने लगे-'ब्रह्मन्! सावधान होकर

सुनो। मैं अपने मनका विचार व्यक्त करता हूँ। देवता, दानव और मानव–सब यही जानते हैं कि तुम सुष्टि करते हो, मैं पालन करता हूँ और शंकर संहार किया करते हैं, किन्तु फिर भी वेद के पारगामी पुरूष अपनी युक्ति से यह सिद्ध करते हैं कि रचने, पालने और संहार करने की यह योग्यता जो हमें मिली है, इसकी अधिष्ठात्री शक्तिदेवी हैं। वे कहते हैं कि संसार की सृष्टि करनेके लिये **तुममें राजसी शक्तिका संचार हुआ है, मुझे सात्त्विकी शक्ति मिली है और रूद्र में तामसी शक्ति का अविर्भाव हुआ है। उस शक्ति के अभाव में तुम इस संसार की सृष्टि नहीं कर सकते, मैं पालन करने में सफल नहीं हो सकता और रूद्रसे संहारकार्य होना भी सम्भव नहीं**। ब्रह्माजी! हम सभी उस शक्ति के सहारे ही अपने कार्य में सदा सफल होते आये हैं। सुव्रत! प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों उदाहरण मैं तुम्हारे सामने रखता हूँ, सुनो। यह निश्चित बात है कि उस शक्ति के अधीन होकर ही मैं (प्रलयकालमें) इस शेषनाग की शय्यापर सोता हूँ और सृष्टि करने का अवसर आते ही जग जाता हूँ। **मैं सदा तप करने में लगा रहता हूँ। उस शक्ति के शासन से कभी मुक्त नहीं रह सकता। कभी अवसर मिला तो लक्ष्मी के साथ सुख-पूर्वक समय बिताने का सौभाग्य प्राप्त होता है। मैं कभी तो दानवों के साथ युद्ध करता हूँ।** अखिल जगत् को भय पहुँचानेवाले दैत्यों के विकराल शरीरोंको शान्त करना मेरा परम कर्तव्य हो जाता है।

मुझे सब प्रकारसे शक्ति के अधीन होकर रहना पड़ता है। उन्हीं भगवती शक्ति का मैं निरन्तर ध्यान किया करता हूँ। ब्रह्माजी! मेरी जानकारी में इन भगवती शक्ति से बढ़कर दूसरे कोई देवता नहीं हैं।

(पहला स्कन्ध अध्याय 5 पृष्ठ 31) सूतजी कहते हैं - इस प्रकार ब्रह्माजी के कहने पर उसी क्षण वम्री ने प्रत्यञ्चा को, जो नीचे भूमि पर थी, खा लिया। फिर तो बन्धन–मुक्त हो गया। प्रत्यञ्चा कटते ही दूसरी ओर की डोरी भी वैसे ही ढीली पड़ गयी। उस समय बड़े जोर से भयंकर शब्द हुआ, जिससे देवता भयभीत हो उठे। चारों ओर अन्धकार छा गया। सूर्य की प्रभा क्षीण हो गयी। फिर तो सभी देवता घबराकर सोचने लगे–'अहो, ऐसे भयंकर समय में पता नहीं क्या होने वाला है।' ऋषियों! समस्त देवता यों सोच रहे थे; इतने में पता नहीं, भगवान् विष्णुका मस्तक कुण्डल और मुकुटसहित कहाँ उड़कर चला गया। कुछ समय के बाद जब घोर अन्धकार शान्त हुआ, तब भगवान् शंकर और ब्रह्मा जी ने देखा श्रीहरिका श्रीविग्रह बिना मस्तक का पड़ा हुआ है। यह बड़े आश्चर्य की बात सामने आ गयी।

ब्रह्माजी ने कहा - कालभगवान् ने जैसा विधान रच रखा है, वैसा अवश्य ही होता है – यह बिलकुल असंदिग्ध बात है। जैसे बहुत पहले काल की प्रेरणा से भगवान् शंकर ने मेरा ही मस्तक काट दिया था। उसी तरह आज भगवान् विष्णु का भी मस्तक धड़ से अलग होकर समुद्र में जा गिरा है।

श्री देवी भागवत् पुराण से निष्कर्ष :-(1)अध्याय 1 प्रथम स्कन्ध पृष्ठ 23 पर लिखे विवरण से स्पष्ट है कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी सृष्टा नहीं है। सर्व शक्तिमान नहीं हैं।

2. श्री सूत जी अर्थात् पुराण ज्ञान वक्त दुर्गा को सृष्टा कह रहा है तथा यह भी कह रहा है कि जगदम्बा (दुर्गा) की उत्पति के विषय में कपिल जी तथा नारद जी भी नहीं जानते मैं क्या उत्तर दे सकता हूँ। इस से सिद्ध है कि पुराण वक्ता भी अल्पज्ञ है। इसलिए उसका ज्ञान जगदम्बा (दुर्गा) सृष्टा है मान्य नहीं है।

3. प्रथम स्कन्ध अध्याय 4 पृष्ठ 28-29 वाले लेख से स्पष्ट है कि (क) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव जी है।(ख) श्री विष्णु जी भी दुर्गा देवी की पूजा करता है। (ग) श्री विष्णु जी तप करता है। (घ) श्री विष्णु जी स्वीकार करता है कि मैं महा दुःखी हूँ क्योंकि राक्षसों के साथ युद्ध करने में लगा रहता हूँ। कभी तप करके अपनी बैट्री चार्ज करता हूँ बहुत कम समय ही लक्ष्मी के साथ रहने को मिलता है। (ड़) श्री विष्णु जी दुर्गा देवी को सबसे बड़ा देवता (परमात्मा) मानते हैं। जो श्री विष्णु जी की अल्पज्ञता का प्रमाण है।

4. पहला स्कन्ध अध्याय 5 पृष्ठ 31 वाले विवरण से स्पष्ट है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव भी काल भगवान के आधीन हैं। वह इनको जो नाच नचाना चाहता है नचाता है।

5. पहला स्कन्ध अध्याय 8 पृष्ठ 41 वाले विवरण में स्पष्ट है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव समर्थ नहीं हैं।

''पवित्र शिव महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण''

(दुर्गा अर्थात् प्रकृति तथा सदा शिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)

यही प्रमाण पवित्र श्री शिव पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्त्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, इसके अध्याय 6 रूद्र संहिता, पृष्ठ नं. 100 पर कहा है कि जो मूर्ति रहित परब्रह्म है, उसी की मूर्ति भगवान सदाशिव है। इनके शरीर से एक शक्ति निकली, वह शक्ति अम्बिका, प्रकृति (दुर्गा), त्रिदेव जननी (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी को उत्पन्न करने वाली माता) कहलाई। जिसकी आठ भुजाऐं हैं। वे जो सदाशिव हैं, उन्हें शिव, शंभु और महेश्वर भी कहते हैं। (पृष्ठ नं. 101 पर) वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन काल रूपी ब्रह्म ने एक शिवलोक नामक क्षेत्र का निर्माण किया। फिर दोनों ने पति-पत्नी का व्यवहार किया जिससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा (पृष्ठ नं. 102)।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 7 पृष्ठ नं. 103 पर ब्रह्मा जी ने कहा कि मेरी उत्पत्ति भी भगवान सदाशिव (ब्रह्म-काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) के संयोग से अर्थात् पति-पत्नी के व्यवहार से ही हुई। फिर मुझे बेहोश कर दिया।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 9 पृष्ठ नं. 110 पर कहा है कि इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र इन तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (काल-ब्रह्म) गुणातीत माने गए हैं।

यहाँ पर चार सिद्ध हुए अर्थात् सदाशिव (काल-ब्रह्म) व प्रकृति (दुर्गा) से ही उत्पन्न हुए हैं। तीनों भगवानों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की माता जी श्री दुर्गा जी तथा पिता जी श्री ज्योति निरंजन (ब्रह्म) है। यही तीनों प्रभु रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी हैं।

कृप्या पढ़ें अन्य प्रमाण जो स्वसम वेद (कविर्वाणी) में वर्णित। अन्तर इतना है कि पुराणों के वक्ता व ज्ञान दाता तथा लेखक तत्वज्ञान से अपरिचित थे। जिस कारण से काल ब्रह्म (क्षर पुरूष अर्थात् ज्योति निरंजन) के जाल को नहीं समझ सके। यही कारण रहा की सर्व ऋषिजन व देवता काल ब्रह्म को विष्णु या शिव या ब्रह्मा कह कर अखिल विश्व का सृष्टा बताते रहे। जो ऋषि साधक उस काल ब्रह्म को शिव रूप में ईष्ट देव मानकर उपासना करता था। उसने श्री ब्रह्मा जी द्वारा बताए सृष्टि रचना के अधूरे ज्ञान के आधार पर श्री शिव पुराण की रचना की जिसमें वक्ता व ज्ञान दाता दोनों विचलित हैं। एक तरफ तो कहा है कि भगवान शिव ही श्री ब्रह्मा रूप धारण करके सृष्टि करता है। विष्णु रूप धारण करके स्थिति बनाए रखता है या श्री शिव रूप धारण करके संहार करता है। फिर लिखा है (पृष्ठ 19) जिन से ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र (शिव) आदि पहले प्रकट हुए हैं। वे ही महादेव, सर्वज्ञ एवं सम्पूर्ण जगत के स्वामी हैं। शिव पुराण में ही फिर लिखा है (पृष्ठ 86) :- हमने सुना है कि भगवान शिव शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। वे महान दयालु हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश- ये तीनो देवता शिव के ही अंग से उत्पन्न हुए हैं। शिव पुराण में ही लिखा है (पृष्ठ 131पर) श्री ब्रह्मा जी ने कहा :- मुनि श्रेष्ठ नारद! इस प्रकार मैंने सृष्टि क्रम का तुम से वर्णन किया है। ब्रह्माण्ड का यह सारा भाग भगवान् शिव की आज्ञा से मेरे द्वारा रचा गया है। भगवान शिव को

परब्रह्म परमात्मा कहा गया है। मैं, विष्णु तथा रूद्र- ये तीनों देवता उन्हीं के भाग बताए गये हैं। वे मनोरम शिव लोक में शिवा (दुर्गा) के साथ स्वच्छन्द विहार करते हैं। भगवान् शिव स्वतन्त्र परमात्मा हैं। निगुर्ण और सर्गुण भी वे ही हैं। इसी शिव पुराण में (पृष्ठ 115 पर) श्री ब्रह्मा जी ने कहा है कि नारद! जो स्फटिक मणी के समान निर्मल, निष्कल (आकार रहित) अविनाशी परम देव है, जो ब्रह्मा, रूद्र और विष्णु आदि देवताओं की भी दृष्टि में नहीं आते। जिनकी शिवत्व नाम से ख्याती है। जो शिव लिंग के रूप में प्रतिष्ठित है। उन भगवान शिव का शिव लिंग के मस्तक पर प्रणव मन्त्र (ओम्) से ही पूजन करें।

➽ *उपरोक्त विवरण श्री शिव पुराण से है। जिसमें स्पष्ट है कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी से भिन्न कोई अन्य प्रभु भी है। परन्तु ऋषिजन उस अन्य प्रभु (काल ब्रह्म) से अपरिचित है। इसीलिए कभी ब्रह्मा जी को सृष्टा बताते हैं कभी विष्णु जी को तथा कभी शिव को सृष्टा बताते हैं। श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी भी काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) से अपरिचित हैं। पूर्वोक्त सृष्टि रचना से आप पाठकों को काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) परब्रह्म (अक्षर पुरूष) तथा इन से भी भिन्न परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण परमात्मा का ज्ञान हुआ। कृप्या पढ़ें श्री शिव पुराण में सृष्टि रचना का सांकेतिक ज्ञान जो श्री ब्रह्मा जी ने पूर्ण परमात्मा से सुना था। परन्तु काल ब्रह्म ने श्री ब्रह्मा जी को आकाशवाणी आदि करके भ्रम में डाल कर गलत ज्ञान से परिपूर्ण कर दिया जो पुराणों में वर्णित है। श्री शिव पुराण में श्री ब्रह्मा जी ने कुछ ज्ञान पूर्ण परमात्मा सतसुकृत जी से सुना हुआ तथा कुछ अपने अनुभव का लिखा है तथा श्री ब्रह्मा जी से सुना हुआ ज्ञान अन्य वक्ताओं ने जो ज्ञान कहा है, लिखा गया है। यही दशा अन्य सत्तरह पुराणों के ज्ञान की है। श्री ब्रह्मा जी ने कुछ सत्य तथा कुछ असत्य तथा कुछ अपना अनुभव तथा कुछ पूर्ण परमात्मा के मुख से सुना ज्ञान पुराणों में कहा है। फिर भी यथार्थ ज्ञान को समझने व परखने के लिए पुराणों व वेदों तथा श्री मद्भगवत् गीता जी का ज्ञान बहुत सहयोगी है। कृप्या आगे पढ़ें श्री शिव पुराण से लेख :-*

संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 99 से 110 :-

ब्रह्माजीने कहा - ब्रह्मन्! देवशिरोमणे! तुम सदा समस्त जगत् के उपकार में ही लगे रहते हो। तुमने लोगों के हित की कामना से यह बहुत उत्तम बात पूछी है।

जिस समय समस्त चराचर जगत् नष्ट हो गया था, सर्वत्र केवल अंधकार ही अंधकार था। न सूर्य दिखायी देते थे न चन्द्रमा। अन्यान्य ग्रहों और नक्षत्रों का भी पता नहीं था। न दिन होता था न रात; अग्नि, पृथ्वी, वायु और जल की भी सत्ता नहीं थी।

उस समय 'तत्सद्ब्रह्म' इस श्रुति में जो 'सत्' सुना जाता है, एकमात्र वही शेष था।

जिस परब्रह्म के विषय में ज्ञान और अज्ञान से पूर्ण उक्तियोंद्वारा इस प्रकार (ऊपर बताये अनुसार) विकल्प किये जाते हैं; उसने कुछ काल के बाद (सृष्टिका समय आने पर) द्वितीय की इच्छा प्रकट की—उसके भीतर एकसे अनेक होने का संकल्प उदित हुआ। तब उस निराकार परमात्मा ने अपनी लीलाशक्ति से अपने लिये मूर्ति (आकार) की कल्पना की।

जो मूर्तिरहित परम ब्रह्म है, उसीकी मूर्ति (चिन्मय आकार) भगवान् सदाशिव हैं। अर्वाचीन और प्राचीन विद्वान् उन्हीं को ईश्वर कहते हैं। उस समय एकाकी रहकर स्वेच्छानुसार विहार करनेवाले **उन सदाशिव ने अपने विग्रहसे स्वयं ही एक स्वरूपभूता शक्ति की सृष्टि की,** जो उनके अपने श्रीअंग से कभी अलग होनेवाली नहीं थी। **उस पराशक्ति को प्रधान, प्रकृत्ति, गुणवती, माया, बुद्धितत्त्वकी जननी** तथा विकाररहित बताया गया है। **वह शक्ति अम्बिका कही गयी है। उसीको प्रकृति, सर्वेश्वरी, त्रिदेवजननी,**

नित्या, और मूलकारण भी कहते हैं। सदाशिवद्वारा प्रकट की गयी उस शक्तिके आठ भुजाएँ हैं।

नाना प्रकार के आभूषण उसके श्रीअंगोंकी शोभा बढ़ाते हैं। वह देवी नाना प्रकार की गतियों से सम्पन्न है और अनेक प्रकारके अस्त्र–शस्त्र धारण करती है। एकाकिनी होने पर भी वह माया संयोगवशात् अनेक हो जाती है।

वे जो सदाशिव हैं, उन्हें परमपुरूष, ईश्वर, शिव, शम्भु और महेश्वर कहते हैं। वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन कालरूपी ब्रह्मने एक ही समय शक्ति के साथ 'शिवलोक' नामक क्षेत्र का निर्माण किया था। उस उत्तम क्षेत्र को ही काशी कहते हैं। वह परम निर्वाण या मोक्ष का स्थान है, जो सबसे ऊपर विराजमान है। **वे प्रिया-प्रियतमरूप शक्ति और शिव, जो परमानन्द स्वरूप हैं, उस मनोरम क्षेत्र में नित्य निवास करते हैं।** काशीपुरी परमानन्दरूपिणी है। मुने! शिव और शिवाने प्रलयकालमें भी कभी उस क्षेत्र को अपने सांनिध्यसे मुक्त नहीं किया है।

देवर्षे! एक समय उस आनन्दवन में रमण करते हुए शिवा और शिव के मन में यह इच्छा हुई कि किसी दूसरे पुरूष की भी सृष्टि करनी चाहिए, जिसपर यह सृष्टि–संचालनका महान् भार रखकर हम दोनों केवल काशीमें रहकर इच्छानुसार विचरें और निर्वाण धारण करें।

ऐसा निश्चय करके शक्तिसहित सर्वव्यापी परमेश्वर शिवने अपने वामभाग के दसवें अंगपर अमृत मल दिया। फिर तो वहाँ से एक पुरूष प्रकट हुआ।

तदनन्तर उस पुरूष ने परमेश्वर शिव को प्रणाम करके कहा–'स्वामिन्! मेरे नाम निश्चित कीजिये और काम बताइये। उस पुरूष की यह बात सुनकर महेश्वर भगवान् शंकर हँसते हुए मेघके समान गम्भीर वाणी में उससे बोले–

शिव ने कहा- वत्स! व्यापक होने के कारण तुम्हारा विष्णु नाम विख्यात हुआ। इसके सिवा और भी बहुत–से नाम होंगे, जो भक्तों को सुख देने वाले होगें। तुम सुस्थिर उत्तम तप करो; क्योंकि वही समस्त कार्यों का साधन है।

ऐसा कहकर भगवान् शिवने श्वासमार्गसे श्री विष्णु को वेदों का ज्ञान प्रदान किया। तदनन्तर अपनी महिमा से कभी च्युत न होनेवाले श्रीहरि भगवान् शिवको प्रणाम करके बड़ी भारी तपस्या करने लगे और शक्तिसहित परमेश्वर शिव भी पार्षदगणों के साथ वहाँ से अदृश्य हो गये। भगवान विष्णु ने सुदीर्घ काल तक बड़ी कठोर तपस्या की।

ब्रह्माजी कहते हैं - देवर्षे! तत्पश्चात् कल्याणकारी परमेश्वर साम्ब सदाशिव ने पूर्ववत् प्रयत्न करके मुझे अपने दाहिने अंग से उत्पन्न किया। मुने! उन महेश्वर ने मुझे तुरन्त ही अपनी माया से मोहित करके नारायण देव के नाभी कमल में डाल दिया और लीला पूर्वक मुझे वहाँ से प्रकट किया। इस प्रकार उस कमल से पुत्र के रूप में मुझ हिरण्यगर्भ का जन्म हुआ।

मैंने उस कमल के सिवा दूसरे किसी को अपने शरीर का जनक या पिता नहीं जाना। मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, मेरा कार्य क्या है, मैं किसका पुत्र होकर उत्पन्न हुआ हूँ और किसने इस समय मेरा निर्माण किया है–

ऐसा निश्चय करके मैंने अपने को कमल से नीचे उतारा। मुने! मैं उस कमल की एक–एक नाल में गया और सैकड़ों वर्षों तक वहाँ भ्रमण करता रहा, किन्तु कहीं भी उस कमल के उद्गम का उत्तम स्थान मुझे नहीं मिला। तब पुनः संशय में पड़कर मैं उस कमल पुष्प पर जाने को उत्सुक हुआ और नाल के मार्ग से उस कमल पर चढ़ने लगा। इस तरह बहुत ऊपर जाने पर भी मैं उस कमल के कोश को न पा सका। उस दशा में मैं और भी मोहित हो उठा। मुने! उस समय भगवान शिव की इच्छा से परम मंगलमयी उत्तम आकाशवाणी प्रकट हुई, जो मेरे मोहका विध्वंस करने वाली थी। उस वाणी ने कहा–'तप' (तपस्या करो)। उस आकाशवाणी को सुनकर मैंने अपने जन्मदाता पिता का दर्शन करने के लिए उस समय पुनः प्रयत्नपूर्वक बारह वर्षों तक घोर तपस्या की तब मुझपर अनुग्रह करने के लिये ही चार भुजाओं और सुन्दर नेत्रों से सुशोभित

भगवान् विष्णु वहाँ सहसा प्रकट हो गये।

तदनन्तर उन नारायण देव के साथ मेरी बातचीत आरम्भ हुई। भगवान् शिव की लीला से वहाँ हम दोनों में कुछ विवाद छिड़ गया। इसी समय हम लोगों के बीच में एक महान अग्निस्तम्भ (ज्योतिर्मयलिंग) प्रकट हुआ। मैंने और विष्णु ने क्रमशः ऊपर और नीचे जाकर उसके आदि–अन्त का पता लगाने के लिए बड़ा प्रयत्न किया, परन्तु हमें कहीं भी उसका ओर–छोर नहीं मिला। मैं थककर ऊपर से नीचे लौट आया और भगवान् विष्णु भी उसी तरह नीचे से ऊपर आकर मुझसे मिले। हम दोनों शिव की माया से मोहित थे। श्री हरि ने मेरे साथ आगे–पीछे और अगल–बगल से परमेश्वर शिव को प्रणाम किया। फिर वे सोचने लगे–'यह क्या वस्तु है?' इसके स्वरूप का निर्देश नहीं किया जा सकता; क्योंकि न तो इसका कोई नाम है और न कर्म ही है। लिंग रहित तत्व ही यहाँ लिंगभाव को प्राप्त हो गया है। ध्यानमार्ग में भी इसके स्वरूप का कुछ पता नहीं चलता। इसके बाद मैं और श्रीहरि दोनों ने अपने चित्त को स्वस्थ करके उस अग्निस्तम्भ को प्रणाम करना आरम्भ किया।

हम दोनों बोले–महाप्रभो! हम आपके स्वरूप को नहीं जानते। आप जो कोई भी क्यों न हों, आपको हमारा नमस्कार है। महेशान! आप शीघ्र ही हमें अपने यथार्थ रूपका दर्शन कराइये।

मुनिश्रेष्ठ! इस प्रकार अहंकार से आविष्ट हुए हम दोनों ही वहाँ नमस्कार करने लगे। ऐसा करते हुए हमारे सौ वर्ष बीत गये।

ब्रह्माजी कहते हैं – मुनिश्रेष्ठ नारद! इस प्रकार हम दोनों देवता गर्व रहित हो निरन्तर प्रणाम करते रहे। हम दोनों के मन में एक ही अभिलाषा थी कि इस ज्योर्तिलिंग के रूपमें प्रकट हुए परमेश्वर प्रत्यक्ष दर्शन दें। भगवान शंकर दीनों के प्रतिपालक, अहंकारियों का गर्व चूर्ण करने वाले तथा सबके अविनाशी प्रभु हैं। वे हम दोनों पर दयालु हो गये। उस समय वहाँ उन सुरश्रेष्ठ से, 'ओ३म्' 'ओ३म्' ऐसा शब्द रूप नाद प्रकट हुआ, जो स्पष्टरूपसे सुनाई देता था।

तब वहाँ एक ऋषि प्रकट हुए, जो ऋषि समूह के परम साररूप माने जाते हैं। उन्हीं ऋषि के द्वारा परमेश्वर श्रीविष्णु ने जाना की इस शब्दब्रह्ममय शरीरवाले परम लिंगके रूप में साक्षात् परब्रह्मस्वरूप महादेवजी ही यहाँ प्रकट हुए हैं।

उस परब्रह्म परमात्मा शिव का वाचक एकाक्षर (प्रणव) ही है, वे इसके वाच्यार्थरूप हैं। वह परम कारण, ऋत,सत्य,आन्नद एवं अमृतस्वरूप परात्पर परब्रह्म एकाक्षर वाच्य है।

तत्पश्चात् परमेश्वर भगवान् महेश प्रसन्न हो अपने दिव्य शब्दमय रूप को प्रकट करके हँसते हुए खड़े हो गये।

परमात्मा के शब्दमय रूप को भगवती उमा के साथ देखकर मैं और श्रीहरि दोनों कृतार्थ हो गये। इस तरह शब्द–ब्रह्ममय–शरीरधारी महेश्वर शिवका दर्शन पाकर मेरे साथ श्री हरि ने उन्हें प्रणाम किया और पुनः ऊपर की ओर देखा। उस समय उन्हें पाँच कलाओं से युक्त ॐकारजनित मन्त्र का साक्षात्कार हुआ। तत्पश्चात् महादेवजी का 'ॐ तत्वमसि' यह महावाक्य दृष्टिगोचर हुआ, जो परम उत्तम मन्त्र रूप है तथा शुद्ध स्फटिक के समान निर्मल है। फिर सम्पूर्ण धर्म और अर्थ का साधक तथा बुद्धिस्वरूप गायत्री नामक दूसरा महान् मन्त्र लक्षित हुआ, जिसमें चौबीस अक्षर हैं तथा जो चारों पुरूषार्थरूपी फल देने वाला है। तत्पश्चात् मृत्युंजय–मन्त्र फिर पञ्चाक्षर–मन्त्र तथा दक्षिणामूर्तिसंज्ञक चिन्तामणि–मन्त्रका साक्षात्कार हुआ। इस प्रकार पाँच मन्त्रों की उपलब्धि करके भगवान् श्रीहरि उनका जप करने लगे।

जो मुझ ब्रह्मके भी अधिपति, कल्याणकारी तथा सृष्टि, पालन एवं संहार करने वाले हैं, उन वरदायक साम्बशिवका मेरे साथ भगवान् विष्णु ने प्रिय वचनों द्वारा संतुष्टचित्त से स्तवन किया।

तब पापहारी करूणाकर भगवान् महेश्वर ने प्रसन्नचित्त होकर उन श्रीविष्णुदेवको श्वासरूप से वेद का उपदेश दिया। मुने! उसके बाद शिव ने परमात्मा श्रीहरि को गुह्य ज्ञान प्रदान किया। फिर उन परमात्मा ने कृपा करके मुझे भी वह ज्ञान दिया। वेदका ज्ञान प्राप्त करके कृतार्थ हुए भगवान् विष्णु ने मेरे साथ हाथ जोड़कर

महेश्वर को नमस्कार करके पुनः उनसे पूजन की विधि बताने तथा सदुपदेश देने के लिये प्रार्थना की।

ब्रह्मा जी कहते हैं - मुने! श्रीहरि की यह बात सुनकर अत्यंत प्रसन्न हुए कृपानिधान भगवान् शिवने प्रीतिपूर्वक यह बात कही।

श्री शिव बोले - सूरश्रेष्ठगण! मैं तुम दोनों की भक्ति से निश्चय ही बहुत प्रसन्न हूँ। तुमलोग मुझ महादेव की ओर देखो। इस समय तुम्हें मेरा स्वरूप जैसा दिखायी देता है, वैसे ही रूपका प्रयत्नपूर्वक पूजन–चिन्तन करना चाहिये। **तुम दोनों महाबली हो और मेरी स्वरूपभूता प्रकृति से प्रकट हुए हो।**

शम्भु की उपर्युक्त बात सुनकर मेरेसहित श्रीहरिने महेश्वर को हाथ जोड़ प्रणाम करके कहा ।

भगवान विष्णु बोले - प्रभो! यदि हमारे प्रति आपके हृदय में प्रीति उत्पन्न हुई है और यदि आप हमें वर देना आवश्यक समझते है तो हम यही वर माँगते है कि आपमें हम दोनों की सदा अनन्य एवं अविचल भक्ति बनी रहे।

श्रीमहेश्वर बोले - मै सृष्टि, पालन और संहारका कर्ता हूँ, सगुण और निर्गुण हूँ तथा सच्चिदानन्दस्वरूप निर्विकार परब्रह्म परमात्मा हूँ । विष्णो! सृष्टि, रक्षा और प्रलयरूप गुणों अथवा कार्यों के भेदसे मैं ही ब्रह्मा, विष्णु और रूद्र नाम धारण करके तीन स्वरूपों में विभक्त हुआ हूँ।

ब्रह्मन! मेरा ऐसा ही परम उत्कृष्ट रूप तुम्हारे शरीर से इस लोक में प्रकट होगा जो नाम से 'रूद्र' कहलायेगा।

मैं, तुम, ब्रह्मा तथा जो ये रूद्र प्रकट होंगे, वे सब-के-सब एकरूप हैं । ब्रह्मन्! इस कारण से तुम्हे ऐसा करना चाहिये। तुम तो इस सृष्टि के निर्माता बनो और श्रीहरि इसका पालन करें तथा मेरे अंशसे प्रकट होने वाले जो रूद्र हैं, वे इसका प्रलय करने वाले होंगे। ये जो 'उमां नामसे विख्यात परमेश्वरी प्रकृति देवी है, इन्हीं की शक्तिभूता वाग्देवी ब्रह्माजी का सेवन करेगी। फिर इन प्रकृति देवी से वहाँ जो दूसरी शक्ति प्रकट होगी वे लक्ष्मी रूप से भगवान् विष्णु का आश्रय लेंगी। तदनन्तर पुनः काली नाम से जो तीसरी शक्ति प्रकट होगी, वे निश्चय ही मेरी अंश भूत रूद्रदेव को प्राप्त होंगी।

मैं ही सृष्टि, पालन और संहार करने वाले रज आदि त्रिविध गुणों द्वारा ब्रह्मा, विष्णु और रूद्रनाम से प्रसिद्ध हो तीन रूपों में पृथक–पृथक प्रकट होता हूँ। साक्षात् शिव गुणों से भिन्न हैं। वे प्रकृति और पुरूष से भी परे हैं–अद्वितीय, नित्य, अनन्त पूर्ण एवं निरंजन परब्रह्म परमात्मा हैं। तीनों लोकों का पालन करने वाले श्री हरि भीतर तमोगुण और बाहर सत्त्वगुण धारण करते हैं, त्रिलोकी का संहार करने वाले रूद्रदेव भीतर सत्त्वगुण और बाहर तमोगुण धारण करते हैं तथा त्रिभुवन की सृष्टि करने वाले ब्रह्माजी बाहर और भीतर से भी रजोगुणी ही है। **इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र-इन तीन देवताओं में गुण हैं, परंतु शिव गुणातीत माने गये हैं।**

परमेश्वर शिव बोले - उत्तम व्रतका पालन करने वाले हरे! विष्णो! अब तुम मेरी दूसरी आज्ञा सुनों। उसका पालन करने से तुम सदा समस्त लोकों में माननीय और पूजनीय बने रहोगे। ब्रह्माजी के द्वारा रचे गये लोक में जब कोई दुःख या संकट उत्पन्न हो, तब तुम उन सम्पूर्ण दुःखों का नाश करने के लिए सदा तत्पर रहना। तुम्हारे सम्पूर्ण दुस्सह कार्यों में मैं तुम्हारी सहायता करूँगा। तुम्हारे जो दुर्जेय और अत्यन्त उत्कट शत्रु होंगे, उन सबको मैं मार गिराऊँगा। हरे! तुम नाना प्रकार के अवतार धारण करके लोक में अपनी उत्तम कीर्तिका विस्तार करो और सबके उद्धार के लिये तत्पर रहो। तुम रूद्र के ध्येय हो और रूद्र तुम्हारे ध्येय हैं। तुममें और रूद्र में कुछ भी अन्तर नहीं है।

संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 114 से :-

'ॐ वामदेवाय नमः' इत्यादि वामदेव–मन्त्र से उन्हें आसनपर विराजमान करे।

संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 126 से :-

वे ब्रह्माण्ड से बाहर जाकर भगवान शिव की कृपा प्राप्त करके वैकुण्ठधाम में जा पहुँचे और सदा वहीं रहने लगे। मैंने सृष्टि की इच्छा से भगवान् शिव और विष्णु का स्मरण करके पहले के रचे हुए जल में अपनी

अंजली डालकर जलको ऊपर की ओर उछाला। इससे वहाँ एक अण्ड प्रकट हुआ।

संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 130 से :-

उस जोड़े में जो पुरूष था, वही स्वायम्भुव मनु के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

विशेष प्रमाण :- श्री शिव महापुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय 6 से 9 में (अनुवाद कर्ता विद्यावारिधि पं. ज्वाला प्रसाद जी मिश्र, प्रकाशक=खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन बम्बई-400004 इस शिव महापुराण में मूल संस्कृत भी विद्यमान है। परन्तु यहाँ पुस्तक विस्तार के कारण केवल हिन्दी अनुवाद ही लिखा गया है।) पृष्ठ 11-13,14,17,18 से सारांश ज्ञान :- लिखा है कि ''एक समय श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी में प्रभुता के कारण युद्ध हुआ। श्री ब्रह्मा जी ने कहा मैं सर्व सृष्टि का रचनहार हूँ मैं ही आप (श्री विष्णु) का उत्पन्न कर्ता अर्थात् पिता हूँ। इसी का प्रत्युत्तर देते हुए श्री विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी से कहा मैं आप (श्री ब्रह्मा जी) का उत्पन्न कर्ता अर्थात् पिता हूँ। इस बात पर दोनों का युद्ध हुआ।(पृष्ठ 11 पर उपरोक्त विवरण है)

उनके मध्य में एक प्रकाशमान स्तम्भ प्रकट हुआ। दोनों (ब्रह्म–विष्णु) को उसके आदि अन्त का भेद नहीं पाया तब वह निराकार ब्रह्म शिव रूप में साकार हुआ तथा कहा ''मेरे सकल निष्कल भेद से दो स्वरूप हैं'' पहला स्तम्भ रूप और पीछे मूर्तिमान रूप धारण किया इसमें ब्रह्म निष्कल (निराकार) और ईशरूप सगुण (साकार) मेरे यह दोनों सिद्ध हैं। दूसरे किसी के नहीं। **इस कारण तुम दोनों को (ब्रह्मा व विष्णु को) अथवा दूसरों को ईश्वरत्व की प्राप्ति नहीं हो सकती तुमने (श्री ब्रह्मा तथा श्री विष्णु जी ने) जो अज्ञानता से अपने आप को ईश (भगवान) माना यह बड़ा अद्भुत हुआ उसके दूर करने को ही मैं रणस्थान मैं आया हूँ।** अब तुम अपना अभिमान त्याग कर मुझ ईश्वर में अपनी बुद्धि लगाओ मेरे प्रसाद से लोक में सब अर्थ प्रकाश करते हैं। **मैं ही ब्रह्म हूँ और** मेरा ही कल–अकल रूप है, **ब्रह्म होने से मैं ईश्वर हूँ**। मैं इस सबका ईश्वर हूँ यह मेरा है मेरे सिवाय किसी दुसरे का नहीं है। प्रथम तो ब्रह्म ज्ञान के निमित्त निष्कल ब्रह्म का प्रादुर्भाव हुआ है। इसी से मैं अज्ञात स्वरूप हूँ पीछे तुम्हें प्रगट दर्शन देने के निमित्त साक्षात् ईश्वर तत्क्षण ही में सगुण रूप हुआ हूँ। (पृष्ठ18) हे पुत्रों ! **यह कृत्य (उत्पति व स्थिति का कार्य) आपने तप से प्राप्त किया है जो सृष्टि की उत्पति तथा पालन कहलाता हैं। सौ मैंने प्रसन्न होकर तुम्हें दिया है। इसी प्रकार से दूसरे दो कृत्य रूद्र और महेश को प्रदान किए हैं परन्तु अनुग्रह कृत्य कोई भी पाने को समर्थ नहीं है।**

''श्री शिव पुराण के उपरोक्त लेखों का सारांश'' :-

उपरोक्त शिव पुराण से निम्न बातें स्पष्ट हुई :-

(1) सदाशिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म, श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश जी का जनक (पिता) है।

(2) प्रकृति अर्थात् दुर्गा जिसकी आठ भुजाऐं हैं यह श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शंकर (रूद्र) जी की जननी (माता) है।

(3) दुर्गा को प्रधान, प्रकृति, शिवा भी कहा जाता है।

(4) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश ईश (भगवान) नहीं हैं क्योंकि खेमराज श्री कृष्णदास प्रकाशन बम्बई वाली श्री शिवपुराण में श्री शिव अर्थात् काल ब्रह्म ने कहा है कि हे ब्रह्मा तथा विष्णु तुमने अपने आप को ईश (भगवान) माना है यह ठीक नहीं है अर्थात् तुम प्रभु नहीं हो।

(5) श्री शिव अर्थात् काल ब्रह्म से भिन्न तथा इसी के आधीन तीनों देवता (ब्रह्मा, विष्णु

तथा महेश/रूद्र) हैं।

(6) श्री ब्रह्मा, विष्णु ने जो उपाधी प्राप्त की है यह तप करके प्राप्त की है। जो ब्रह्म काल अर्थात् सदाशिव द्वारा तप के प्रतिफल में प्रदान की गई है।

(7) सदाशिव अर्थात् महाशिव ही ब्रह्म है यही काल रूपी ब्रह्म है। दुर्गा ने अपनी शब्द (वचन) शक्ति से सावित्री, लक्ष्मी, पार्वती को उत्पन्न किया।

(8) श्री ब्रह्मा जी से सावित्री, श्री विष्णु *जी से लक्ष्मी तथा श्री महेश/रूद्र से पार्बती/काली का विवाह किया गया।*

(9) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश को क्षमा करने का अधिकार नहीं है। केवल कर्म फल ही प्रदान कर सकते हैं।

(10) श्री ब्रह्मा रजगुण, श्री विष्णु सतगुण तथा श्री महेश/रूद्र तमगुण युक्त हैं।

''श्री विष्णु पुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण''

श्री विष्णु पुराण (प्रकाशक एवं मुद्रक गीता प्रैस गोरखपुर। अनुवाद :- श्री मुनिलाल गुप्त)

(उल्लेख संख्या - 1) अध्याय 2 श्लोक 1–2 (प्रथम अंश)

श्री पराशर उवाच

अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने। सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे ।।1।।

नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च। वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकारिणे।।2।।

अनुवाद – श्री पराशरजी बोले– **जो ब्रह्मा, विष्णु और शंकर रूप से जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और संहार के कारण हैं** तथा अपने भक्तों को संसार–सागर से तारने वाले हैं, उन विकाररहित, शुद्ध, **अविनाशी, परमात्मा, सर्वदा एकरस, सर्वविजयी भगवान् वासुदेव विष्णु को नमस्कार है।**।1–2।।

(उल्लेख संख्या - 2) अध्याय 2 श्लोक 3 (प्रथम अंश)

एकानेकस्वरूपाय स्थूलसूक्ष्मात्मने नमः। अव्यक्तव्यक्तरूपाय विष्णवे मुक्तिहेतवे।।3।।

अनुवाद :– जो एक होकर भी नाना रूपवाले हैं, स्थूलसूक्ष्ममय हैं, अव्यक्त (कारण) एवं व्यक्त (कार्य) रूप हैं तथा {अपने अनन्य भक्तों की} मुक्ति के कारण हैं, {उन श्री विष्णु भगवान् को नमस्कार है}।।3।।

(उल्लेख संख्या - 3) अध्याय 2 श्लोक 9 (प्रथम अंश)

तैश्चोक्तं पुरूकुत्साय भूभुजे नर्मदातटे। सारस्वताय तेनापि मह्यं सारस्वतेन च ।।9।।

अनुवाद :- वह प्रसंग दक्ष आदि मुनियों ने नर्मदा-तटपर राजा पुरूकुत्स को सुनाया था तथा पुरूकुत्सने सारस्वत से और सारस्वत ने मुझसे कहा था।।9।।

(उल्लेख संख्या - 4) अध्याय 2 श्लोक 10-13 (प्रथम अंश)

परः पराणां परमः परमात्मात्मसंस्थितः। रूपवर्णादिनिर्देशविशेषणविवर्जितः।।10।।

अपक्षयविनाशाभ्यां परिणामर्धिजन्मभिः। वर्जितः शक्यते वक्तुं यः सदास्तीति केवलम्।।11।।

सर्वत्रासौ समस्तं च वसत्यत्रेति वै यतः। ततः स वासुदेवेति विद्वद्भिः परिपठ्यते।।12।।

तद्ब्रह्म परमं नित्यमजमक्षयमव्ययम्। एकस्वरूपं तु सदा हेयाभावाच्च निर्मलम्।।13।।

अनुवाद :- जो पर (प्रकृति) से भी पर, परमश्रेष्ठ, अन्तरात्मा में स्थित परमात्मा, रूप, वर्ण, नाम और विशेषण आदि से रहित है; जिसमें जन्म, वृद्धि, परिणाम, क्षय और नाश–इन छः विकारों का सर्वथा अभाव है; जिसको सर्वदा केवल 'है' इतना ही कह सकते हैं, तथा **जिनके लिये यह प्रसिद्ध है कि 'वे सर्वत्र हैं** और उनमें समस्त विश्व बसा हुआ है–**इसलिये ही विद्वान् जिसको वासुदेव कहते हैं' वही नित्य, अजन्मा,** अक्षय, अव्यय, एकरस और हेय गुणों के अभाव के कारण **निर्मल परब्रह्म है**।।10–13।।

(उल्लेख संख्या - 5) अध्याय 2 श्लोक 14 (प्रथम अंश)

तदेव सर्वमेवैतद्व्यक्ताव्यक्तस्वरूपवत्। तथा पुरूषरूपेण कालरूपेण च स्थितम्।।14।।

अनुवाद :- वही इन सब व्यक्त (कार्य) और अव्यक्त (कारण) जगत् के रूपसे, तथा इसके साक्षी पुरूष और महाकारण काल के रूप से स्थित है।।।14।।

(उल्लेख संख्या - 6) अध्याय 2 श्लोक 15 (प्रथम अंश)

परस्य ब्रह्मणो रूपं पुरूषः प्रथमं द्विज। व्यक्ताव्यक्ते तथैवान्ये रूपे कालस्तथा परम्।।15।।

अनुवाद :- हे द्विज! परब्रह्म का प्रथम रूप पुरूष है, अव्यक्त (प्रकृति) और व्यक्त (महदादि) उसके अन्य रूप हैं तथा {सबको क्षोभित करनेवाला होने से} **काल उसका परमरूप है**।।15।।

(उल्लेख संख्या - 7) अध्याय 2 श्लोक 16 (प्रथम अंश)

प्रधानपुरूषव्यक्तकालानां परमं हि यत्। पश्यन्ति सूरयः शुद्धं तद्विष्णोः परमं पदम्।।16।।

अनुवाद :- इस प्रकार जो प्रधान, पुरूष, व्यक्त और काल-इन चारों से परे है तथा जिसे पण्डितजन ही देख पाते हैं वही भगवान् विष्णु का परमपद है।।16।।

(उल्लेख संख्या - 8) अध्याय 2 श्लोक 17 (प्रथम अंश)

प्रधानपुरूषव्यक्तकालास्तु प्रविभागशः। रूपाणि स्थितिसर्गान्तव्यक्तिसद्भावहेतवः।।17।।

अनुवाद :– प्रधान, पुरूष, व्यक्त और काल–ये {भगवान विष्णु के} रूप पृथक्–पृथक् संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के प्रकाश तथा उत्पादन में कारण हैं।।17।।

(उल्लेख संख्या - 9 अध्याय 2 श्लोक 18 (प्रथम अंश)

व्यक्तं विष्णुस्तथाव्यक्तं पुरूषः काल एव च। क्रीडतो बालकस्येव चेष्टां तस्य निशामय।।18।।

अनुवाद :– भगवान् विष्णु जो व्यक्त, अव्यक्त, पुरूष और काल रूप से स्थित होते हैं, इसे उनकी बालवत् क्रीडा ही समझो।।18।।

(उल्लेख संख्या - 10) अध्याय 2 श्लोक 23 (प्रथम अंश)

नाहो न रात्रिर्न नभो न भूमि र्नासीत्तमोज्योतिरभूच्च नान्यत्।
श्रोत्रादिबुद्ध्यानुपलभ्यमेकं प्राधानिकं ब्रह्म पुमांस्तदासीत्।।23।।

अनुवाद :- 'उस समय (प्रलयकालमें) न दिन था, न रात्रि थी, न आकाश था, न पृथिवी थी, न अन्धकार था, न प्रकाश था और न इनके अतिरिक्त कुछ और ही था। बस, श्रोत्रादि इन्द्रियों और **बुद्धि आदि का अविषय एक प्रधान ब्रह्म और पुरूष ही था'**।।23।।

(उल्लेख संख्या - 11) अध्याय 2 श्लोक 24 (प्रथम अंश)

विष्णोः स्वरूपात्परतो हि ते द्वे रूपे प्रधानं पुरूषश्च विप्र।
तस्यैव तेन्येन धृते वियुक्ते रूपान्तरं तद्द्विज कालसंज्ञम्।।24।।

अनुवाद :- हे विप्र! विष्णु के परम (उपाधिरहित) स्वरूप से प्रधान और पुरूष-ये दो रूप हुए; उसी (विष्णु) के जिस अन्य रूप के द्वारा वे दोनों {सृष्टि और प्रलयकाल में} संयुक्त और वियुक्त होते है, उस रूपान्तरका ही नाम 'काल' है।।24।।

(उल्लेख संख्या - 12) अध्याय 2 श्लोक 25 (प्रथम अंश)

प्रकृतौ संस्थितं व्यक्तमतीतप्रलये तु यत्। तस्मात्प्राकृतसंज्ञोयमुच्यते प्रतिस ञ्चरः।।25।।

अनुवाद :– बीते हुए प्रलयकाल में यह व्यक्त प्रपञ्च प्रकृति में लीन था, इसलिये प्रपञ्चके इस प्रलय को प्राकृत प्रलय कहते हैं।।25।।

(उल्लेख संख्या - 13) अध्याय 2 श्लोक 26 (प्रथम अंश)

अनादिर्भगवान्कालो नान्तोस्य द्विज विद्यते। अव्युच्छिन्नास्ततस्त्वेते सर्गस्थित्यन्तसंयमाः।। 26।।

अनुवाद :– हे द्विज! कालरूप भगवान् अनादि हैं, इनका अन्त नहीं है इसलिए संसार की उत्पत्ति, स्थिति

और प्रलय भी कभी नहीं रूकते {वे प्रवाह रूप से निरन्तर होते रहते हैं}।।26।।

(उल्लेख संख्या - 14) अध्याय 2 श्लोक 27 (प्रथम अंश)

गुणसाम्ये ततस्तस्मिन्पृथक्पुंसि व्यवस्थिते। कालस्वरूपं तद्विष्णोर्मैत्रेय परिवर्त्तते।।27।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! प्रलयकाल में प्रधान (प्रकृति) के साम्यावस्था में स्थित हो जाने पर और पुरूष के प्रकृति से पृथक् स्थित हो जाने पर **विष्णु भगवान् का काल रूप** {इन दोनों को धारण करने के लिये} **प्रवृत्त होता है**।।27।।

(उल्लेख संख्या - 15) अध्याय 2 श्लोक 28–29 (प्रथम अंश)

ततस्तु तत्परं ब्रह्म परमात्मा जगन्मयः। सर्वगः सर्वभूतेशः सर्वात्मा परमेश्वरः।।28।।

प्रधानपुरूषौ चापि प्रविश्यात्मेच्छया हरिः। क्षोभयामास सम्प्राप्ते सर्गकाले व्ययाव्ययौ।।29।।

अनुवाद :– तदनन्तर {सर्गकाल उपस्थित होने पर} उन परब्रह्म परमात्मा विश्वरूप सर्वव्यापी सर्वभूतेश्वर सर्वात्मा **परमेश्वर ने अपनी इच्छा से विकारी प्रधान और अविकारी पुरूष में प्रविष्ट होकर उनको क्षोभित किया**।।28–29।।

(उल्लेख संख्या - 16) अध्याय 2 श्लोक 30 (प्रथम अंश)

यथा सन्निधिमात्रेण गन्धः क्षोभाय जायते। मनसो नोपकर्तृत्वात्तथासौ परमे श्वरः।।30।।

अनुवाद :– जिस प्रकार क्रियाशील न होने पर भी गन्ध अपनी सन्निधिमात्रसे ही मन को क्षुभित कर देता है **उसी प्रकार परमेश्वर अपनी सन्निधिमात्र से ही प्रधान और पुरूष को प्रेरित करते हैं**।।30।।

(उल्लेख संख्या - 17) अध्याय 2 श्लोक 31 (प्रथम अंश)

स एव क्षोभको ब्रह्मन् क्षोभ्यश्च पुरूषोत्तमः। स सङ्कोचविकासाभ्यां प्रधानत्वेपि च स्थितः।। 31।।

अनुवाद :- हे ब्रह्मन्! वह पुरूषोत्तम ही इनको क्षोभित करने वाले हैं और वे ही क्षुब्ध होते हैं तथा संकोच (साम्य) और विकास (क्षोभ) युक्त प्रधानरूप से भी वे ही स्थित हैं।।31।।

(उल्लेख संख्या - 18) अध्याय 2 श्लोक 32 (प्रथम अंश)

विकासाणुस्वरूपैश्च ब्रह्मरूपादिभिस्तथा। व्यक्तस्वरूपश्च तथा विष्णुः सर्वेश्वरेश्वरः।।32।।

अनुवाद :- ब्रह्मादि समस्त ईश्वरोंके ईश्वर वे विष्णु ही समष्टि-व्यष्टिरूप, ब्रह्मादि जीवरूप तथा महत्तत्त्वरूप से स्थित हैं।।32।।

(उल्लेख संख्या - 19) अध्याय 2 श्लोक 55 (प्रथम अंश)

तत्क्रमेण विवृद्धं सज्जलबुद्बुदवत्समम्। भूतेभ्योण्डं महाबुद्धे महत्तदुदकेशयम्।

प्राकृतं ब्रह्मरूपस्य विष्णोः स्थानमनुत्तमम्।।55।।

अनुवाद :- हे महाबुद्धे! जल के बुलबुले के समान क्रमशः भूतों से बड़ा हुआ वह गोलाकार और जलपर स्थित महान् अण्ड ब्रह्म (हिरण्यगर्भ) रूप विष्णु का अति उत्तम प्राकृत आधार हुआ।।55।।

(उल्लेख संख्या - 20) अध्याय 2 श्लोक 56 (प्रथम अंश)

तत्राव्यक्तस्वरूपोसौ व्यक्तरूपो जगत्पतिः। विष्णुर्ब्रह्मस्वरूपेण स्वयमेव व्यवस्थितः।। 56।।

अनुवाद :- उसमें वे अव्यक्त-स्वरूप जगत्पति विष्णु व्यक्त हरिण्यगर्भरूपसे स्वयं ही विराजमान हुए।।56।।

(उल्लेख संख्या - 21) अध्याय 2 श्लोक 61 (प्रथम अंश)

जुषन् रजो गुणं तत्र स्वयं विश्वेश्वरो हरिः। ब्रह्मा भूत्वास्य जगतो विसृष्टौ सम्प्रवर्त्तते।।61।।

अनुवाद :- उसमें स्थित हुए स्वयं विश्वेश्वर भगवान् विष्णु ब्रह्मा होकर रजोगुण का आश्रय लेकर इस संसार की रचना में प्रवृत्त होते हैं।

(उल्लेख संख्या - 22) अध्याय 9 श्लोक 40 से 41 (प्रथम अंश)

नमामि सर्वं सर्वेशमनन्तमजमव्ययम्। लोकधाम धराधारमप्रकाशमभेदिनम्।।40।।

नारायणमणीयांसमशेषाणामणीयसाम्। समस्तानां गरिष्ठं च भूरादीनां गरीयसाम्।।41।।

अनुवाद :– ब्रह्मा जी कहने लगे–जो समस्त अणुओं से भी अणु और पृथिवी आदि समस्त गुरुओं (भारी पदार्थों) से भी गुरु (भारी) है उन निखिललोकविश्राम, पृथिवीके आधारस्वरूप, अप्रकाश्य, अभेद्य, सर्वरूप, सर्वेश्वर, अनन्त, अज और अव्यय नारायण को मैं नमस्कार करता हूँ।।40–41।।

(उल्लेख संख्या - 23) अध्याय 9 श्लोक 53 (प्रथम अंश)

यस्यायुतायुतांशांशे विश्वशक्तिरियं स्थिता। परब्रह्मस्वरूपं यत्प्रणमामस्तमव्ययम्।।53।।

अनुवाद :– जिसके अयुतांश (दस हजारवें अंश) के अयुतांश में यह विश्वरचना की शक्ति स्थित है तथा जो परब्रह्मस्वरूप है उस अव्ययको हम प्रणाम करते हैं ।।53।।

(उल्लेख संख्या - 24) अध्याय 9 श्लोक 54 (प्रथम अंश)

यद्योगिनः सदोद्युक्ताः पुण्यपापक्षयेक्षयम्। पश्यन्ति प्रणवे चिन्त्यं तद्विष्णोः परमं पदम्।। 54।।

अनुवाद :– नित्य–युक्त योगिगण अपने पुण्य–पापादिका क्षय हो जानेपर **ॐकारद्वारा चिन्तनीय जिस अविनाशी पदका साक्षात्कार करते हैं वही भगवान् विष्णु का परमपद है**।।54।।

(उल्लेख संख्या - 25) अध्याय 9 श्लोक 55 (प्रथम अंश)

यन्न देवा न मुनयो न चाहं न च शङ्करः।जानन्ति परमेशस्य तद्विष्णोः परमं पदम्।।55।।

अनुवाद :- जिसको देवगण, मुनिगण, शंकर और मैं-कोई भी नहीं जान सकते वही परमेश्वर श्री विष्णु का परमपद है।।55।।

(उल्लेख संख्या - 26) अध्याय 9 श्लोक 56 (प्रथम अंश)

शक्तयो यस्य देवस्य ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाः। भवन्त्यभूतपूर्वस्य तद्विष्णोः परमं पदम्।।56।।

अनुवाद :– **जिस अभूतपूर्व देवकी ब्रह्मा, विष्णु और शिवरूप शक्तियाँ हैं वही भगवान् विष्णुका परमपद है**।।56।।

(उल्लेख संख्या - 27) अध्याय 9 श्लोक 57 (प्रथम अंश)

सर्वेश सर्वभूतात्मन्सर्व सर्वाश्रयाच्युत। प्रसीद विष्णो भक्तानां व्रज नो दृष्टिगोचरम्।।57।।

अनुवाद :– हे सर्वेश्वर! हे सर्व भूतात्मन्! हे सर्वरूप! हे सर्वाधार! हे अच्युत! हे विष्णो! हम भक्तोंपर प्रसन्न होकर हमें दर्शन दीजिये।।57।।

(उल्लेख संख्या - 28) अध्याय 6 श्लोक 32–33

संसिद्धायां तु वार्तायां प्रजाः सृष्टा प्रजापतिः। मर्यादां स्थापयामास यथास्थानं यथागुणम्।।32।।

वर्णानामाश्रमाणां च धर्मान्धर्मभृतां वर। लोकांश्च सर्ववर्णानां सम्यग्धर्मानुपालिनाम्।।33।।

अनुवाद :– हे धर्मवानोंमें श्रेष्ठ मैत्रेय! इस प्रकार कृषि आदि जीविकाके साधनों के निश्चित हो जाने पर प्रजापति ब्रह्माजीने प्रजाकी रचना कर उनके स्थान और गुणों के अनुसार मर्यादा, वर्ण और आश्रमोंके धर्म तथा अपने धर्मका भली प्रकार पालन करनेवाले समस्त वर्णोंके लोक आदिकी स्थापना की।।32–33।।

उल्लेख संख्या - 29) अध्याय 6 श्लोक 34 (प्रथम अंश)

प्राजापत्यं ब्राह्मणानां स्मृतं स्थानं क्रियावताम्।स्थानमैन्द्रं क्षत्रियाणां संग्रामेषवनिवर्तिनाम्।।34।।

अनुवाद :- कर्मनिष्ठ ब्राह्मणों का स्थान पितृलोक है, युद्ध-क्षेत्र से कभी न हटनेवाले क्षत्रियों का इन्द्रलोक है।।34।।

(उल्लेख संख्या - 30) अध्याय 6 श्लोक 35 (प्रथम अंश)

वैश्यानां मारूतं स्थानं स्वधर्ममनुवर्तिनाम्। गान्धर्वं शुद्रजातीनां परिचर्यानुवर्तिनाम्।।35।।

अनुवाद :– तथा अपने धर्म का पालन करने वाले वैश्योंका वायुलोक और सेवाधर्मपरायण शुद्रोंका गन्धर्वलोक है।।35।।

(उल्लेख संख्या - 31) अध्याय 6 श्लोक 36 (प्रथम अंश)

अष्टाशीतिसहस्राणि मुनीनामूर्ध्वरेतसाम्। स्मृतं तेषां तु यत्स्थानं तदेव गुरुवासिनाम्।।36।।

अनुवाद :- अट्ठासी हजार ऊर्ध्वरेता मुनि हैं; उनका जो स्थान बताया गया है वही गुरुकुलवासी ब्रह्मचारियों का स्थान है।।36।।

(उल्लेख संख्या - 32) अध्याय 6 श्लोक 37–38 (प्रथम अंश)

सप्तर्षीणां तु यत्स्थानं स्मृतं तद्वै वनौकसाम्। प्राजापत्यं गृहस्थानां न्यासिनां ब्रह्मसंज्ञितम्।।37।।

योगिनाममृतं स्थानं स्वात्मसन्तोषकारिणाम्।।38।।

अनुवाद :- इसी प्रकार वनवासी वानप्रस्थोंका स्थान सप्तर्षिलोक, गृहस्थोंका पितृलोक और संन्यासियों का ब्रह्मलोक है तथा आत्मानुभवसे तृप्त योगियोंका स्थान अमरपद (मोक्ष) है।।37–38।।

(उल्लेख संख्या - 33) अध्याय 6 श्लोक 39 (प्रथम अंश)

एकान्तिनः सदा ब्रह्मध्यायिनो योगिनश्च ये। तेषां तु परमं स्थानं यत्तत्पश्यन्ति सूरयः।।39।।

अनुवाद :- जो निरन्तर एकान्तसेवी और ब्रह्मचिन्तनमें मग्न रहनेवाले योगिजन हैं उनका जो परमस्थान है उसे पण्डितजन ही देख पाते हैं।।39।।

(उल्लेख संख्या - 34) अध्याय 22 श्लोक 36 (प्रथम अंश)

कालेन न विना ब्रह्मा सृष्टिनिष्पादको द्विज। न प्रजापतयः सर्वे ने चैवाखिलजन्तवः।।36।।

अनुवाद :- हे द्विज! काल के बिना ब्रह्मा, प्रजापति एवं अन्य समस्त प्राणी भी सृष्टि-रचना नहीं कर सकते {अतः भगवान् कालरूप विष्णु ही सर्वदा सृष्टिके कारण हैं}।।36।।

(उल्लेख संख्या - 35) अध्याय 22 श्लोक 53 (प्रथम अंश)

एवंप्रकारममलं नित्यं व्यापकमक्षयम्। समस्तहेयरहितं विष्ण्वाख्यं परमं पदम्।।53।।

अनुवाद :– इस प्रकार का वह निर्मल, नित्य, व्यापक, अक्षय और समस्त हेय गुणों से रहित **विष्णु नामक परमपद है।।53।।**

(उल्लेख संख्या - 36) अध्याय 22 श्लोक 54 (प्रथम अंश)

तद्ब्रह्म परमं योगी यतो नावर्त्तते पुनः। श्रयत्यपुण्योपरमे क्षीणक्लेशोतिनिर्मलः।।54।।

अनुवाद :- पुण्य-पापका क्षय और क्लेशों की निवृत्ति होने पर जो अत्यन्त निर्मल हो जाता है वही योगी उस परब्रह्मका आश्रय लेता है जहाँसे वह फिर नहीं लौटता।।54।।

(उल्लेख संख्या - 37) अध्याय 22 श्लोक 55 (प्रथम अंश)

द्वे रूपे ब्रह्मणस्तस्य मूर्त्तं चामूर्तमेव च। क्षराक्षरस्वरूपे ते सर्वभूतेषव्यस्थिते।।55।।

अनुवाद :– उस ब्रह्मके मूर्त और अमूर्त दो रूप हैं, जो क्षर और अक्षररूपसे समस्त प्राणियों में स्थित हैं।।55।।

{विशेष :- इस (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 55 का अनुवाद उचित नहीं किया गया है कृप्या अनुवाद पढ़ें जो उचित है

अनुवाद :- जिस तत् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म के विषय में श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 7 श्लोक 29 अध्याय 8 श्लोक 1,3,8,9 तथा 10 अध्याय 15 श्लोक 1,4,16 तथा 17 में वर्णन है। उसी के विषय में श्री विष्णु पुराण (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 54-55 में भी किया है श्लोक 54 में कहा है कि (तत् परमम् ब्रह्म) उस परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् परम दिव्य पुरूष की साधना करने वाले योगी अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार साधना करने वाले साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं। जो फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। उसी परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पुरूषोत्तम के विषय में श्लोक 55 में कहा है कि ''उस परम अक्षर ब्रह्म के दो रूप है मूर्त अर्थात् साकार तथा अमूर्त अर्थात् अव्यक्त क्योंकि पूर्ण ब्रह्म दूर देश में तेजोमय शरीर युक्त है। जब वह परम अक्षर ब्रह्म

इस लोक में आता है तो अन्य हल्के तेज युक्त शरीर धारण करके आता है। इसलिए मूर्त तथा अमूर्त'' कहा है और वही परम अक्षर ब्रह्म ही क्षर पुरूष (ब्रह्म/काल) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) रूपी प्रभुओं तथा सर्व प्राणियों को व्यवस्थित किए हुए है। जैसे श्री मद् भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में कहा है क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष दो परमात्मा इस लोक में जाने जाते हैं। इसी प्रकार दो स्थिती इस लोक में प्राणियों की है कि स्थूल शरीर सबका नाशवान है आत्मा सब की अविनाशी है। (उत्तम पुरूष तू अन्यः) परन्तु वास्तव में श्रेष्ट परमात्मा तो इन दोनों से अन्य (भिन्न) है वही वास्तव में अविनाशी है तथा सर्व का पालन कर्ता है}

(उल्लेख संख्या - 38) अध्याय 22 श्लोक 56 (प्रथम अंश)

अक्षरं तत्वरं ब्रह्म क्षरं सर्वमिदं जगत्। एकदेशस्थितस्यागेन्र्ज्योत्स्ना विस्तारिणी यथा।
परसय ब्रह्मणः शक्तिस्तथेदमखिलं जगत्।।56।।

अनुवाद :- अक्षर ही वह परब्रह्म है और क्षर सम्पूर्ण जगत् है। जिस प्रकार एकदेशीय अग्निका प्रकाश सर्वत्र फैला रहता है। **उसी प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् परब्रह्म की ही शक्ति है।**।56।।

(उल्लेख संख्या - 39) अध्याय 22 श्लोक 57 (प्रथम अंश)

तत्राप्यासन्नदूरत्वाद्बहुत्वस्वल्पतामयः। ज्योत्स्नाभेदोस्ति तच्छक्तेस्तनद्वन्मैत्रेय विद्यते।। 57।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! अग्नि की निकटता और दूरताके भेदसे जिस प्रकार उसके प्रकाशमें भी अधिकता और न्यूनताका भेद रहता है। उसी प्रकार ब्रह्मकी शक्ति में भी तारतम्य है।।57।।

(उल्लेख संख्या - 40) अध्याय 22 श्लोक 58 (प्रथम अंश)

ब्रह्मविष्णुशिवा ब्रह्मन्प्रधाना ब्रह्मशक्तयः। ततश्च देवा मैत्रेय न्यूना दक्षादयस्ततः।।58।।

अनुवाद :- हे ब्रह्मन्! ब्रह्मा, विष्णु और शिव ब्रह्मकी प्रधान शक्तियाँ हैं उनसे न्यून देवगण हैं तथा उनके अनन्तर दक्ष आदि प्रजापतिगण हैं।।58।।

(उल्लेख संख्या - 41) अध्याय 22 श्लोक 59 (प्रथम अंश)

ततो मनुष्याः पशवो मृगपक्षिसरीसृपाः। न्यूनान्नयूनतराश्चैव वृक्ष गुल्मादयस्तथा।।59।।

अनुवाद :- उनसे भी न्यून मनुष्य, पशु, पक्षी, मृग और सरीसृपादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्ष, गुल्म और लता आदि हैं।।59।।

(उल्लेख संख्या - 42) अध्याय 22 श्लोक 63 (प्रथम अंश)

स परः परशक्तीनां ब्रह्मणः समनन्तरम्। मूर्त्तं ब्रह्म महाभाग सर्वब्रह्ममयो हरिः।।63।।

अनुवाद :- हे महाभाग! हे सर्वब्रह्ममय श्री विष्णुभगवान् समस्त परा शक्तियों में प्रधान और ब्रह्मके अत्यन्त निकटवर्ती मूर्त-ब्रह्मस्वरूप हैं।।63।।

(उल्लेख संख्या - 43) अध्याय 22 श्लोक 80 (प्रथम अंश)

भूर्लोकोथ भुवर्लोकः स्वर्लोको मुनिसत्तम। महर्जनस्तपः सत्यं सप्त लोका इमे विभुः।। 80।।

अनुवाद :– हे मुनिश्रेष्ठ! भूर्लोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक तथा मह, जन, तप, और सत्य आदि सातों लोक भी सर्वव्यापक भगवान् ही हैं।।80।।

(उल्लेख संख्या - 44) अध्याय 22 श्लोक 81 (प्रथम अंश)

लोकात्ममूर्त्तिः सर्वेषां पूर्वेषामपि पूर्वजः। आधारः सर्वविद्यानां स्वयमेव हरिः स्थितः।।81।।

अनुवाद :- सभी पूर्वजों के पूर्वज तथा समस्त विद्याओं के आधार श्रीहरि ही स्वयं लोकमयस्वरूप से स्थित हैं।।81।।

(उल्लेख संख्या - 45) अध्याय 22 श्लोक 82 (प्रथम अंश)

देवमानुषपश्वादिस्वरूपैर्बहुभिः स्थितः। ततः सर्वेश्वरोनन्तो भूतमूर्तिरमूर्त्तिमान्।। 82।।

अनुवाद :- निराकार और सर्वेश्वर श्रीअनन्त ही भूतस्वरूप होकर देव, मनुष्य और पुश आदि

नानारूपोंसे स्थित हैं।।82।।

(उल्लेख संख्या - 46) अध्याय 7 श्लोक 40 (द्वितीय अंश)

स च विष्णुः परं ब्रह्म यतः सर्वमिदं जगत्। जगच्च यो यत्र चेदं यस्मिंश्च लयमेष्यति।।40।।

अनुवाद :– जिससे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ है, जो स्वयं जगत्रूप से स्थित है, जिसमें यह स्थित है तथा जिसमें यह लीन हो जायगा वह परब्रह्म ही विष्णुभगवान् हैं।।40।।

(उल्लेख संख्या - 47) अध्याय 7 श्लोक 41 (द्वितीय अंश)

तद्ब्रह्म तत्परं धाम सदसत्परमं पदम्। यस्य सर्वमभेदेन यतश्चैतच्चराचरम्।।41।।

अनुवाद :- वह ब्रह्म ही उन (विष्णु) का परमधाम (परस्वरूप) है, वह पद सत् और असत् दोनों से विलक्षण है तथा उससे अभिन्न हुआ ही यह सम्पूर्ण चराचर जगत् उससे उत्पन्न हुआ है।।41।।

(उल्लेख संख्या - 48) अध्याय 1 श्लोक 83 (चतुर्थ अंश)

न ह्यादिमध्यान्तमजस्य यस्य विज्ञमो वयं सर्वमयस्य धातुः।
न च स्वरूपं न परं स्वभावं न चैव सारं परमेश्वरस्य।।83।।

अनुवाद :- श्रीब्रह्माजीने कहा-जिस अजन्मा, सर्वमय, विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते।।83।।

(उल्लेख संख्या - 49) अध्याय 1 श्लोक 84 (चतुर्थ अंश)

कलामुहूर्त्तादिमयश्च कालो न यद्विभूतेः परिणामहेतुः।
अजन्मनाशस्य सदैकमूर्त्तेरनामरूपस्य सनातनस्य।।84।।

अनुवाद :– कलामुहूर्त्तादिमय काल भी जिसकी विभूतिके परिणाम का कारण नहीं हो सकता, जिसका जन्म और मरण नहीं होता, जो सनातन और सर्वदा एकरूप है तथा जो नाम और रूपसे रहित है।।84।।

(उल्लेख संख्या - 50) अध्याय 1 श्लोक 85 (चतुर्थ अंश)

यस्य प्रसादादहमच्युतस्य भूतः प्रजासृष्टिकरोन्तकारी।
क्रोधाच्च रूद्रः स्थितिहेतुभूतो यस्माच्च मध्ये पुरूषः परस्मात्।।85।।

अनुवाद :- जिस अच्युतकी कृपासे मैं प्रजाका उत्पत्तिकर्ता हूँ, जिसके क्रोध से उत्पन्न हुआ रूद्र सृष्टिका अन्तकर्त्ता है तथा जिस परमात्मासे मध्यमें जगत्स्थितिकारी विष्णुरूप पुरूषका प्रादुर्भाव हुआ है।।85।।

(उल्लेख संख्या - 51) अध्याय 1 श्लोक 86 (चतुर्थ अंश)

मद्रूपमास्थाय सृजत्यजो यः स्थितौ च योसौ पुरूषस्वरूपी।
रूद्रस्वरूपेण च योत्ति वि श्वं धत्तें तथानन्तवपुस्समस्तम्।।86।।

अनुवाद :- जो मेरा रूप धारणकर संसारकी रचना करता है, स्थितिके समय जो पुरूषरूप (विष्णु) है तथा जो रूद्ररूप से सम्पूर्ण विश्वका ग्रास कर जाता है एवं अनन्तरूपसे सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है।।86।।

(उल्लेख संख्या - 52) अध्याय 1 श्लोक 35 (पंचम अंश)

द्वे विद्ये त्वमनामनाय परा चैवापरा तथा।त एव भवतो रूपे मूर्तामूर्तात्मिके प्रभो।।35।।

अनुवाद :– ब्रह्माजी बोले–हे वेदवाणीके अगोचर प्रभो! परा और अपरा–ये दोनों विद्याएँ आप ही हैं। हे नाथ! वे दोनों आपहीके मूर्त और अमूर्त रूप हैं।।35।।

(उल्लेख संख्या - 53 अध्याय 1 श्लोक 36 (पंचम अंश)

द्वे ब्रह्मणी त्वणीयोतिस्थूलात्मन्सर्व सर्ववित्। शब्दब्रह्म परं चैव ब्रह्म ब्रह्ममयस्य यत्।।36।।

अनुवाद :- हे अत्यन्त सुक्ष्म! हे विराट्स्वरूप! हे सर्व! हे सर्वज्ञ! शब्दब्रह्म और परब्रह्म-ये दोनों आप ब्रह्ममय के ही रूप हैं। ।36।।

(उल्लेख संख्या - 54) अध्याय 7 श्लोक 1 (द्वितीय अंश)

श्रीमैत्रय उवाच

कथितं भूतलं ब्रह्मन्ममैतदखिलं त्वया। भुवर्लोकादिकाँल्लोकाञ्छ्रोतुमिच्छाम्यहं मुने।।1।।

अनुवाद :– श्री मैत्रेयजी बोले–ब्रह्मन्! आपने मुझसे समस्त भूमण्डलका वर्णन किया। हे मुने! अब मैं भुवर्लोक आदि समस्त लोकोंके विषयमें सुनना चाहता हूँ।।1।।

(उल्लेख संख्या - 55) अध्याय 7 श्लोक 2 (द्वितीय अंश)

तथैव ग्रहसंस्थानं प्रमाणानि यथा तथा। समाचक्ष्व महाभाग तन्मह्यं परिपृच्छते।।2।।

अनुवाद :– हे महाभाग! मुझ जिज्ञासु से आप ग्रहगणकी स्थिति तथा उनके परिणाम आदि का यथावत् वर्णन कीजिये।।2।।

(उल्लेख संख्या - 56) अध्याय 7 श्लोक 3 (द्वितीय अंश)

श्रीपराशर उवाच

रविचन्द्रमसोर्यावन्मयूखैरवभास्यते। ससमुद्रसरिच्छैला तावती पृथिवी स्मृता।।3।।

अनुवाद :– श्री पराशरजी बोले–जितनी दूरतक सूर्य और चन्द्रमा की किरणों का प्रकाश जाता है; समुद्र, नदी और पर्वतादिसे युक्त उतना प्रदेश पृथिवी कहलाता है।।3।।

(उल्लेख संख्या - 57) अध्याय 7 श्लोक 4 (द्वितीय अंश)

यावत्प्रमाणा पृथिवी विस्तारपरिमण्डलात्। नभस्तावत्प्रमाणं वै व्यासमण्डलतो द्विज।।4।।

अनुवाद :– हे द्विज! जितना पृथिवीका विस्तार और परिमण्डल (घेरा) है उतना ही विस्तार और परिमण्डल भुवर्लोकका भी है।।4।।

(उल्लेख संख्या - 58) अध्याय 7 श्लोक 5 (द्वितीय अंश)

भूमेर्योजनलक्षे तु सौरं मैत्रेय मण्डलम्। लक्षाद्विवाकरस्यापि मण्डलं शशिनः स्थितम्।।5।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! **पृथिवी से एक लाख योजन दूर सूर्यमण्डल है और सूर्यमण्डल से भी एक लक्ष योजनके अन्तरपर चन्द्रमण्डल है**।।5।।

(उल्लेख संख्या - 59) अध्याय 7 श्लोक 6 (द्वितीय अंश)

पूर्णे शतसहस्रे तु योजनानां निशाकरात्। नक्षत्रमण्डलं कृत्स्नमुपरिष्टात्प्रकाशते।।6।।

अनुवाद :- चन्द्रमा से पूरे सौ हजार (एक लाख) योजन ऊपर सम्पूर्ण नक्षत्रमण्डल प्रकाशित हो रहा है।।6।।

(उल्लेख संख्या - 60) अध्याय 7 श्लोक 7 (द्वितीय अंश)

द्वे लक्षे चोत्तरे ब्रह्मन् बुधो नक्षत्रमण्डलात्। तावत्प्रमाणभागे तु बुधस्याप्युशनाः स्थितः।।7।।

अनुवाद :– हे ब्रह्मन्! नक्षत्रमण्डल से दो लाख योजन ऊपर बुध और बुध से भी दो लक्ष योजन ऊपर शुक्र स्थित है।।7।।

(उल्लेख संख्या - 61) अध्याय 7 श्लोक 8 (द्वितीय अंश)

अङ्गारकोपि शुक्रस्य तत्प्रमाणे व्यवस्थितः। लक्षद्वये तु भौमस्य स्थितो देवपुरोहितः।।8।।

अनुवाद :– शुक्र से इतनी ही दूरी पर मंगल है और मंगल से भी दो लाख योजन ऊपर बृहस्पतिजी हैं।।8।।

(उल्लेख संख्या - 62) अध्याय 7 श्लोक 9 (द्वितीय अंश)

शौरिर्बृहस्पतेश्चोर्ध्वं द्विलक्षे समवस्थितः। सप्तर्षिमण्डलं तस्माल्लक्षमेकं द्विजोत्तम।।9।।

अनुवाद :– हे द्विजोत्तम! बृहस्पतिजी से दो लाख योजन ऊपर शनि हैं और शनि से एक लक्ष योजनके अन्तर पर सप्तर्षिमण्डल है।।9।।

(उल्लेख संख्या - 63) अध्याय 7 श्लोक 10 (द्वितीय अंश)

ऋषिभ्यस्तु सहस्राणां शतादूर्ध्वं व्यवस्थितः ।मेढीभूतः समस्तस्य ज्योतिश्चक्रस्य वै ध्रुवः।।10।।

अनुवाद :– तथा सप्तर्षियों से भी सौ हजार योजन ऊपर समस्त ज्योतिश्चक्रकी नाभिरूप ध्रुवमण्डल स्थित है।।10।।

(उल्लेख संख्या -64) अध्याय 7 श्लोक 11 (द्वितीय अंश)

त्रैलोक्यमेतत्कथितमुत्सेधेन महामुने। इज्याफलस्य भूरेषा इज्या चात्र प्रतिष्ठिता।।11।।

अनुवाद :- हे महामुने! मैंने तुमसे यह त्रिलोकी की उच्चता के विषय में वर्णन किया। यह त्रिलोकी यज्ञफलकी भोग-भूमि है और यज्ञानुष्ठानकी स्थिति इस भारतवर्षमें ही है।।11।।

(उल्लेख संख्या - 65) अध्याय 7 श्लोक 12 (द्वितीय अंश)

ध्रुवादूर्ध्वं महर्लोको यत्र ते कल्पवासिनः। एकयोजनकोटिस्तु यत्र ते कल्पवासिनः।।12।।

अनुवाद :- ध्रुव से एक करोड़ योजन ऊपर महर्लोक है, जहाँ कल्पान्त-पर्यन्त रहने वाले भृगु आदि सिद्धगण रहते हैं।।12।।

(उल्लेख संख्या - 66) अध्याय 7 श्लोक 13 (द्वितीय अंश)

द्वे कोटी तु जनो लोको यत्र ते ब्रह्मणः सुताः। सनन्दनाद्याः प्रथिता मैत्रेयामलचेतसः।।13।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! उससे भी दो करोड़ योजन ऊपर जनलोक है जिसमें ब्रह्माजी के प्रख्यात पुत्र निर्मलचित्त सनकादि रहते हैं।।13।।

(उल्लेख संख्या - 67) अध्याय 7 श्लोक 14 (द्वितीय अंश)

चतुर्गुणोत्तरे चोर्ध्वं जनलोकात्तपः स्थितम्। वैराजा यत्र ते देवाः स्थिता दाहविवर्जिताः।।24।।

अनुवाद :– जनलोकसे चौगुना अर्थात् आठ करोड़ योजन ऊपर तपलोक है; वहाँ वैराज नामक देवगणों का निवास है जिनका कभी दाह नहीं होता।।14।।

(उल्लेख संख्या - 68) अध्याय 7 श्लोक 15 (द्वितीय अंश)

षड्गुणेन तपोलोकात्सत्यलोको विराजते। अपुनर्मारका यत्र ब्रह्मलोको हि स स्मृतः।।15।।

अनुवाद :- तपलोकसे छः गुना अर्थात् बारह करोड़ योजनके अन्तरपर सत्यलोक सुशोभित है जो ब्रह्मलोक भी कहलाता है और जिसमें फिर न मरनेवाले अमरगण निवास करते हैं।।15।।

(उल्लेख संख्या - 69) अध्याय 7 श्लोक 16 (द्वितीय अंश)

पादगम्यन्तु यत्किञ्चिद्वस्त्वस्ति पृथिवीमयम्। स भूर्लोकः समाख्यातो विस्तरोस्य मयोदितः।। 16।।

अनुवाद :– जो भी पार्थिव वस्तु चरणसञ्चार के योग्य है वह भुर्लोक ही है। उसका विस्तार मैं कह चुका।।16।।

(उल्लेख संख्या - 70) अध्याय 7 श्लोक 17 (द्वितीय अंश)

भूमिसूर्यान्तरं यच्च सिद्धादिमुनिसेवितम्। भुवर्लोकस्तु सोप्युक्तो द्वितीयो मुनिसत्तम।। 17।।

अनुवाद :– हे मुनिश्रेष्ठ! पृथिवी और सूर्य के मध्यमें जो सिद्धगण और मुनिगण–सेवित स्थान है, वही दूसरा भुवर्लोक है।।17।।

(उल्लेख संख्या - 71) अध्याय 7 श्लोक 18 (द्वितीय अंश)

ध्रुवसूर्यान्तरं यच्च नियुतानि चतुर्दश। स्वर्लोकः सोपि गदितो लोकसंस्थानचिन्तकैः।। 18।।

अनुवाद :- सूर्य और ध्रुव के बीच में जो चौदह लक्ष योजनका अन्तर है, उसीको लोकस्थितिका विचार करने वालोंने स्वर्लोक कहा है।।18।।

(उल्लेख संख्या - 72) अध्याय 7 श्लोक 19 (द्वितीय अंश)

त्रैलोक्यमेतत्कृतकं मैत्रेय परिपठ्यते। जनस्तपस्तथा सत्यमिति चाकृतकं त्रयम्।।19।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! ये (भूः, भुवः, स्वः) 'कृतक' त्रैलोक्य कहलाते हैं और जन, तप तथा सत्य–ये तीनों 'अकृतक' लोक हैं।।19।।

(उल्लेख संख्या - 73) अध्याय 7 श्लोक 20 (द्वितीय अंश)

कृतकाकृतयोर्मध्ये महर्लोक इति स्मृतः। शून्यो भवति कल्पान्ते योत्यन्तं न विनश्यति।। 20।।

अनुवाद :– इन कृतक और अकृतक त्रिलोकियों के मध्यमें **महर्लोक कहा जाता है, जो कल्पान्त में केवल जनशून्य हो जाता है,** अत्यन्त नष्ट नहीं होता **[**इसलिए यह 'कृतकाकृत' कहलाता है**]**।।20।।

(उल्लेख संख्या - 74) अध्याय 7 श्लोक 21 (द्वितीय अंश)

एते सप्त मया लोका मैत्रेय कथितास्तव। पातालानि च सप्तैव ब्रह्माण्डस्यैष विस्तरः।।21।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! इस प्रकार मैंने तुमसे **ये सात लोक और सात ही पाताल कहे। इस ब्रह्माण्ड का बस इतना ही विस्तार है**।।21।।

(उल्लेख संख्या - 75) अध्याय 7 श्लोक 22 (द्वितीय अंश)

एतदण्डकटाहेन तिर्यक् चोर्ध्वमधस्तथा। कपित्थस्य यथा बीजं सर्वतो वै समावृतम्।।22।।

अनुवाद :– यह ब्रह्माण्ड कपित्थ (कैथे) के बीजके समान ऊपर–नीचे सब ओर अण्डकटाहसे घिरा हुआ है।।22।।

(उल्लेख संख्या - 76) अध्याय 7 श्लोक 23 (द्वितीय अंश)

दशोत्तरेण पयसा मैत्रेयाण्डं च तद्वृतम्। सर्वोम्बुपरिधानोसौ वह्निना वेष्टितो बहिः।।23।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! यह अण्ड अपने से दसगुने जल से आवृत है और वह जलका सम्पूर्ण आवरण अग्नि से घिरा हुआ है।।23।।

(उल्लेख संख्या - 77) अध्याय 7 श्लोक 24 (द्वितीय अंश)

वह्निश्च वायुना वायुमैत्रेय नभसा वृतः। भूतादिना नभः सोपि महता परिवेष्टितः।
दशोत्तराण्यशेषाणि मैत्रेयैतानि सप्त वै।।24।।

अनुवाद :– अग्नि वायु से और वायु आकाश से परिवेष्टित है तथा आकाश भूतों के कारण तामस अहंकार और अहंकार महत्तत्वसे घिरा हुआ है। हे मैत्रेय! ये सातों उत्तरोत्तर एक–दूसरे से दसगुने हैं।।24।।

(उल्लेख संख्या - 78) अध्याय 7 श्लोक 25–26 (द्वितीय अंश)

महान्तं च समावृत्य प्रधानं समवस्थितम्। अनन्तस्य न तस्यान्तः संख्यानं चापि विद्यते।।25।।
तदनन्तमसंख्यातप्रमाणं चापि वै यतः। हेतुभूतमशेषस्य प्रकृतिः सा परा मुने।।26।।

अनुवाद :– महत्तत्वको भी प्रधानने आवृत कर रखा है। वह अनन्त है; तथा उसका न कभी अन्त (नाश) होता है और न कोई संख्या ही है; क्योंकि हे मुने! वह अनन्त, असंख्येय, अपरिमेय और सम्पूर्ण जगत्का कारण है और वही परा प्रकृति है।।25–26।।

(उल्लेख संख्या - 79) अध्याय 7 श्लोक 27 (द्वितीय अंश)

अण्डानां तु सहस्राणां सहस्राण्ययुतानि च। ईदृशानां तथा तत्र कोटिकोटिशतानि च।।27।।

अनुवाद :- उसमें ऐसे-ऐसे हजारों, लाखों तथा सैकड़ों करोड़ ब्रह्माण्ड हैं।।27।।

''श्री विष्णु पुराण के उपरोक्त उल्लेखों का सारांश''

उपरोक्त श्री विष्णु पुराण के लेख से निम्न तथ्य स्पष्ट हुए :- 1. श्री विष्णु पुराण के वक्ता श्री पारासर जी हैं जो श्री कृष्णद्वैपायन अर्थात् वेदव्यास जी के पुज्य पिता जी हैं। श्री वेद व्यास जी अठारह पुराणों के लेखक हैं। सर्व पुराणों तथा चारों वेदों, श्री मद्भगवत् गीता तथा श्री मद्भागवत सुधासागर के लेखक भी श्री वेद व्यास जी हैं। सर्व पुराणों का ज्ञान दाता श्री ब्रह्मा जी (पुत्र श्री काल रूपी ब्रह्म) हैं। अठारह पुराणों का ज्ञान एक बोध है अर्थात् एक ही ज्ञान है। जो ब्रह्मा जी द्वारा कहा गया है। उसी ज्ञान को अन्य ऋषियों ने श्री ब्रह्मा जी से सुना फिर

उन्होंने अन्य को बताया फिर आगे से आगे वक्ता इस ज्ञान का प्रचार करने लगे तथा कुछ अपना अनुभव भी मिलाने लगे। श्री विष्णु पुराण में पुराण वक्ता श्री पारासर जी ने कहा है कि यह ज्ञान दक्षादि ऋषियों ने राजा पुरूकुत्स को सुनाया, पुरूकुत्स ने सारस्वत को सुनाया तथा सारस्वत ने मुझे (पारासर जी को) सुनाया जो श्री विष्णु पुराण नाम से श्री व्यास जी ने लीपिबद्ध किया। श्री विष्णु पुराण (प्रथम अंश) अध्याय 9 श्लोक 56 में लिखा है कि ''जिस अभूतपूर्व देव की ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप शक्तियाँ हैं वही भगवान विष्णु का परमपद है'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 58 में लिखा है कि ''ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव, ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ हैं'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 1 श्लोक 36 में लिखा है कि ''शब्द ब्रह्म तथा परब्रह्म आप ब्रह्ममय अर्थात् ब्रह्म के ही रूप हैं'' फिर (द्वितीय अंश) अध्याय 7 श्लोक 41 में लिखा है कि वह ब्रह्म (तत् ब्रह्म) ही उन (विष्णु) का परम धाम है। वह पद सत् (अक्षर पुरूष) तथा असत् (क्षर पुरूष) से विलक्षण है तथा उस से भिन्न हुआ ही यह सम्पूर्ण चराचर जगत् उसी से उत्पन्न हुआ है।'' फिर (चतुर्थ अंश) अध्याय 1 श्लोक 85 में लिखा है कि ''श्री विष्णु पुराण के वक्ता श्री पारासर जी ने कहा है कि श्री ब्रह्मा जी ने कहा ''मैं जो प्रजा की उत्पति करता हूँ तथा रूद्र जो संहार करता है तथा जो विष्णु स्थिति करता है, हम उसी परमात्मा ब्रह्म से उत्पन्न हुए हैं'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 9 श्लोक 54 में लिखा है कि योगीजन ओंकार अर्थात् ओ३म् नाम द्वारा जिस का साक्षात्कार करते हैं वह श्री विष्णु का परमपद है।'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 9 श्लोक 55 में लिखा है कि ''जिसको देवगण, मुनिगण, शंकर और मैं (ब्रह्मा) कोई भी नहीं जानते वह श्री विष्णु का परमपद है।''

श्री विष्णु पुराण के लेख से निष्कर्ष निकला कि :-

1. श्री ब्रह्मा जी (जिसने सर्व पुराणों का ज्ञान कहा है उसी को अन्य ने आगे से आगे बताया है) अल्पज्ञ हैं। क्योंकि वे कह रहे हैं (क) कि श्री विष्णु के परमपद के विषय मैं क्या शंकर व देवता व मुनिगण कोई नहीं जानते। यह भी सिद्ध हुआ कि श्री शंकर जी व अन्य देवगण तथा मुनिजन भी अल्पज्ञ हैं अर्थात् पूर्ण ज्ञानी नहीं हैं।

(ख) उल्लेख संख्या (58-59) में श्री विष्णु पुराण के वक्त अर्थात् श्री परासर जी ने कहा है कि पृथ्वी से एक लाख योजन अर्थात् 12 लाख किलोमीटर दूर सूर्य है सूर्य से एक लाख योजन अर्थात् 12 लाख किलो मीटर दूर चन्द्रमा है। इस प्रकार चन्द्रमा की पृथ्वी से दूरी 24 लाख कि.मी. बनती है। जो श्री पारासर की प्रत्यक्ष अज्ञानता का प्रमाण। जिसमें सूर्य को पृथ्वी के अति निकटवर्ति कहा तथा चन्द्रमा को सूर्य से भी 12 लाख कि.मी. दूर कहा है। जबकि वर्तमान में खगोलविद्धों ने सिद्ध किया है कि चाँद, पृथ्वी के अति निकट है तथा पृथ्वी का उपग्रह है जो धरती के चारों और चक्र लगाता रहा है।

प्रमाण :- उपरोक्त श्री विष्णु पुराण उल्लेख संख्या 46, 48, 58, 59 में

2. श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव का उत्पति करता ब्रह्म है जिस ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ ब्रह्मा-विष्णु-शिव हैं। भावार्थ है कि ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से अन्य तथा शक्तिशाली है तथा ब्रह्मा,विष्णु व महेश का उत्पति कर्ता अर्थात् पिता है।

प्रमाण :- उपरोक्त श्री विष्णु पुराण उल्लेख संख्या 26, 40, 42, 47, 50 में है।

3. अक्षर पुरूष को परब्रह्म कहते हैं।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 38 में

4. ब्रह्म लोक को सत्यलोक (सतलोक) कहते हैं।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 68 में

5. काल भगवान ही अपने अन्य ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव के रूप धारण करके धोखा देता है।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या :- 51,1 में

6. क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म काल (जिसे असत् भी कहते हैं) तथा अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म (जिसे सत् भी कहते हैं) से अन्य परम अक्षर ब्रह्म है जो इन दोनों से विलक्षण अर्थात् निराला व समर्थ है। उसी परम अक्षर ब्रह्म से सर्व चराचर जगत् भिन्न हुआ है। श्री विष्णु पुराण का वक्ता श्री पारासर ऋषि तत्वज्ञानहीन है जिस कारण से ब्रह्म, को ही परब्रह्म तथा विष्णु तथा परम अक्षर ब्रह्म को भी ब्रह्म काल ही कह रहा है परन्तु तथ्य स्पष्ट करते हैं कि पूर्ण परमात्मा अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म सर्व शक्तिमान सर्व का उत्पति करता तथा सर्व को व्यवस्थित करने वाला है वही सर्व का पालन करता है तथा ब्रह्म काल (क्षर पुरूष) तथा परब्रह्म (अक्षर पुरूष) से अन्य (भिन्न) है। उसी परमदिव्य पुरूष अर्थात् पूर्ण ब्रह्म (सत्यपुरूष) से सर्व चराचर जगत् उत्पन्न हुआ तथा भिन्न हुआ है। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ द्वारा बताई सृष्टि रचना का पूर्ण समर्थन श्री विष्णु पुराण में वर्णित है। इससे सिद्ध हुआ कि बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी द्वारा दिया गया सृष्टि रचना का ज्ञान सत्य है। जिसे वर्तमान तक कोई भी ऋषि, देव तथा गुरु, पण्डित कोई भी नहीं बता सका। इससे यह भी सिद्ध हुआ कि सर्व ऋषि व गुरु जन तत्वज्ञानहीन थे तथा मानव समाज को दिशा भ्रष्ट करते रहे। जिस कारण से मानवता का ह्रास हुआ है।

{विशेष :- (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 55 का अनुवाद उचित नहीं किया गया है कृप्या अनुवाद पढ़ें जो उचित है

अनुवाद :- जिस तत् ब्रह्म अर्थात् परमअक्षर ब्रह्म के विषय में श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 7 श्लोक 29 अध्याय 8 श्लोक 1,3,8,9 तथा 10 अध्याय 15 श्लोक 1,4,16 तथा 17 में वर्णन है। उसी के विषय में श्री विष्णु पुराण (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 54-55 में भी किया है श्लोक 54 में कहा है कि (तत् परमम् ब्रह्म) उस परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् परम दिव्य पुरूष की साधना करने वाले योगी अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार साधना करने वाले साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं। जो फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। उसी परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पुरूषोत्तम के विषय में श्लोक 55 में कहा है कि ''उस परम अक्षर ब्रह्म के दो रूप है मूर्त अर्थात् साकार तथा अमूर्त अर्थात् अव्यक्त क्योंकि पूर्ण ब्रह्म दूर देश में तेजोमय शरीर युक्त है। जब वह परम अक्षर ब्रह्म इस लोक में आता है तो अन्य हल्के तेज युक्त शरीर धारण करके आता है। इसलिए मूर्त तथा अमूर्त'' कहा है और वही परम अक्षर ब्रह्म ही क्षर पुरूष (ब्रह्म/काल) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) रूपी प्रभुओं तथा सर्व प्राणियों को व्यवस्थित किए हुए है। जैसे श्री मद् भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में कहा है क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष दो परमात्मा इस लोक में जाने जाते हैं। इसी प्रकार दो स्थिती इस लोक में प्राणियों की है। कि स्थूल शरीर सबका नाशवान है आत्मा सब की अविनाशी है। (उत्तम पुरूषः तू अन्यः) परन्तु वास्तव में श्रेष्ट परमात्मा तो इन दोनों से अन्य (भिन्न) है वही वास्तव में अविनाशी है तथा सर्व का पालन कर्ता है}

7. अनेक ब्रह्मण्डों का प्रमाण :- उल्लेख संख्या 79 में

8. ब्राह्मण मोक्ष प्राप्त नहीं करते अपितु पितृ बनकर पितृलोक में निवास करते हैं :-

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 29 में

9. गृहस्थों का स्थान भी पितृ लोक है जो पितृ पूजते हैं क्योंकि गीता अध्याय 9 श्लोक 25 प्रमाण है कि जो पितृ पूजते हैं वे पितरों को प्राप्त होते हैं अर्थात् पितृ लोक में चले जाते हैं। मोक्ष प्राप्त नहीं करते।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 32 में

10. अठासी हजार ऋषियों का स्थान अठासी हजार खेड़े हैं वही स्थान गुरुकुल वासियों का है अर्थात् ये सर्व मोक्ष से वंचित रह जाते हैं।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 31,32 में

11. वानप्रस्थों का स्थान सप्तऋषि लोक है तथा सन्यासियों का स्थान ब्रह्मलोक है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्मलोक प्रयन्त सर्व लोक पुनरावृत्ति में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक में गए साधक भी जन्म-मरण के चक्र में ही रहते हैं मोक्ष प्राप्त नहीं करते।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 32 में

12. जल में एक अण्डा उत्पन्न हुआ उस अण्ड में ब्रह्म काल विराजमान था। उसी ब्रह्म काल अर्थात् महाविष्णु ने ब्रह्मा रूपधारण किया।

प्रमाण :- उल्लेख 19,20,21 में

''पवित्र श्रीमद्भगवत गीता में सृष्टि रचना का प्रमाण''

(दुर्गा तथा ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)

इसी का प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 तक है। ब्रह्म (काल) कह रहा है कि प्रकृति (दुर्गा) तो मेरी पत्नी है, मैं ब्रह्म(काल) इसका पति हूँ। हम दोनों के संयोग से सर्व प्राणियों सहित तीनों गुणों (रजगुण - ब्रह्मा जी, सतगुण - विष्णु जी, तमगुण - शिवजी) की उत्पत्ति हुई है। मैं (ब्रह्म) सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा प्रकृति (दुर्गा) इनकी माता है। मैं इसके उदर में बीज स्थापना करता हूँ जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है।

यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16, 17 में भी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्। १।
ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित्।।1।।

अनुवाद : (ऊर्ध्वमूलम्) ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला (अधःशाखम्) नीचे को शाखा वाला (अव्ययम्) अविनाशी (अश्वत्थम्) विस्तारित, पीपल का वृक्ष रूप संसार है (यस्य) जिसके (छन्दांसि) छोटे–छोटे हिस्से या टहनियाँ (पर्णानि) पत्ते (प्राहुः) कहे हैं (तम्) उस संसार रूप वृक्षको (यः) जो (वेद) सर्वांगों सहित जानता है (सः) वह (वेदवित्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है। (1)

केवल हिन्दी अनुवाद : ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला नीचे को शाखा वाला अविनाशी विस्तारित, पीपल का वृक्ष रूप संसार है जिसके छोटे-छोटे हिस्से या टहनियाँ पत्ते कहे हैं उस संसार रूप वृक्षको जो सर्वांगों सहित जानता है वह पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है। (1)

भावार्थ : गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में जिस तत्वदर्शी संत के विषय में कहा है उसकी पहचान

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

अध्याय 15 श्लोक 1 में बताया है कि वह तत्वदर्शी संत कैसा होगा जो संसार रूपी वृक्ष का पूर्ण विवरण बता देगा कि मूल तो पूर्ण परमात्मा है, तना अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म है, डार ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष है तथा शाखा तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी)है तथा पात रूप संसार अर्थात् सर्व ब्रह्मण्ड़ों का विवरण बताएगा वह तत्वदर्शी संत है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 2

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ।२।

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवृद्धाः, विषयप्रवालाः, अधः, च, मूलानि, अनुसन्ततानि, कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके।।2।।

अनुवाद : (तस्य) उस वृक्षकी (अधः) नीचे (च) और (ऊर्ध्वम्) ऊपर (गुणप्रवृद्धाः) तीनों गुणों ब्रह्मा–रजगुण, विष्णु–सतगुण, शिव–तमगुण रूपी (प्रसृता) फैली हुई (विषयप्रवालाः) विकार– काम क्रोध, मोह, लोभ अहंकार रूपी कोपल (शाखाः) डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव (कर्मानुबन्धीनि) जीवको कर्मोमें बाँधने की (अपि) भी (मूलानि) जड़ें मुख्य कारण हैं (च) तथा (मनुष्यलोके) मनुष्यलोक लोक पृथ्वी लोक में (अधः) नीचे – नरक, चौरासी लाख जूनियों में (ऊर्ध्वम्) ऊपर स्वर्ग लोक आदि में (अनुसन्ततानि) व्यवस्थित किए हुए हैं।(2)

केवल हिन्दी अनुवाद : उस वृक्षकी नीचे और ऊपर तीनों गुणों ब्रह्मा-रजगुण, विष्णु-सतगुण, शिव-तमगुण रूपी फैली हुई डाली जीवको कर्मोमें बाँधने की भी मुख्य कारण हैं तथा मनुष्यलोक लोक पृथ्वी लोक में नीचे-नरक, चौरासी लाख जूनियों में ऊपर स्वर्ग लोक आदि में व्यवस्थित किए हुए हैं।(2)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 3

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा। ३।

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न, च, आदिः, न, च,
सम्प्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्, सुविरूढमूलम्, असंगशस्त्रेण, दृढेन, छित्वा।।3।।

अनुवाद : (अस्य) इस रचना का (न) नहीं (आदिः) शुरूवात (च) तथा (न) नहीं (अन्तः) अन्त है (न) नहीं (तथा) वैसा (रूपम्) स्वरूप (उपलभ्यते) पाया जाता है (च) तथा (इह) यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी (न) नहीं है (सम्प्रतिष्ठा) क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति है का मुझे भी ज्ञान नहीं है (एनम्) इस (सुविरूढमूलम्) अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला (अश्वत्थम्) मजबूत स्वरूप वाले (असंङ्गशस्त्रेण) पूर्ण ज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा (दृढेन्) दृढ़ता से सूक्षम वेद अर्थात् तत्वज्ञान के द्वारा जानकर अर्थात् तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से (छित्वा) काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक अर्थात् क्षण भंगुर जानकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ब्रह्म तथा परब्रह्म से भी आगे पूर्णब्रह्म की तलाश करनी चाहिए।(3)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस रचना का नहीं शुरूवात तथा नहीं अन्त है नहीं वैसा स्वरूप पाया जाता है तथा यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी नहीं है क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति है का मुझे भी ज्ञान नहीं है इसे तत्वज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा काटकर अर्थात् सूक्षम वेद (तत्वज्ञान के) द्वारा जानकर उसे तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से काटकर।(3)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 4

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं-
यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी। ४।

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः,
तम्, एव्, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृतिः, प्रसृता, पुराणी।।4।।

अनुवाद : जब तत्वदर्शी संत मिल जाए तत्वज्ञान से सर्व स्थिति को समझ कर (ततः) इसके पश्चात् तत्वज्ञान से सर्व स्थिति को समझकर (तत्) उस परमात्माके (पदम्) पद स्थान अर्थात् सतलोक को (परिमार्गितव्यम्) भलीभाँति खोजना चाहिए (यस्मिन्) जिसमें (गताः) गये हुए साधक (भूयः) फिर (न, निवर्तन्ति) लौटकर संसारमें नहीं आते (च) और (यतः) जिस परमात्मा–परम अक्षर ब्रह्म से (पुराणी) आदि (प्रवृतिः) रचना–सृष्टि (प्रसृता) उत्पन्न हुई है (तम्) अज्ञात (आद्यम्) आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन (पुरुषम्) पूर्ण परमात्मा की (एव) ही (प्रपद्ये) मैं शरण में हूँ अर्थात् उसी पूर्ण परमात्मा की मैं भी पूजा करता हूँ।(4)

केवल हिन्दी अनुवाद : (जब तत्वदर्शी संत मिल जाए तत्वज्ञान से सर्व स्थिति को समझ कर तत्वज्ञान से सर्व स्थिति को समझकर) इसके पश्चात् उस परमात्माके परमपद अर्थात् सतलोक को भलीभाँति खोजना चाहिए जिसमें गये हुए साधक फिर लौटकर संसारमें नहीं आते और जिस परमात्मा-परम अक्षर ब्रह्म से आदि रचना-सृष्टि उत्पन्न हुई है अज्ञात आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन पूर्ण परमात्मा की ही मैं शरण में हूँ अर्थात् उसी पूर्ण परमात्मा की मैं भी पूजा करता हूँ।(4)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 16

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते। १६।

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते।।16।।

अनुवाद : (लोके) इस संसारमें (द्वौ) दो प्रकारके (क्षरः) नाशवान् (च) और (अक्षरः) अविनाशी (पुरुषौ) भगवान हैं (एव) इसी प्रकार (इमौ) इन दोनों प्रभुओं के लोकों में (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) प्राणियोंके शरीर तो (क्षरः) नाशवान् (च) और (कूटस्थः) जीवात्मा (अक्षरः) अविनाशी (उच्यते) कहा जाता है।(16)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस संसार में क्षर पुरूष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) दो प्रकार के भगवान हैं इसी प्रकार इन दोनों प्रभुओं के लोकों में सम्पूर्ण प्राणियोंके शरीर तो नाशवान् और जीवात्मा अविनाशी कहा जाता है।(16)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 17

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः। १७।

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम् आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः।।17।।

अनुवाद : (उत्तमः) उत्तम (पुरुषः) प्रभु (तु) तो (अन्यः) उपरोक्त दोनों प्रभुओं (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) से भी अन्य ही है (इति) यह वास्तव में (परमात्मा) परमात्मा (उदाहृतः) कहा गया है (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोकों में (आविश्य) प्रवेश करके (बिभर्ति) सबका धारण पोषण करता है एवं (अव्ययः) अविनाशी (ईश्वरः) ईश्+वर =प्रभु श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु है।(17)

केवल हिन्दी अनुवाद : उत्तम प्रभु तो उपरोक्त दोनों प्रभुओं से भी अन्य ही है यह वास्तव में परमात्मा

कहा गया है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है एवं अविनाशी (ईश्+वर) = प्रभु श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु है।(17)

''सर्व प्रभुओं की आयु''

अध्याय 8 का श्लोक 17

सहस्त्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्त्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः। १७।

सहस्त्रयुगपर्यन्तम्, अहः,यत्,ब्रह्मणः, विदुः,रात्रिम्,
युगसहस्त्रान्ताम्, ते, अहोरात्रविदः, जनाः।।17।।

अनुवाद : (ब्रह्मणः) परब्रह्म का (यत्) जो (अहः) एक दिन है उसको (सहस्त्रयुगपर्यन्तम्) एक हजार युग की अवधिवाला और (रात्रिम्) रात्रिको भी (युगसहस्त्रान्ताम्) एक हजार युगतककी अवधिवाली (विदुः) तत्वसे जानते हैं (ते) वे (जनाः) तत्वदर्शी संत (अहोरात्रविदः) दिन–रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)

केवल हिन्दी अनुवाद : परब्रह्म का जो एक दिन है उसको एक हजार युग की अवधिवाला और रात्रिको भी एक हजार युगतककी अवधिवाली तत्वसे जानते हैं वे तत्वदर्शी संत परब्रह्म के दिन-रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)

विशेषः- सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म-काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। ऐसे 70000 (सतर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग अर्थात् एक हजार ब्रह्मलोकिय शिव (ब्रह्मलोक में स्वयं काल ही महाशिव रूप में रहता है) की मृत्यु के बाद काल के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है। इसलिए यहाँ पर परब्रह्म के एक दिन जो एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री होती है। लिखा है।

(1) रजगुण ब्रह्मा की आयुः-*ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का है तथा इतनी ही रात्री है। (एक चतुर्युग में 43,20,000 मनुष्यों वाले वर्ष होते हैं) एक महिना तीस दिन रात का है, एक वर्ष बारह महिनों का है तथा सौ वर्ष की ब्रह्मा जी की आयु है। जो सात करोड़ बीस लाख चतुर्युग की है।*

(2) सतगुण विष्णु की आयुः-*श्री ब्रह्मा जी की आयु से सात गुणा अधिक श्री विष्णु जी की आयु है अर्थात् पचास करोड़ चालीस लाख चतुर्युग की श्री विष्णु जी की आयु है।*

(3) तमगुण शिव की आयुः-*श्री विष्णु जी की आयु से श्री शिव जी की आयु सात गुणा अधिक है अर्थात् तीन अरब बावन करोड़ अस्सी लाख चतुर्युग की श्री शिव की आयु है।*

(4) काल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की आयुः-*सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म/काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। ऐसे 70000 (सतर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय*

महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग का परब्रह्म का एक दिन होता है। परब्रह्म के एक दिन के समापन के पश्चात् काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है तथा काल व प्रकृति देवी(दुर्गा) की मृत्यु होती है। परब्रह्म की रात्री (जो एक हजार युग की होती है) के समाप्त होने पर दिन के प्रारम्भ में काल व दुर्गा का पुनर् जन्म होता है फिर ये एक ब्रह्मण्ड में पहले की भांति सृष्टि प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष का एक दिन एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री है।

अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म की आयु :- *परब्रह्म का एक युग ब्रह्मलोकीय शिव अर्थात् महाशिव (काल ब्रह्म) की आयु के समान होता है। परब्रह्म का एक दिन एक हजार युग का तथा इतनी ही रात्री होती है। इस प्रकार परब्रह्म का एक दिन-रात दो हजार युग का हुआ। एक महिना 30 दिन का एक वर्ष 12 महिनों का तथा परब्रह्म की आयु सौ वर्ष की है। इस से सिद्ध है कि परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष भी नाशवान है। इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 तथा अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में किसी अन्य पूर्ण परमात्मा के विषय में कहा है जो वास्तव में अविनाशी है।*

नोट :- गीता जी के अन्य अनुवाद कर्ताओं ने ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का लिखा है जो उचित नहीं है। क्योंकि मूल संस्कृत में सहंसर युग लिखा है न की चतुर्युग। तथा ब्रह्मणः लिखा है न कि ब्रह्मा। तत्वज्ञान के अभाव से अर्थों का अनर्थ किया है।

भावार्थ - गीता ज्ञान दाता प्रभु ने केवल इतना ही बताया है कि यह संसार उल्टे लटके वृक्ष तुल्य जानो। ऊपर जड़ें (मूल) तो पूर्ण परमात्मा है। नीचे टहनीयां आदि अन्य हिस्से जानों। इस संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का भिन्न-भिन्न विवरण जो संत जानता है वह तत्वदर्शी संत है जिसके विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक नं. 2-3 में केवल इतना ही बताया है कि तीन गुण रूपी शाखा हैं। यहां विचारकाल में अर्थात् गीता में आपको में (गीता ज्ञान दाता) पूर्ण जानकारी नहीं दे सकता क्योंकि मुझे इस संसार की रचना के आदि व अंत का ज्ञान नहीं है। उस के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है कि किसी तत्वदर्शी संत से उस पूर्ण परमात्मा का ज्ञान जानों इस गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में उस तत्वदर्शी संत की पहचान बताई है कि वह संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का ज्ञान कराएगा। उसी से पूछो। गीता अध्याय 15 के श्लोक 4 में कहा है कि उस तत्वदर्शी संत के मिल जाने के पश्चात् उस परमेश्वर के परम पद की खोज करनी चाहिए अर्थात् उस तत्वदर्शी संत के बताए अनुसार साधना करनी चाहिए जिससे पूर्ण मोक्ष(अनादि मोक्ष) प्राप्त होता है। गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं भी उसी की शरण में हूँ। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट किया है कि तीन प्रभु हैं एक क्षर पुरूष (ब्रह्म) दूसरा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) तीसरा परम अक्षर पुरूष (पूर्ण ब्रह्म)। क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी नहीं हैं। वह अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य ही है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है। उस संसार रूपी वृक्ष का चित्र देखें पृष्ठ संख्या 67 पर तथा संक्षिप्त विवरण निम्न पढ़ें :-

उपरोक्त श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में यह प्रमाणित हुआ कि उलटे लटके हुए संसार रूपी वृक्ष की मूल अर्थात् जड़ तो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जिससे पूर्ण वृक्ष का पालन होता है तथा वृक्ष का जो हिस्सा पृथ्वी के बाहर जमीन के साथ दिखाई देता है वह तना होता है उसे अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने से ऊपर चल कर अन्य मोटी डार

निकलती है उनमें से एक डार को ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष जानों तथा उसी डार से अन्य तीन शाखाऐं निकलती हैं उन्हें ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जानों तथा शाखाओं से आगे पत्ते रूप में सांसारिक प्राणी जानों। उपरोक्त गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट है कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा इन दोनों के लोकों में जितने प्राणी हैं उनके स्थूल शरीर तो नाशवान हैं तथा जीवात्मा अविनाशी है अर्थात् उपरोक्त दोनों प्रभु व इनके अन्तर्गत प्राणी नाशवान हैं। भले ही अक्षर पुरुष(परब्रह्म) को अविनाशी कहा है परन्तु वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य है। वह तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका पालन-पोषण करता है। उपरोक्त विवरण में तीन प्रभुओं का भिन्न-भिन्न विवरण दिया है।

उपरोक्त तीनों परमात्माओं की स्थिती को स्पष्ट करने के लिए उदाहरण :- (1)जैसे एक चाय पीने का प्याला होता है जो सफेद मिट्टी का बना होता है। जो हाथ से छुटते ही जमीन पर गिरते ही टुकड़े-2 हो जाता है। यह क्षर प्याला जानो। ऐसी स्थिती ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की जाने। (2) एक प्याला इस्पात (स्टील) का बना होता है। जो मिट्टी के प्याले से अधिक स्थाई है। परन्तु विनाश इस्पात का भी होता है। भले ही समय अधिक लगता है। इसी प्रकार परब्रह्म को अक्षर पुरूष अर्थात् अविनाशी प्रभु कहा है क्योंकि परब्रह्म की मृत्यु उस समय होती है जिस समय तक क्षर पुरूष अर्थात् काल की मृत्यु 36000 (छःत्तीस हजार) बार हो चुकी होती है। परन्तु फिर भी अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी नहीं है।

इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) से दूसरा ही है वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है वही वास्तव में परमात्मा कहा जाता है।

यह प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 20,21,22 में भी है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अध्याय 8 श्लोक 18 में जिस अव्यक्त के विषय में कहा है उससे दुसरा जो सनातन अव्यक्त भाव है वह परम दिव्य पुरूष सब प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। (श्लोक 20) वही अव्यक्त अक्षर इस नाम से कहा गया है उसी पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति को परम गति है। जिस सनातन अव्यक्त परमात्मा को प्राप्त होकर साधक वापस नहीं आते वह मेरा भी परम धाम है अर्थात् मेरा भी उपेक्षित धाम है। (21) हे पार्थ जिस परमात्मा के अन्तर्गत सर्व प्राणी आते हैं जिस परम पुरूष से यह समस्त जगत परिपूर्ण है वह सनातन अव्यक्त अर्थात् परम पुरूष तो अनन्य भक्ति से ही प्राप्त होने योग्य है। यही प्रमाण गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में भी है कहा है कि सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते है अन्न की उत्पति वर्षा से होती है। वर्षा यज्ञ से होती है। यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान शास्त्रविधि अनुसार कर्मों से होती है। कर्म ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष से उत्पन्न हुए क्योंकि हम ब्रह्म काल के लोक में आए तो कर्म करने पड़े क्योंकि यहां कर्म फल ही मिलता है। सतलोक में बिना कर्म ही सर्व फल प्रभु कृपा से प्राप्त होता है। ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की प्राप्ति अविनाशी परमात्मा से हुई। इससे स्पष्ट है कि सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा सदा ही यज्ञ में प्रतिष्ठीत है परम अक्षर परमात्मा के विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 1,8,9,10 में वर्णन हैं

उपरोक्त गीता अध्याय 3 श्लोक 14 से 15 में भी स्पष्ट है कि ब्रह्म काल की उत्पति परम अक्षर पुरूष से हुई वही परम अक्षर ब्रह्म ही यज्ञों में पूज्य है।

"पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुर्आन शरीफ में सृष्टि रचना का प्रमाण"

इसी का प्रमाण पवित्र बाईबल में तथा पवित्र कुर्आन शरीफ में भी है।

कुर्आन शरीफ में पवित्र बाईबल का भी ज्ञान है, इसलिए इन दोनों पवित्र सद्ग्रन्थों ने मिल-जुल कर प्रमाणित किया है कि कौन तथा कैसा है सृष्टि रचनहार तथा उसका वास्तविक नाम क्या है?

पवित्र बाईबल (उत्पत्ति ग्रन्थ पृष्ठ नं. 2 पर, अ. 1:20 - 2:5 पर)

छटवां दिन :– प्राणी और मनुष्य :

अन्य प्राणियों की रचना करके 26. फिर परमेश्वर ने कहा, हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाऐं, जो सर्व प्राणियों को काबू रखेगा। 27. तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया, नर और नारी करके मनुष्यों की सृष्टि की।

29. प्रभु ने मनुष्यों के खाने के लिए जितने बीज वाले छोटे पेड़ तथा जितने पेड़ों में बीज वाले फल होते हैं वे भोजन के लिए प्रदान किए हैं, (मांस खाना नहीं कहा है।)

सातवां दिन :– विश्राम का दिन :

परमेश्वर ने छः दिन में सर्व सृष्टि की उत्पत्ति की तथा सातवें दिन विश्राम किया।

पवित्र बाईबल ने सिद्ध कर दिया कि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप (आकार) जैसा बनाया। इसलिए सिद्ध हुआ कि परमात्मा नराकार अर्थात् मानव सदृश शरीर युक्त है, जिसने छः दिन में सर्व सृष्टि की रचना की तथा फिर विश्राम किया।

पवित्र कुर्आन शरीफ (सुरत फुर्कानि 25, आयत नं. 52, 58, 59)

आयत 52 :– फला तुतिअल् – काफिरन् व जहिद्हुम बिही जिहादन् कबीरा (कबीरन्) ।52।

इसका भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी का खुदा (प्रभु) कह रहा है कि हे पैगम्बर ! आप काफिरों (जो एक प्रभु की भक्ति त्याग कर अन्य देवी–देवताओं तथा मूर्ति आदि की पूजा करते हैं) का कहा मत मानना, क्योंकि वे लोग कबीर को पूर्ण परमात्मा नहीं मानते। आप मेरे द्वारा दिए इस कुर्आन के ज्ञान के आधार पर अटल रहना कि कबीर ही पूर्ण प्रभु है तथा कबीर अल्लाह के लिए संघर्ष करना(लड़ना नहीं) अर्थात् अडिग रहना।

आयत 58 :– व तवक्कल् अलल् – हरिल्लजी ला यमूतु व सब्बिह् बिहम्दिही व कफा बिही बिजुनूबि अिबादिही खबीरा(कबीरा) ।58।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी जिसे अपना प्रभु मानते हैं वह अल्लाह (प्रभु) किसी और पूर्ण प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है कि ऐ पैगम्बर उस कबीर परमात्मा पर विश्वास रख जो तुझे जिंदा महात्मा के रूप में आकर मिला था। वह कभी मरने वाला नहीं है अर्थात् वास्तव में अविनाशी है। तारीफ के साथ उसकी पाकी(पवित्र महिमा) का गुणगान किए जा, वह कबीर अल्लाह (कविर्देव) पूजा के योग्य है तथा अपने उपासकों के सर्व पापों को विनाश करने वाला है।

आयत 59 :– अल्ल्जी खलकस्समावाति वल्अर्ज व मा बैनहुमा फी सित्तति अय्यामिन् सुम्मस्तवा अलल्अर्शि अर्रहमानु फस्अल् बिही खबीरन् (कबीरन्) ।59।।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद को कुर्आन शरीफ बोलने वाला प्रभु (अल्लाह) कह रहा है कि वह कबीर प्रभु वही है जिसने जमीन तथा आसमान के बीच में जो भी विद्यमान है सर्व सृष्टि की रचना छः दिन में की तथा सातवें दिन ऊपर अपने सत्यलोक में सिंहासन पर विराजमान हो (बैठ) गया। उसके विषय में जानकारी किसी (बाखबर) तत्वदर्शी संत से प्राप्त करो। इस से यह भी सिद्ध हुआ

कि कुरान ज्ञान दाता बाखबर अर्थात् पूर्ण ज्ञानी नहीं है।

उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति कैसे होगी? तथा वास्तविक ज्ञान तो किसी तत्वदर्शी संत (बाखबर) से पूछो, मैं (कुरान ज्ञान दाता) नहीं जानता।

उपरोक्त दोनों पवित्र धर्मों (ईसाई तथा मुस्लमान) के पवित्र शास्त्रों ने भी मिल-जुल कर प्रमाणित कर दिया कि सर्व सृष्टि रचनहार, सर्व पाप विनाशक, सर्व शक्तिमान, अविनाशी परमात्मा मानव सदृश शरीर में आकार में है तथा सत्यलोक में रहता है। उसका नाम कबीर है, उसी को अल्लाहु अकबिरू अर्थात् अल्लाहु अक्बर भी कहते हैं।

आदरणीय धर्मदास जी ने पूज्य कबीर प्रभु से पूछा कि हे सर्वशक्तिमान आज तक यह तत्वज्ञान किसी ने नहीं बताया, वेदों के मर्मज्ञ ज्ञानियों ने भी नहीं बताया। इससे सिद्ध है कि चारों पवित्र वेद तथा चारों पवित्र कतेब (कुर्आन शरीफ आदि) झूठे हैं। पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने कहा :-

कबीर, बेद कतेब झूठे नहीं भाई, झूठे हैं जो समझे नाहिं।

भावार्थ है कि चारों पवित्र वेदों (ऋग्वेद - अथर्ववेद - यजुर्वेद - सामवेद) तथा पवित्र चारों कतेबों (कुर्आन शरीफ - जबूर - तौरात - इंजिल) का ज्ञान गलत नहीं हैं। परन्तु जो इनको नहीं समझ पाए वे नादान हैं।

"पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना"

विशेष :- निम्न अमृतवाणी सन् 1403 से {जब पूज्य कविर्देव (कबीर परमेश्वर) लीलामय शरीर में पाँच वर्ष के हुए} सन् 1518 {जब कविर्देव (कबीर परमेश्वर) मगहर स्थान से सशरीर सतलोक गए} के बीच में लगभग 600 वर्ष पूर्व परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी द्वारा अपने निजी सेवक (दास भक्त) आदरणीय धर्मदास साहेब जी को सुनाई थी तथा धनी धर्मदास साहेब जी ने लिपिबद्ध की थी। परन्तु उस समय के पवित्र हिन्दुओं तथा पवित्र मुस्लमानों के नादान गुरुओं (नीम-हकीमों) ने कहा कि यह धाणक (जुलाहा) कबीर झूठा है। किसी भी सद् ग्रन्थ में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता का नाम नहीं है तथा ये तीनों प्रभु अविनाशी है। इनका जन्म मृत्यु कभी नहीं होता न ही पवित्र वेदों व पवित्र कुर्आन शरीफ आदि में कबीर परमेश्वर का प्रमाण है। कहते थे कि सर्वशास्त्रों में परमात्मा तो निराकार लिखा है। भोली आत्माओं ने उन विचक्षणों (चतुर) गुरुओं पर विश्वास कर लिया कि सचमुच यह कबीर धाणक तो अशिक्षित है तथा गुरु जी शिक्षित हैं, सत्य कह रहे होंगे। आज वही सच्चाई प्रकाश में आ रही है तथा अपने सर्व पवित्र धर्मों के पवित्र सद्ग्रन्थ साक्षी हैं। कि परमात्मा साकार है। वही पूर्ण परमात्मा ही जब चाहे प्रकट हो जाता है। वही परमात्मा काशी में कबीर नाम से प्रकट हुआ था। इससे सिद्ध है कि पूर्ण परमेश्वर, सर्व सृष्टि रचनहार, कुल करतार तथा सर्वज्ञ कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही है जो काशी (बनारस) में कमल के फूल पर प्रकट हुए तथा 120 वर्ष तक वास्तविक तेजोमय शरीर के ऊपर मानव सदृश शरीर हल्के तेज का बना कर रहे तथा अपने द्वारा रची सृष्टि का ठीक-ठीक (वास्तविक तत्व) ज्ञान देकर सशरीर सतलोक चले गए। कृपा प्रेमी पाठक पढ़े निम्न अमृतवाणी परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा उच्चारितः-

धर्मदास यह जग बौराना। कोइ न जाने पद निरवाना।।

यहि कारन मैं कथा पसारा। जगसे कहियो एक राम नियारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवोंका भरम नशाओ।।
अब मैं तुमसे कहों चिताई। त्रयदेवनकी उत्पति भाई।।
कुछ संक्षेप कहों गुहराई। सब संशय तुम्हरे मिट जाई।।
भरम गये जग वेद पुराना। आदि रामका का भेद न जाना।।
राम राम सब जगत बखाने। आदि राम कोइ बिरला जाने।।
ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई। मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई।।
मां अष्टंगी पिता निरंजन। वे जम दारुण वंशन अंजन।।
पहिले कीन्ह निरंजन राई। पीछेसे माया उपजाई।।
माया रूप देख अति शोभा। देव निरंजन तन मन लोभा।।
कामदेव धर्मराय सत्ताये। देवी को तुरतही धर खाये।।
पेट से देवी करी पुकारा। साहब मेरा करो उबारा।।
टेर सुनी तब हम तहाँ आये। अष्टंगी को बंद छुड़ाये।।
सतलोक में कीन्हा दुराचारि, काल निरंजन दिन्हा निकारि।।
माया समेत दिया भगाई, सोलह संख कोस दूरी पर आई।।
अष्टंगी और काल अब दोई, मंद कर्म से गए बिगोई।।
धर्मराय को हिकमत कीन्हा। नख रेखा से भगकर लीन्हा।।
धर्मराय किन्हाँ भोग विलासा। मायाको रही तब आसा।।
तीन पुत्र अष्टंगी जाये। ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये।।
तीन देव विस्तार चलाये। इनमें यह जग धोखा खाये।।
पुरुष गम्य कैसे को पावै। काल निरंजन जग भरमावै।।
तीन लोक अपने सुत दीन्हा। सुन्न निरंजन बासा लीन्हा।।
अलख निरंजन सुन्न ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना।।
तीन देव सो उसको धावें। निरंजन का वे पार ना पावें।।
अलख निरंजन बड़ा बटपारा। तीन लोक जिव कीन्ह अहारा।।
ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये। सकल खाय पुन धूर उड़ाये।।
तिनके सुत हैं तीनों देवा। आंधर जीव करत हैं सेवा।।
अकाल पुरुष काहू नहिं चीन्हां। काल पाय सबही गह लीन्हां।।
ब्रह्म काल सकल जग जाने। आदि ब्रह्मको ना पहिचाने।।
तीनों देव और औतारा। ताको भजे सकल संसारा।।
तीनों गुणका यह विस्तारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा।।
गुण तीनों की भक्ति में, भूल परो संसार।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरैं पार।।

उपरोक्त अमृतवाणी में परमेश्वर कबीर साहेब जी सद्ग्रन्थों के वास्तविक ज्ञान को पांच वर्ष की आयु में सन् 1403 में कविर्गिर्भी अर्थात् कबीर वाणी द्वारा बोलना प्रारम्भ कर दिया था। फिर मथुरा में भक्त धर्मदास जी से मिलने के उपरान्त अपने निजी सेवक श्री धर्मदास साहेब जी को कहा है कि धर्मदास यह सर्व संसार तत्वज्ञान के अभाव से विचलित है। किसी को पूर्ण मोक्ष मार्ग तथा पूर्ण सृष्टि रचना का ज्ञान नहीं है। इसलिए मैं आपको मेरे द्वारा रची सृष्टि की कथा सुनाता हूँ। बुद्धिमान व्यक्ति तो तुरंत समझ जायेंगे। परन्तु जो सर्व प्रमाणों को देखकर भी नहीं

मानेंगे तो वे नादान प्राणी काल प्रभाव से प्रभावित हैं, वे भक्ति योग्य नहीं। अब मैं बताता हूँ तीनों भगवानों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) की उत्पत्ति कैसे हुई ? इनकी माता जी तो अष्टंगी (दुर्गा) है तथा पिता ज्योति निरंजन (ब्रह्म/काल) है। पहले ब्रह्म की उत्पत्ति अण्डे से हुई। फिर दुर्गा की उत्पत्ति हुई। दुर्गा के रूप पर आसक्त होकर काल (ब्रह्म) ने गलती (छेड़-छाड़)की, तब दुर्गा (प्रकृति) ने इसके पेट में शरण ली। मैं वहाँ गया जहाँ ज्योति निरंजन काल था। तब भवानी को ब्रह्म के उदर से निकाल कर इक्कीस ब्रह्मण्ड समेत सतलोक से 16 संख कोस की दूरी पर भेज दिया। ज्योति निरंजन (धर्मराय) ने प्रकृति देवी (दुर्गा) के साथ भोग-विलास किया। इन दोनों के संयोग से तीनों गुणों (रजगुण श्री ब्रह्मा जी,सत्गुण श्री विष्णु जी तथा तमगुण श्री शिव जी) की उत्पत्ति हुई। इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की ही साधना करके सर्व प्राणी काल जाल में फंसे हैं। जब तक वास्तविक मंत्र नहीं मिलेगा, पूर्ण मोक्ष कैसे होगा?

तीनों देवता (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) भी इस ब्रह्म अर्थात् काल प्रभु की साधना करते है। यह ब्रह्म इनको भी नहीं मिला है क्योंकि इसने सौंगन्ध खाई है कि मैं किसी भी वेद वर्णीत विधि से या अन्य किसी जप, तप साधना क्रिया से किसी को दर्शन नहीं दूंगा। प्रमाण गीता अध्याय 11 श्लोक 47-48 में है। परमेश्वर कबीर जी ने बताया है कि सब व्यक्ति ब्रह्म की महिमा से परिचित है परन्तु आदि ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को कोई नहीं जानता। तीनों देवताओं तथा ब्रह्म (काल) को सब पूज रहे हैं। जिसके कारण से काल जाल में ही रह जाते हैं। यह ब्रह्म काल अपने पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) को भी खाता है। फिर नए ब्रह्मा, विष्णु, शिव उत्पन्न कर लेता है। इस प्रकार अपने ब्रह्मण्डों में सर्व को धोखे में रखता है। स्वयं उपर शुन्य स्थान पर भिन्न रहता है। यह कबीर परमेश्वर जी ने सर्व काल का जाल बताया है।

विशेषः- प्रिय पाठक विचार करें कि श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की स्थिती अविनाशी बताई गई थी। सर्व हिन्दु समाज अभी तक तीनों परमात्माओं को अजर, अमर व जन्म-मृत्यु रहित मानते रहे जबकि ये तीनों नाशवान हैं। इन के पिता काल रूपी ब्रह्म तथा माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टांगी) हैं जैसा आप ने पूर्व प्रमाणों में पढ़ा यह ज्ञान अपने शास्त्रों में भी विद्यमान है परन्तु हिन्दु समाज के कलयुगी गुरुओं, ऋषियों, सन्तों को ज्ञान नहीं। जो अध्यापक पाठ्यक्रम (सलेबस) से ही अपरिचित है वह अध्यापक ठीक नहीं (विद्वान नही) है, विद्यार्थीयों के भविष्य का शत्रु है। इसी प्रकार जिन गुरुओं को अभी तक यह नहीं पता कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी के माता-पिता कौन हैं? तो वे गुरु, ऋषि,सन्त ज्ञान हीन हैं। जिस कारण से सर्व भक्त समाज को शास्त्र विरूद्ध ज्ञान (लोक वेद अर्थात् दन्त कथा) सुना अज्ञान से परिपूर्ण कर दिया। शास्त्रविधि विरूद्ध भक्तिसाधना करा के परमात्मा के वास्तविक लाभ (पूर्ण मोक्ष) से वंचित रखा सबका मानव जन्म नष्ट करा दिया क्योंकि श्री मद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में यही प्रमाण है कि जो शास्त्रविधी त्यागकर मनमाना आचरण पूजा करता है। उसे कोई लाभ नहीं होता पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने सन् 1403 से ही सर्व शास्त्रों युक्त ज्ञान अपनी अमृतवाणी (कविरवाणी) में बताना प्रारम्भ किया था। परन्तु उन अज्ञानी गुरुओं ने यह ज्ञान भक्त समाज तक नहीं जाने दिया। जो अब स्पष्ट हो रहा है इससे सिद्ध है कि कविर्देव (कबीर प्रभु) तत्वदर्शी सन्त रूप में स्वयं पूर्ण परमात्मा ही आए थे।

"आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण"

सन्त गरीबदास जी की आत्मा को परमेश्वर कबीर जी सत्यलोक लेकर गए तथा सर्व ब्रह्मण्डों के दर्शन कराए। तत्वज्ञान से परिचित कराए फिर उनकी आत्मा को शरीर में पुनर् से प्रवेश किया उस के पश्चात् सन्त गरीबदास जी ने आँखों देखा तथा कबीर परमेश्वर से सुने यथार्थ ज्ञान को अपनी वाणी में वर्णन किया।

आदि रमैणी (सद् ग्रन्थ पृष्ठ नं. 690 से 692 तक)

आदि रमैंणी अदली सारा। जा दिन होते धुंधुंकारा।।1।।
सत्त पुरुष कीन्हा प्रकाशा। हम होते तखत कबीर खवासा ।।2।।
मन मोहिनी सिरजी माया। सतपुरुष एक ख्याल बनाया।।3।।
धर्मराय सिरजे दरबानी। चौसठ जुगतप सेवा ठांनी।।4।।
पुरुष पृथिवी जाकूं दीन्ही। राज करो देवा आधीनी।।5।।
ब्रह्मण्ड इकीस राज तुम्ह दीन्हा। मन की इच्छा सब जुग लीन्हा।।6।।
माया मूल रूप एक छाजा। मोहि लिये जिनहूँ धर्मराजा।।7।।
धर्म का मन चंचल चित धार्या। मन माया का रूप बिचारा।।8।।
चंचल चेरी चपल चिरागा। या के परसे सरबस जागा।।9।।
धर्मराय कीया मन का भागी। विषय वासना संग से जागी।।10।।
आदि पुरुष अदली अनरागी। धर्मराय दिया दिल सें त्यागी।।11।।
पुरुष लोक सें दीया ढहाही। अगर द्वीप चलि आये भाई।।12।।
सहज दास जिस द्वीप रहंता। कारण कौंन कौंन कुल पंथा।।13।।
धर्मराय बोले दरबानी। सुनो सहज दास ब्रह्मज्ञानी।।14।।
चौसठ जुग हम सेवा कीन्ही। पुरुष पृथिवी हम कूं दीन्ही।।15।।
चंचल रूप भया मन बौरा। मनमोहिनी ठगिया भौंरा।।16।।
सतपुरुष के ना मन भाये। पुरुष लोक से हम चलि आये।।17।।
अगर द्वीप सुनत बड़भागी। सहज दास मेटो मन पागी।।18।।
बोले सहजदास दिल दानी। हम तो चाकर सत सहदानी।।19।।
सतपुरुष सें अरज गुजारूं। जब तुम्हारा बिवाण उतारूं।।20।।
सहज दास को कीया पीयाना। सत्यलोक लीया प्रवाना।।21।।
सतपुरुष साहिब सरबंगी। अविगत अदली अचल अभंगी।।22।।
धर्मराय तुम्हरा दरबानी। अगर द्वीप चलि गये प्रानी।।23।।
कौंन हुकम करी अरज अवाजा। कहां पठावौ उस धर्मराजा।।24।।
भई अवाज अदली एक साचा। विषय लोक जा तीन्यूं बाचा।।25।।
सहज विमांन चले अधिकाई। छिन में अगर द्वीप चलि आई।।26।।
हमतो अरज करी अनरागी। तुम्ह विषय लोक जावो बड़भागी।।27।।
धर्मराय के चले विमाना। मानसरोवर आये प्राना।।28।
मानसरोवर रहन न पाये। दरै कबीरा थांना लाये।।29।।
बंकनाल की विषमी बाटी। तहां कबीरा रोकी घाटी।।30।।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर रु माया। धर्मराय का राज पठाया।।31।।
इन पाँचों मिलि जगत बंधाना। लख चौरासी जीव संताना।।32।।

यौह खोखा पुर झूठी बाजी। भिसति बैकुण्ठ दगासी साजी।।33।।
कृतिम जीव भुलांनें भाई। निज घर की तो खबरि न पाई।।34।।
सवा लाख उजपें नित हंसा। एक लाख विनशें नित अंसा।।35।।
उपति खपति याह प्रलय फेरी। हर्ष शोक जौंरा जम जेरी।।36।।
पाँचों तत्त्व हैं प्रलय मांही। सत्त्वगुण रजगुण तमगुण झांई।।37।।
आठों अंग मिली है माया। पिण्ड ब्रह्मण्ड सकल भरमाया।।38।।
या में सुरति शब्द की डोरी। पिण्ड ब्रह्मण्ड लगी है खोरी।।39।।
श्वासा पारस मन गह राखो। खोल्हि कपाट अमीरस चाखो।।40।।
सुनाऊं हंस शब्द सुन दासा। सत्य लोक है अग है बासा।।41।।
भवसागर जम दण्ड जमाना। धर्मराय का है तलबांना।।42।।
पाँचों ऊपर पद की नगरी। बाट बिहंगम बंकी डगरी।।43।।
हमरा धर्मराय सों दावा। भवसागर में जीव भरमावा।।44।।
हम तो कहैं अगम की बानी। जहां अविगत अदली आप बिनानी।।45।।
बंदी छोड़ हमारा नामं। अजर अमर है अस्थीर ठामं।।46।।
जुगन जुगन हम कहते आये। जम जौंरा सें हंस छुटाये।।47।।
जो कोई मानें शब्द हमारा। भवसागर नहीं भरमें धारा।।48।।
या में सुरति शब्द का लेखा। तन अंदर मन कहो कीन्ही देखा।।49।।
दास गरीब अगम की बानी। खोजा हंसा शब्द सहदानी।।50।।

भावार्थ :– ***उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि परमेश्वर कबीर जी से प्राप्त ज्ञान के आधार पर आदरणीय गरीबदास साहेब जी ने कहा है कि यहाँ पहले केवल अंधकार था तथा पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी सत्यलोक में तख्त (सिंहासन) पर विराजमान थे। हम वहाँ ख्वास अर्थात् चाकर थे। परमात्मा ने ज्योति निरंजन को उत्पन्न किया। फिर उसके तप के प्रतिफल में इक्कीस ब्रह्मण्ड प्रदान किए। फिर माया (प्रकृति) की उत्पत्ति की। युवा दुर्गा के रूप पर मोहित होकर ज्योति निरंजन (ब्रह्म) ने दुर्गा (प्रकृति) से बलात्कार करने की चेष्टा की। ब्रह्म को उसकी सजा मिली। उसे सत्यलोक से निकाल दिया तथा शाप लगा कि एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करेगा, सवा लाख उत्पन्न करेगा। यहाँ सर्व प्राणी जन्म-मृत्यु का कष्ट उठा रहे हैं। यदि कोई पूर्ण परमात्मा का वास्तविक शब्द (सच्चानाम जाप मंत्र) हमारे से प्राप्त करेगा, उसको काल की बंद से छुड़वा देंगे। बन्दी छोड़ कबीर जी ने कहा है कि हमारा बन्दी छोड़ नाम है। आदरणीय गरीबदास जी अपने गुरु व प्रभु कबीर परमात्मा के आधार पर कह रहे हैं कि सच्चे मंत्र अर्थात् सत्यनाम व सारशब्द की प्राप्ति कर लो, पूर्ण मोक्ष हो जायेगा। नहीं तो नकली नाम दाता संतों व महन्तों की मीठी-मीठी बातों में फंस कर शास्त्र विधि रहित साधना करके काल जाल में रह जाओगे। फिर कष्ट पर कष्ट उठाओगे।***

।।सन्त गरीबदास जी महाराज की वाणी।।
(सत ग्रन्थ साहिब पृष्ठ नं. 690 से सहाभार)

माया आदि निरंजन भाई, अपने जाऐ आपै खाई।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर चेला, ऊँ सोहं का है खेला।।
सिखर सुन्न में धर्म अन्यायी, जिन शक्ति डायन महल पठाई।।

लाख ग्रास नित उठ दूती, माया आदि तख्त की कुती।।
सवा लाख घड़िये नित भांडे, हंसा उतपति परलय डांडे।
ये तीनों चेला बटपारी, सिरजे पुरुषा सिरजी नारी।।
खोखापुर में जीव भुलाये, स्वपन बहिस्त वैकुंठ बनाये।
यो हरहट का कुआ लोई, या गल बंधा है सब कोई।।
कीड़ी कुजंर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।
अरब अलील इन्द्र हैं भाई, हरहट डोरी बंधे सब आई।।
शेष महेश गणेश्वर ताहिं, हरहट डोरी बंधे सब आहिं।
शुक्रादिक ब्रह्मादिक देवा, हरहट डोरी बंधे सब खेवा।।
कोटिक कर्ता फिरता देख्या, हरहट डोरी कहूँ सुन लेखा।
चतुर्भुजी भगवान कहावैं, हरहट डोरी बंधे सब आवैं।।
यो है खोखापुर का कुआ, या में पड़ा सो निश्चय मुवा।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ *:- ज्योति निरंजन (कालबलि) के वश होकर के ये तीनों देवता (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) अपनी महिमा दिखाकर जीवों को स्वर्ग नरक तथा भवसागर में (लख चौरासी योनियों में) भटकाते रहते हैं। ज्योति निरंजन अपनी पत्नी दुर्गा अर्थात् माया के संयोग से नागिनी की तरह जीवों को पैदा करता है और फिर मार देता है। जिस प्रकार नागिनी अपनी कुण्डली बनाती है तथा उसमें अण्डे देती है और फिर उन अण्डों पर अपना फन मारती है। जिससे अण्डा फूट जाता है और उसमें से बच्चा निकल जाता है। उसको नागिनी खा जाती है। फन मारते समय कई अण्डे फूट जाते हैं क्योंकि नागिनी के काफी अण्डे होते हैं। जो अण्डे फूटते हैं उनमें से बच्चे निकलते हैं यदि कोई बच्चा कुण्डली (सर्पनी की दुम का घेरा) से बाहर निकल जाता है तो वह बच्चा बच जाता है नहीं तो कुण्डली में वह (नागिनी) छोड़ती नहीं। जितने बच्चे उस कुण्डली के अन्दर होते हैं उन सबको खा जाती है।*

माया काली नागिनी, अपने जाये खात। कुण्डली में छोड़ै नहीं, सौ बातों की बात।।

इसी प्रकार यह कालबली का जाल है। निरंजन तक की भक्ति संत से नाम लेकर करेगें तो भी इस निरंजन की कुण्डली (इक्कीस ब्रह्मण्डों) से बाहर नहीं निकल सकते। स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदि माया शेराँवाली भी निरंजन की कुण्डली में है। ये बेचारे अवतार धार कर आते हैं और जन्म-मृत्यु का चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए विचार करें सोहं जाप जो कि ध्रूव व प्रहलाद व शुकदेव ऋषि ने जपा। वह भी पार नहीं हुए। काल लोक में ही रहे तथा 'ऊँ नमः भगवते वासुदेवायः' मन्त्र जाप करने वाले भक्त भी कृष्ण तक की भक्ति कर रहे हैं, वे भी चौरासी लाख योनियों के चक्कर काटने से नहीं बच सकते। यह परम पूज्य कबीर साहिब जी व आदरणीय गरीबदास साहेब जी महाराज की वाणी प्रत्यक्ष प्रमाण देती है।

अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविन्द। कर्ता हो हो अवतरे, बहुर पड़े जग फंध।।

भावार्थ :– *सतपुरुष कबीर साहिब जी की भक्ति से ही जीव मुक्त हो सकता है।*

जब तक जीव सतलोक में वापिस नहीं चला जाएगा तब तक काल लोक में इसी तरह कर्म करेगा और की हुई नाम व दान धर्म के भक्ति धन के स्वर्ग रूपी होटलों में समाप्त कर के वापिस कर्माधार से चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाने वाले कर्म आधार से काल लोक में चक्कर काटता रहेगा। माया (दुर्गा) से उत्पन्न हो कर करोड़ों गोबिन्द (ब्रह्मा-विष्णु-शिव) मर चुके हैं। भगवान का अवतार बन कर आये थे। फिर कर्म बन्धन में बन्ध कर कर्मों को भोग कर

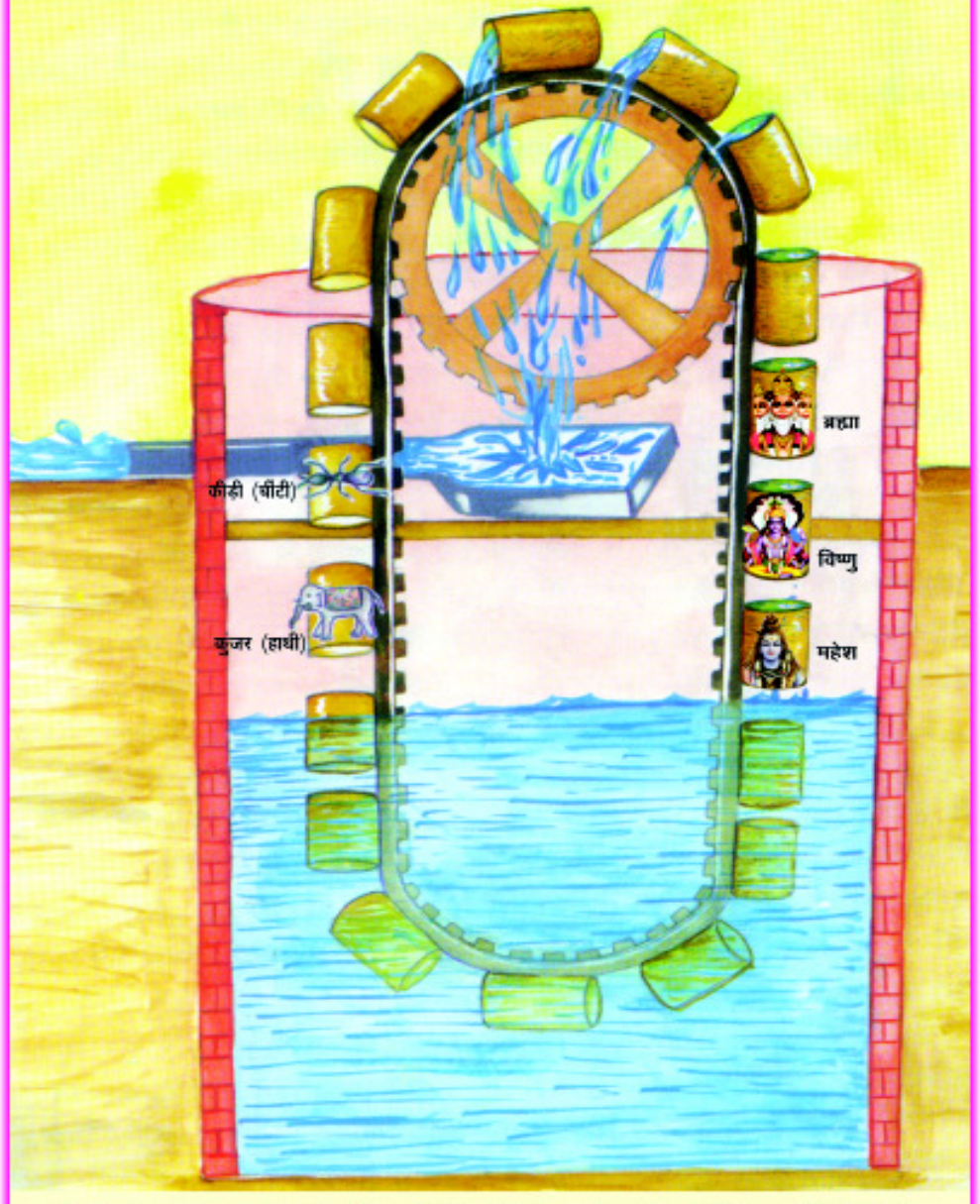

योह हरहट का कुआँ लोई, या गल बंध्या है सब कोई।
कीड़ी कुंजर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।।

काल लोक में जन्म-मरण रूपी हरहट (चक्र)

चौरासी लाख योनियों में चले गए। जैसे भगवान विष्णु जी को देवर्षि नारद का शाप लगा। वे श्री रामचन्द्र रूप में अयोध्या में आए। फिर श्री राम जी रूप में बाली का वध किया था। उस कर्म का दण्ड भोगने के लिए श्री कृष्ण जी का जन्म हुआ। फिर बाली वाली आत्मा शिकारी बना तथा अपना प्रतिशोद्ध लिया। श्री कृष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मार कर वध किया। महाराज गरीबदास जी अपनी वाणी में कहते हैं :

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया, और धर्मराय कहिये।
इन पाँचों मिल परपंच बनाया, वाणी हमरी लहिये।।
इन पाँचों मिल जीव अटकाये, जुगन–जुगन हम आन छुटाये।
बन्दी छोड़ हमारा नामं, अजर अमर है अस्थिर ठामं।।
पीर पैगम्बर कुतुब औलिया, सुर नर मुनिजन ज्ञानी।
येता को तो राह न पाया, जम के बंधे प्राणी।।
धर्मराय की धूमा–धामी, जम पर जंग चलाऊँ।
जौरा को तो जान न दूगां, बांध अदल घर ल्याऊँ।।
काल अकाल दोहूँ को मोसूं, महाकाल सिर मूंडू।
मैं तो तख्त हजूरी हुकमी, चोर खोज कूं ढूंढू।।
मूला माया मग में बैठी, हंसा चुन–चुन खाई।
ज्योति स्वरूपी भया निरंजन, मैं ही कर्ता भाई।।
एक न कर्ता दो न कर्ता दश ठहराए भाई।
दशवां भी धूंध्र में मिलसी सत कबीर दुहाई।।
संहस अठासी द्वीप मुनीश्वर, बंधे मुला डोरी।
ऐत्यां में जम का तलबाना, चलिए पुरुष कीशोरी।।
मूला का तो माथा दागूं, सतकी मोहर करूंगा।
पुरुष दीप कूं हंस चलाऊँ, दरा न रोकन दूंगा।।
हम तो बन्दी छोड़ कहावां, धर्मराय है चकवै।
सतलोक की सकल सुनावां, वाणी हमरी अखवै।।
नौ लख पटट्न ऊपर खेलूं, साहदरे कूं रोकूं।
द्वादस कोटि कटक सब काटूं, हंस पठाऊँ मोखूं।।
चौदह भुवन गमन है मेरा, जल थल में सरबंगी।
खालिक खलक खलक में खालिक, अविगत अचल अभंगी।।
अगर अलील चक्र है मेरा, जित से हम चल आए।
पाँचों पर प्रवाना मेरा, बंधि छुटावन धाये।।
जहां ओंकार निरंजन नाहीं, ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं जाहीं।
जहां कर्त्ता नहीं अन्य भगवाना, काया माया पिण्ड न प्राणा।।
पाँच तत्व तीनों गुण नाहीं, जौरा काल उस द्वीप नहीं जाँहीं।
अमर करूं सतलोक पठाँऊ, तातैं बन्दी छोड़ कहाऊँ।।
बन्दी छोड़ कबीर गुसांइ। झिलमलै नूर द्रव झांइ।।

भावार्थ :- ***सन्त गरीब दास जी ने परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी से तत्वज्ञान प्राप्त होने के पश्चात् बताया कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु, श्री शिव तथा माया अर्थात् दुर्गा देवी व ज्योति निरंजन अर्थात् काल, इन पांचों ने मिल कर सर्व प्राणियों को जाल में फंसाए रखने का षड़यंत्र रचा है। हम***

जो वचन कह रहे हैं इनको ध्यान पूर्वक सुनों तथा गहराई से विचार करो। परमेश्वर बन्दी छोड़ जी हैं। उनका सत्यलोक स्थान शाशवत अर्थात् अविनाशी है। सुर नर अर्थात् देव लोग व मुनि -ज्ञानी अर्थात् परमात्मा प्राप्ति में लगे मनशील ज्ञानीजन इन सर्व को पूर्ण मोक्ष मार्ग प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए सर्व ऋषिजन व देवता काल जाल में ही फंसे हैं। गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि यह ज्ञानी आत्माएं जो परमात्मा प्राप्ति के लिए प्रयत्न शील है ये हैं तो नेक परन्तु तत्वदर्शी सन्त के अभाव से मेरी अनुत्तम (अश्रेष्ठ) साधना में लीन हैं। यही प्रमाण कबीर जी ने दिया है :- कबीर, सुर नर मुनि जन तेतीस करोड़ी, बन्धे सबै निरंजन डोरी।

भावार्थ है कि सर्व मुनि, ऋषि तथा तेतीस करोड़ देवता काल साधना करके काल की डोरी से ही बन्धे हैं अर्थात् ब्रह्म काल के नियमानुसार जन्म मृत्यु तथा कर्मदण्ड भोगते रहते हैं। पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं होता। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा है कि जो निरधारित समय अनुसार छोटी आयु में मृत्यु को प्राप्त होते या निरधारित समय से पहले अर्थात् अकाल मृत्यु को प्राप्त होते, उन दोनों प्रकार की मृत्यु को टाल कर पूरा जीवन अपनी कृपा से प्रदान कर देता है तथा इस काल मृत्यु तथा अकाल मृत्यु का मुख्य कारण महाकाल अर्थात् ज्योति निरंजन जो इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में वास्तविक काल रूप में विराजमान है उस चोर को ढूढ़ लिया है उस का प्रभाव भी अपने साधक से समाप्त कर दूगाँ। काल ने अपनी पत्नी दुर्गा द्वारा जाल फैलवाया है। जिस कारण से प्राणी पूर्ण परमात्मा तक नहीं जा पाते इस दुर्गा को भी दण्ड देता हूँ। तब अपना नाम व सारनाम दे कर पार करता हूँ।

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की महिमा जताते हुए आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि हमारे प्रभु कविर् (कविर्देव) बन्दी छोड़ हैं। (बन्दी छोड़ का भावार्थ है काल की कारागार से छुटवाने वाला,) काल ब्रह्म के इक्कीश ब्रह्मण्डों में सर्व प्राणी पापों के कारण काल के बंदी हैं। पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब पाप का विनाश कर देता है। पापों का विनाश न ब्रह्म, न परब्रह्म, न ही ब्रह्मा, न विष्णु, न शिव जी कर सकते। केवल जैसा कर्म है, उसका वैसा ही फल दे देते हैं। इसीलिए यजुर्वेद अध्याय 5 के मन्त्र 32 में लिखा है 'कविरंघारिरसि' कविर्देव पापों का शत्रु है, 'बम्भारिरसि' बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है।

इन पाँचों (ब्रह्मा-विष्णु-शिव-माया और धर्मराय) से उपर सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) है। जो सतलोक का मालिक है। शेष सर्व परब्रह्म-ब्रह्म तथा ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी व आदि माया नाशवान परमात्मा हैं। महाप्रलय में ये सब तथा इनके लोक समाप्त हो जाएंगे। आम जीव से कई हजार गुणा ज्यादा लम्बी इनकी आयु है। परन्तु जो समय निर्धारित है वह एक दिन पूरा अवश्य होगा। आदरणीय गरीबदास जी महाराज कहते हैं :

शिव ब्रह्मा का राज, इन्द्र गिनती कहां। चार मुक्ति वैकुंण्ठ समझ, येता लह्या।।
संख जुगन की जुनी, उम्र बड़ धारिया। जा जननी कुर्बान, सु कागज पारिया।।
येती उम्र बुलंद मरैगा अंत रे। सतगुरु लगे न कान, न भैंटे संत रे।।

चाहे संख युग की लम्बी उम्र भी क्यों न हो वह एक दिन समाप्त अवश्य होगी। यदि सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब के नुमांयदे पूर्ण संत (सतगुरु) जो तीन नाम का मंत्र (जिसमें एक ओ३म तथा तत् + सत् सांकेतिक हैं) देता है तथा उसे पूर्ण संत द्वारा नाम दान करने का आदेश है, उससे उपदेश लेकर नाम की कमाई करेंगे तो हम सतलोक के अधिकारी हंस हो सकते हैं। सत्य साधना बिना बहुत लम्बी उम्र कोई काम नहीं आएगी क्योंकि निरंजन लोक में दुःख ही दुःख है।

कबीर, जीवना तो थोड़ा ही भला, जै सत सुमरन होय।
लाख वर्ष का जीवना, लेखै धरै ना कोय।।

कबीर साहिब अपनी (पूर्णब्रह्म की) जानकारी स्वयं बताते हैं कि इन परमात्माओं से ऊपर असंख भुजा का परमात्मा सतपुरुष है जो सत्यलोक (सच्च खण्ड, सतधाम) में रहता है तथा उसके अन्तर्गत सर्वलोक [ब्रह्म (काल) के 21 ब्रह्मण्ड व ब्रह्मा, विष्णु, शिव शक्ति के लोक तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड व अन्य सर्व ब्रह्मण्ड] आते हैं और वहाँ पर सत्यनाम-सारनाम के जाप द्वारा जाया जाएगा जो पूरे गुरु से प्राप्त होता है। सच्चखण्ड (सतलोक) में जो आत्मा चली जाती है उसका पुनर्जन्म नहीं होता। सतपुरुष (पूर्णब्रह्म) कबीर साहेब (कविर्देव) ही अन्य लोकों में स्वयं ही भिन्न-भिन्न नामों से विराजमान है। जैसे अलख लोक में अलख पुरुष, अगम लोक में अगम पुरुष तथा अकह लोक में अनामी पुरुष रूप में विराजमान है। ये तो उपमात्मक नाम हैं, परन्तु वास्तविक नाम उस पूर्ण पुरुष का कविर्देव (भाषा भिन्न होकर कबीर साहेब) है।

"आदरणीय नानक साहेब जी की वाणी में सृष्टि रचना का संकेत"

श्री नानक साहेब जी की अमृतवाणी, महला 1, राग बिलावलु, अंश 1 (गु.ग्र. पृ. 839)

आपे सचु कीआ कर जोड़ि। अंडज फोड़ि जोडि विछोड़।।
धरती आकाश कीए बैसण कउ थाउ। राति दिनंतु कीए भउ–भाउ।।
जिन कीए करि वेखणहारा। (3)
त्रितीआ ब्रह्मा–बिसनु–महेसा। देवी देव उपाए वेसा।। (4)
पउण पाणी अगनी बिसराउ। ताही निरंजन साचो नाउ।।
तिसु महि मनुआ रहिआ लिव लाई। प्रणवति नानकु कालु न खाई।। (10)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि सच्चे परमात्मा (सतपुरुष) ने स्वयं ही अपने हाथों से सर्व सृष्टि की रचना की है। उसी ने अण्डा बनाया फिर फोड़ा तथा उसमें से ज्योति निरंजन निकला। उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व प्राणियों के रहने के लिए धरती, आकाश, पवन, पानी आदि पाँच तत्व रचे। अपने द्वारा रची सृष्टि का स्वयं ही साक्षी है। दूसरा कोई सही जानकारी नहीं दे सकता। फिर अण्डे के फूटने से निकले निरंजन के बाद तीनों श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की उत्पत्ति हुई तथा अन्य देवी-देवता उत्पन्न हुए तथा अनगिन जीवों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद अन्य देवों के जीवन चरित्र तथा अन्य ऋषियों के अनुभव के छः शास्त्र तथा अठारह पुराण बन गए। पूर्ण परमात्मा के सच्चे नाम (सत्यनाम) की साधना अनन्य मन से करने से तथा गुरु मर्यादा में रहने वाले (प्रणवति) को श्री नानक जी कह रहे हैं कि काल नहीं खाता।

राग मारु (अंश) अमृतवाणी महला 1 (गु.ग्र.पृ. 1037)

सुनहु ब्रह्मा, बिसनु, महेसु उपाए। सुने वरते जुग सबाए।।
इसु पद बिचारे सो जनु पुरा। तिस मिलिए भरमु चुकाइदा।। (3)
साम वेदु, रुगु जुजरु अथरबणु। ब्रहमें मुख माइआ है त्रैगुण।।
ता की कीमत कहि न सकै। को तिउ बोले जिउ बुलाईदा।। (9)

उपरोक्त अमृतवाणी का सारांश है कि जो संत पूर्ण सृष्टि रचना सुना देगा तथा बताएगा कि अण्डे के दो भाग होकर कौन निकला, जिसने फिर ब्रह्मलोक की सुन्न में अर्थात् गुप्त स्थान

पर ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी की उत्पत्ति की तथा वह परमात्मा कौन है जिसने ब्रह्म (काल) के मुख से चारों वेदों (पवित्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) को उच्चारण करवाया, वह पूर्ण परमात्मा जैसा चाहे वैसे ही प्रत्येक प्राणी को बुलवाता है। इस सर्व ज्ञान को पूर्ण बताने वाला सन्त मिल जाए तो उसके पास जाइए तथा जो सर्व शंकाओं का पूर्ण निवारण करता है, वही पूर्ण सन्त अर्थात् तत्वदर्शी है।

श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ 929 अमृत वाणी श्री नानक साहेब जी की राग रामकली महला 1 दखणी ओअंकार

ओअंकारि ब्रह्मा उतपति। ओअंकारू कीआ जिनि चित। ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए। ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरुमुखि तरे। ओनम अखर सुणहू बीचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि ओंकार अर्थात् ज्योति निरंजन (काल) से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई। कई युगों मस्ती मार कर ओंकार (ब्रह्म) ने वेदों की उत्पत्ति की जो ब्रह्मा जी को प्राप्त हुए। तीन लोक की भक्ति का केवल एक ओ३म् मंत्र ही वास्तव में जाप करने का है। इस ओ३म् शब्द को पूरे संत से उपदेश लेकर मन्त्र जाप करने से उद्धार होता है।

विशेष :– श्री नानक साहेब जी ने तीनों मंत्रों (ओ३म् + तत् + सत्) का स्थान - स्थान पर रहस्यात्मक विवरण दिया है। उसको केवल पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) ही समझ सकता है तथा तीनों मंत्रों के जाप को उपदेशी को समझाया जाता है।

(पृ. 1038) उत्तम सतिगुरु पुरुष निराले, सबदि रते हरि रस मतवाले।
रिधि, बुधि, सिधि, गिआन गुरु ते पाइए, पूरे भाग मिलाईदा।। (15)
सतिगुरु ते पाए बीचारा, सुन समाधि सचे घरबारा।
नानक निरमल नादु सबद धुनि, सचु रामैं नामि समाइदा (17)।।5।।17।।

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि वास्तविक ज्ञान देने वाले सतगुरु तो निराले ही हैं, वे केवल नाम जाप को जपते हैं, अन्य हठयोग साधना नहीं बताते। यदि आप को धन दौलत, पद, बुद्धि या भक्ति शक्ति भी चाहिए तो वह भक्ति मार्ग का ज्ञान पूर्ण संत ही पूरा प्रदान करेगा, ऐसा पूर्ण संत बड़े भाग्य से ही मिलता है। वही पूर्ण संत विवरण बताएगा कि ऊपर सुन्न (आकाश) में अपना वास्तविक घर (सत्यलोक) परमेश्वर ने रच रखा है।

उसमें एक वास्तविक सार नाम की धुन (आवाज) हो रही है। उस आनन्द में अविनाशी परमेश्वर के सार शब्द से समाया जाता है अर्थात् उस वास्तविक सुखदाई स्थान में वास हो सकता है, अन्य नामों तथा अधूरे गुरुओं से नहीं हो सकता।

आंशिक अमृतवाणी महला पहला (श्री गु. ग्र. पृ. 359-360)

सिव नगरी महि आसणि बैसउ कलप त्यागी वादं। (1)
सिंडी सबद सदा धुनि सोहै अहिनिसि पूरै नादं। (2)
हरि कीरति रह रासि हमारी गुरु मुख पंथ अतीत (3)
सगली जोति हमारी संमिआ नाना वरण अनेकं।
कह नानक सुणि भरथरी जोगी पारब्रह्म लिव एकं। (4)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे भरथरी योगी जी आप की साधना भगवान शिव तक है, उससे आप को शिव नगरी (लोक) में स्थान मिला

है और शरीर में जो सिंगी शब्द आदि हो रहा है वह इन्हीं कमलों का है तथा टेलीविजन की तरह प्रत्येक देव के लोक से शरीर में सुनाई दे रहा है।

हम तो एक परमात्मा पारब्रह्म अर्थात् सर्व के पार अन्य किसी और एक परमात्मा में लौ (अनन्य मन से लग्न) लगाते हैं।

हम ऊपरी दिखावा (भस्म लगाना, हाथ में दंडा रखना) नहीं करते। मैं तो सर्व प्राणियों को एक पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) की सन्तान समझता हूँ। सर्व उसी शक्ति से चलायमान हैं। हमारी मुद्रा तो सच्चा नाम जाप गुरु से प्राप्त करके करना है तथा क्षमा करना हमारा बाणा (वेशभूषा) है। मैं तो पूर्ण परमात्मा का उपासक हूँ तथा जो साधना आप करते हैं पूर्ण सतगुरु का भक्ति मार्ग इससे भिन्न है।

अमृत वाणी राग आसा महला 1 (श्री गु. ग्र. पृ. 420)

।।आसा महला 1।। जिनी नामु विसारिआ दूजै भरमि भुलाई। मूलु छोड़ि डाली लगे किआ पावहि छाई।।1।। साहिबु मेरा एकु है अवरु नहीं भाई। किरपा ते सुखु पाइआ साचे परथाई।।3।। गुर की सेवा सो करे जिसु आपि कराए। नानक सिरु दे छूटीऐ दरगह पति पाए।।8।।18।।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि जो पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम भूल कर अन्य भगवानों के नामों के जाप में भ्रम रहे हैं वे तो ऐसा कर रहे हैं कि मूल (पूर्ण परमात्मा) को छोड़ कर डालियों (तीनों गुण रूप रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिवजी) की सिंचाई (पूजा) कर रहे हैं। उस साधना से कोई सुख नहीं हो सकता अर्थात् पौधा सूख जाएगा तो छाया में नहीं बैठ पाओगे। भावार्थ है कि शास्त्र विधि रहित साधना करने से व्यर्थ प्रयत्न है। कोई लाभ नहीं। इसी का प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी है। उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने के लिए मनमुखी (मनमानी) साधना त्याग कर पूर्ण गुरुदेव को समर्पण करने से तथा सच्चे नाम के जाप से ही मोक्ष संभव है, नहीं तो मृत्यु के उपरांत नरक जाएगा।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 843-844)

।।बिलावलु महला 1।। मैं मन चाहु घणा साचि विगासी राम। मोही प्रेम पिरे प्रभु अबिनासी राम।। अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ। किरपालु सदा दइआलु दाता जीआ अंदरि तूं जीऐ। मैं आधारु तेरा तू खसमु मेरा मै ताणु तकीआ तेरओ। साचि सूचा सदा नानक गुरसबदि झगरु निबेरओ।।4।।2।।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि अविनाशी पूर्ण परमात्मा नाथों का भी नाथ है अर्थात् देवों का भी देव (सर्व प्रभुओं श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म पर भी नाथ है अर्थात् स्वामी है) मैं तो सच्चे नाम को हृदय में समा चुका हूँ। हे परमात्मा ! सर्व प्राणी का जीवन आधार भी आप ही हो। मैं आपके आश्रित हूँ आप मेरे मालिक हो। आपने ही गुरु रूप में आकर सत्यभक्ति का निर्णायक ज्ञान देकर सर्व झगड़ा निपटा दिया अर्थात् सर्व शंका का समाधान कर दिया।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 721, राग तिलंग महला 1)

यक अर्ज गुफतम् पेश तो दर कून करतार।
हक्का कबीर करीम तू बेअब परवरदिगार।
नानक बुगोयद जन तुरा तेरे चाकरां पाखाक।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री सन्त नानक जी ने स्पष्ट कर दिया कि हे (हक्का कबीर)

सत्कबीर आप (कून करतार) शब्द शक्ति से रचना करने वाले शब्द स्वरूपी प्रभु अर्थात् सर्व सृष्टि के रचन हार हो, आप ही (बेएब) निर्विकार (परवरदिगार) सर्व के पालन कर्ता दयालु प्रभु हो, मैं आपके दासों का भी दास हूँ।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 24, राग सीरी महला 1)

तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहा आस ऐहो आधार।
नानक नीच कहै बिचार, धाणक रूप रहा करतार।।

उपरोक्त अमृतवाणी में प्रमाण किया है कि जो काशी में धाणक (जुलाहा) है यही (करतार) कुल का सृजनहार है। अति आधीन होकर श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि मैं सत् कह रहा हूँ कि यह धाणक अर्थात् कबीर जुलाहा ही पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) है।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों के सांकेतिक ज्ञान से प्रमाणित हुआ सृष्टि रचना कैसे हुई? अब पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति करनी चाहिए।

''राधा स्वामी व धन-धन सतगुरु सच्चा सौदा पन्थों के सन्तों तथा अन्य संतों द्वारा सृष्टि रचना की दन्त कथा''

अन्य संतों द्वारा जो सृष्टि रचना का ज्ञान बताया है वह कैसा है? कृप्या निम्न पढ़ें :-

पवित्र पुस्तक जीवन चरित्र परम संत बाबा जयमल सिंह जी महाराज'' पृष्ठ नं. 102-103 से ''सृष्टि की रचना'' (सावन कृपाल पब्लिकेशन, दिल्ली)

''पहले सतपुरुष निराकार था, फिर इजहार (आकार) में आया तो ऊपर के तीन निर्मल मण्डल (सतलोक – अलखलोक – अगमलोक) बन गया तथा प्रकाश तथा मण्डलों का नाद (धुनि) बन गया।''

पवित्र पुस्तक सारवचन (नसर) प्रकाश राधास्वामी सत्संग सभा, दयालबाग आगरा, ''सृष्टि की रचना'' पृष्ठ 81,

''प्रथम धूंधूकार था। उसमें पुरुष सुन्न समाध में थे। जब कुछ रचना नहीं हुई थी। फिर जब मौज हुई तब शब्द प्रकट हुआ और उससे सब रचना हुई, पहले सतलोक और फिर सतपुरुष की कला से तीन लोक और सब विस्तार हुआ।''

यह ज्ञान तो ऐसा है। एक समय कोई बच्चा नौकरी लगने के लिए साक्षात्कार (इन्टरव्यू) के लिए गया। अधिकारी ने पूछा कि आप ने महाभारत पढ़ा है। लड़के ने उत्तर दिया कि उंगलियों पर रट रखा है। अधिकारी ने प्रश्न किया कि पाँचों पाण्डवों के नाम बताओ। लड़के ने उत्तर दिया कि एक भीम था, एक उसका बड़ा भाई था, एक उससे छोटा था, एक और था तथा एक का नाम मैं भूल गया। उपरोक्त सृष्टि रचना का ज्ञान तो ऐसा है। यथार्थ जानकारी के लिए कृप्या पढ़ें पूर्वोक्त सृष्टि रचना।

सतपुरुष व सतलोक की महिमा बताने वाले व पाँच नाम (औंकार - ज्योति निरंजन - ररंकार - सोहं - सत्यनाम) देने वाले व तीन नाम (अकाल मूर्ति - सतपुरुष - शब्द स्वरूपी राम) देने वाले संतों द्वारा रची पुस्तकों से कुछ निष्कर्ष।

संतमत प्रकाश भाग 3 पृष्ठ 76 पर लिखा है कि ''सच्चखण्ड या सतनाम चौथा लोक है'', यहाँ पर 'सतनाम' को स्थान कहा है। फिर इस सन्तमत प्रकाश पुस्तक के पृष्ठ नं. 79 पर लिखा है कि ''एक राम दशरथ का बेटा, दूसरा राम 'मन', तीसरा राम 'ब्रह्म', चौथा राम 'सतनाम', यह असली राम है।'' फिर पुस्तक संतमत प्रकाश पहला भाग पृष्ठ नं. 17 पर लिखा है कि ''वह

सतलोक है, उसी को सतनाम कहा जाता है।'' पवित्र पुस्तक 'सार वचन नसर यानि वार्तिक' पृष्ठ नं. 3 पर लिखा है कि ''अब समझना चाहिए कि राधा स्वामी पद सबसे उच्चा मुकाम है कि जिसको संतों ने सतलोक और सच्चखण्ड और सार शब्द और सत शब्द और सतनाम और सतपुरुष करके ब्यान किया है।'' पुस्तक सार वचन (नसर) आगरा से प्रकाशित पृष्ठ नं. 4 पर भी उपरोक्त ज्यों का त्यों वर्णन है। पुस्तक 'सच्चखण्ड की सड़क' पृष्ठ नं. 226 ''संतों का देश सच्चखण्ड या सतलोक है, उसी को सतनाम- सतशब्द-सारशब्द कहा जाता है।''

विशेष :- उपरोक्त व्याख्या ऐसी लगी जैसे किसी ने जीवन में न तो शहर देखा, न कार देखी और न पैट्रोल देखा है, न ड्राईवर का ज्ञान हो कि ड्राईवर किसे कहते हैं और वह व्यक्ति अन्य साथियों से कहे कि मैं शहर में जाता हूँ, कार में बैठ कर आनंद मनाता हूँ। फिर साथियों ने पूछा कि कार कैसी है, पैट्रोल कैसा है और ड्राईवर कैसा है, शहर कैसा है? उस गुरु जी ने उत्तर दिया कि शहर कहो चाहे कार एक ही बात है, शहर भी कार ही है, पैट्रोल भी कार को ही कहते हैं, ड्राईवर भी कार को ही कहते हैं, सड़क भी कार को ही कहते हैं।

आओ विचार करें - सतपुरुष तो पूर्ण परमात्मा है, सतनाम वह दो मंत्र का नाम है जिसमें एक ओ३म् तथा तत् सांकेतिक है तथा इसके बाद सारनाम साधक को पूर्ण गुरु द्वारा दिया जाता है। ये सतनाम तथा सारनाम दोनों स्मरण करने के नाम हैं। सतलोक वह स्थान है जहां सतपुरुष रहता है। पुण्यात्माओं से प्रार्थना है कि सत्य का ग्रहण करें असत्य का परित्याग करें।

❑❑❑